डॉ. हेमलता सिंह

# ऋग्वेद के अग्नि-सूक्तों की उपमाओं का अध्ययन

A
PK3018
.S56

# ऋग्वेद के अग्नि-सूक्तों की उपमाओं का अध्ययन

भागलपुर विश्वविद्यालय की पी-एच्० डी० की उपाधि के लिए
स्वीकृत शोध-प्रबन्ध

डॉ० हेमलता सिंह

अनुपम प्रकाशन

प्रकाशक
अनुपम प्रकाशन
पटना-८००००४

विश्वविद्यालय अनुदान-आयोग-योजना के अन्तर्गत भागलपुर
विश्वविद्यालय द्वारा प्राप्त आंशिक अर्थ-सहायता से प्रकाशित

© डॉ० हेमलता सिंह, भागलपुर

मूल्य : साठ रुपये

प्रथम संस्करण : १९८१

मुद्रक :
शीला प्रिन्टिंग प्रेस
पटना-८००००४

# भूमिका

ऋग्वेद भारत-यूरोपीय भाषा-कुल का प्राचीनतम साहित्यिक ग्रन्थ है। यह विभिन्न देवों की स्तुतियों का संग्रह है। धार्मिक परम्परा से सम्बद्ध होने के कारण प्राचीन काल में आध्यात्मिक एवं दार्शनिक दृष्टिकोण से ही इसका अध्ययन किया जाता था।

आधुनिक युग में पाश्चात्य विद्वानों का ध्यान ऋग्वेद की ओर आकृष्ट हुआ। उनके अथक परिश्रम के फलस्वरूप एक नवीन विचाराधारा सम्मुख आई और भाषा-शास्त्रीय दृष्टि से भी इसका अध्ययन किया जाने लगा।

ऋग्वेद का काव्यशास्त्रीय दृष्टिकोण से भी अध्ययन होना चाहिये, कारण इसमें बहुत से तत्त्व ऐसे हैं जिन्हें काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों के सुन्दर उदाहरण के रूप में गृहीत किया जा सकता है। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में काव्यशास्त्रीय दृष्टि से ही अग्नि-सूक्तस्थ ऋचाओं में उपमा अलंकार के भेद-प्रभेदों के उदाहरण खोजने का प्रयत्न किया गया है।

इसमें सात अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में उपमा अलंकार के उद्भव एवं क्रमिक विकास पर प्रकाश डाला गया है। द्वितीय अध्याय में अग्नि के महत्त्व एवं विविध रूप की व्याख्या की गई है। तृतीय अध्याय में अग्नि-सूक्तस्थ उपमानों का दैविक, प्राकृतिक, सामाजिक एवं भावात्मक रूप में विभाजन किया गया है तथा चतुर्थ अध्याय में उपलब्ध उपमानों का भेद-प्रभेद की दृष्टि से विवेचन किया गया है। पंचम अध्याय में उपमानों के औचित्यानौचित्य पर प्रकाश डाला गया है। षष्ठ अध्याय में उपमानों का सुन्दर प्रयोग करनेवाले ७२ ऋषियों में से प्रत्येक ऋषि के उपमा-प्रयोग की दक्षता की ओर दृष्टिपात किया गया है। सप्तम अध्याय अन्तिम अध्याय है। इसमें अग्नि-सूक्तस्थ उपमानों की अन्य देवों से सम्बद्ध उपमानों के साथ तुलना की गई है। इस प्रकार प्रस्तुत प्रबन्ध में काव्यशास्त्रीय दृष्टि से ऋग्वेद के एक विशिष्ट पहलू के अध्ययन का प्रयत्न किया गया है।

शोधकार्य में ऋग्वेद संहिता सायण भाष्य, ब्रह्मर्षि म० म० प० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर कृत ऋग्वेद का सुबोध भाष्य और दैवत संहिता नामक ग्रन्थ से सर्वाधिक सहायता ली गई है। उपमा अलंकार के अनेकानेक भेद-प्रभेदों में से आचार्य मम्मट कृत काव्य-प्रकाश के उपमा-भेदों को मान-दण्ड मान कर उसी के आधार पर उपमा-भेदों का विवेचन किया गया है।

हेमलता

# विषय-सूची

पृष्ठ

**प्रथम अध्याय** १-२२

## उपमा अलंकार : उद्भव और विकास

अलंकार-स्वरूप एवं भेद, उपमा अलंकार, व्युत्पत्ति एवं महत्त्व, उद्भव एवं विकास, समीक्षा।

**द्वितीय अध्याय** २३-३९

## अग्नि

अग्नि उपासना की प्राचीनता, अग्नि की उत्पत्ति, व्युत्पत्ति, स्वरूप अर्थ एवं महत्त्व, अग्नि के विविध रूप—यज्ञाग्नि, प्रथम मानव अग्नि, वैश्वानर अग्नि, प्रथम प्रवर्त्तक अग्नि, वृद्ध नागरिक अग्नि, प्रथम मननकर्त्ता अग्नि, दूत अग्नि, हस्त-पाद-हीन गुह्य अग्नि, मर्त्यों में अमृत अग्नि, इन्द्रिय शक्तियाँ आत्मा की दस बहनें हैं, देवों द्वारा प्रदीप्य अग्नि, सात संख्या का महत्त्व, अनेक अग्नियों के साथ एक अग्नि, अग्नि के साथी अनेक देव, परम आत्माग्नि, उपसंहार।

**तृतीय अध्याय** ४०-१०१

## उपमान—दैविक, प्राकृतिक सामाजिक एवं भावात्मक

दैविक उपमान, प्राकृतिक उपमान – जड़जगत्—द्युस्थानीय उपमान, पृथ्वी स्थानीय उपमान, खनिजपदार्थ, जीव जगत्-पशु से सम्बद्ध उपमान, पशु अंगवाची उपमान, पक्षीवाचक उपमान, जन्तुवाचक उपमान, सामाजिक उपकरण—नगर आदि से सम्बद्ध उपमान, वाहन से सम्बद्ध उपमान, शस्त्रवाचक उपमान, पात्रवाचक उपमान, अलंकारवाचक उपमान, भोज्य पदार्थ से सम्बद्ध उपमान। सामाजिक उपमान—ऋषि आदि से सम्बद्ध उपमान, राजवर्ग से सम्बद्ध उपमान, परिवार से सम्बद्ध उपमान, सामाजिक स्तर के द्योतक उपमान, पेशे से सम्बद्ध उपमान, अवयववाची उपमान। भावात्मक उपमान।

चतुर्थ अध्याय १०२-२०२

## उपमा अलंकार के विभिन्न भेद

पूर्णोपमा—वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा, समासगा श्रौती पूर्णोपमा, तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा।

लुप्तोपमा—धर्मलुप्तोपमा, धर्मलुप्ता वाक्यगा श्रौती लुप्तोपमा, धर्मलुप्ता समासगा श्रौती लुप्तोपमा, उपमान लुप्तोपमा, वाक्यगा श्रौती उपमान लुप्तोपमा, समासगा आर्थी उपमानलुप्तोपमा, वाचकलुप्तोपमा—वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा, समासगा वाचक-लुप्तोपमा, कर्तृकारक से विहित क्यङ् के प्रयोग में वाचक-लुप्तोपमा, वतुप् प्रत्यय के प्रयोग में वाचकलुप्तोपमा, धर्मवाचक-लुप्तोपमा, विवप्गा धर्मवाचकलुप्तोपमा, वाक्यगा धर्मवाचक-लुप्तोपमा, समासगा धर्मवाचकलुप्तोपमा, उपमेयलुप्तोपमा-उपमेय-धर्मलुप्तोपमा, उपमेयवाचक लुप्तोपमा, त्रिलुप्ता उपमेयधर्मवाचक लुप्तोपमा। मालोपमा।

पंचम अध्याय २०३-२०९

## उपमानों के औचित्य का विवेचन

षष्ठ अध्याय २१०-२३७

## विभिन्न ऋषियों द्वारा प्रयुक्त उपमाओं की विशिष्टता

सप्तम अध्याय २३८-२४४

अन्य देवसूक्तों में प्रयुक्त उपमाओं के साथ अग्नि-सूक्तस्थ उपमाओं का तुलनात्मक अध्ययन।

उपसंहार २४५-२४६

प्रथम अध्याय

# उपमा अलंकार : उद्‌भव और विकास

**अलंकार : स्वरूप एवं भेद :**

'अलंकार' शब्द अलम् उपसर्गपूर्वक कृञ् धातु से करणार्थक घञ् प्रत्यय करके निष्पन्न हुआ है और 'सौन्दर्य के कारण' अथवा 'सौन्दर्य के साधन' अर्थ में प्रयुक्त होता है।

अलंकार के स्वरूप का निर्णय करते हुए आचार्य दण्डी ने इसे काव्य की शोभा बढ़ानेवाला धर्म कहा है :

**काव्य शोभाकरान् धर्मानलंकारान् प्रचक्षते ।।**

(काव्यादर्श २।१)

वस्तुतः अलंकार का धातुगत अर्थ भी यही होता है। आचार्य वामन ने काव्य के शोभाकारक धर्म को गुण एवं गुणों का उत्कर्ष करनेवाले तत्त्वों को अलंकार कहा है :

**काव्य शोभायाः कर्त्तारो धर्माः गुणाः ।**
**तदतिशयहेतवस्त्वलंकाराः ।।**

(काव्य० सू० ३।१।२)

आचार्य मम्मट के अनुसार 'अलंकार' काव्य के मुख्य अर्थ रस का यदा-कदा उपकार करनेवाले तत्त्व हैं। काव्य-शरीर में इनकी स्थिति हारादि अलंकारों के समान है। ये काव्य में रह भी सकते हैं और नहीं भी रह सकते हैं। गुणों के समान इनकी स्थिति नियत नहीं है। गुण काव्य में नियत रूप से रहकर रस का उपकार करते हैं जब कि अलंकार काव्य में विद्यमान रहनेवाले रस का उपकार करते हैं और कभी-कभी नहीं भी करते हैं (सन्तमपि नोपकुर्वन्ति)। इसीलिए अलंकार को अस्थिर धर्म कहा है, जो स्थिर तथा नियत धर्म से सर्वथा भिन्न होता है।

अलंकार के ३ भेद हैं—१. शब्दालंकार, २. अर्थालंकार और ३. उभयालंकार। शब्दालंकार में शब्द प्रधान रहता है अर्थात् जिन शब्दों के द्वारा चमत्कार उत्पन्न होता है उनको हटाकर यदि पर्यायवाची शब्दों को रख दिया जाय तो वहाँ चमत्कार नष्ट हो जाता है। शब्द की प्रधानता के कारण ही यह शब्दालंकार कहलाता है।

अर्थालंकार में शब्द-परिवर्त्तन की क्षमता होती है। इसका चमत्कार अर्थ में निहित रहता है अर्थात् शब्द में परिवर्त्तन करने पर भी अलंकार की सत्ता विद्यमान रहती है।

उभयालंकार में पूर्वोक्त दोनों विशेषताएँ मिलती हैं। अर्थात् पद्य के कुछ शब्द पर्याय के रूप में परिवर्त्तित किये जा सकते हैं (अर्थालंकार) और कुछ अपरिवर्त्तनशील होते हैं (शब्दालंकार)। अपनी इसी विशेषता के कारण यह उभयालंकार कहलाता है।

शब्दालंकारों की संख्या १० है, जिनमें चार ही अधिक प्रसिद्ध हैं—अनुप्रास, यमक, श्लेष और वक्रोक्ति।

अर्थालंकारों के लगभग १०० भेद हैं।

उभयालंकार दो प्रकार का होता है—संकर और संसृष्टि।

अर्थालंकारों का विभाजन निम्नांकित प्रकार से किया जा सकता है—सादृश्यगर्भ, विरोध-गर्भ, शृंखला-बन्ध, तर्कन्यायमूल, लोकन्यायमूल, वाक्यन्यायमूल तथा गूढार्थ-प्रतीतिमूल।

सादृश्यगर्भ अलंकार सादृश्य या समानता की कल्पना पर प्रतिष्ठित रहते हैं। किसी अज्ञात वस्तु को समझने या समझाने का सबसे सुन्दर साधन सादृश्य है। सादृश्य द्वारा हम किसी अनजान विषय का ज्ञान किसी भी व्यक्ति को करा सकते हैं। इस वर्ग के अलंकारों में प्रमुख उपमा अलंकार है।

उपमा अलंकार : व्युत्पत्ति एवं महत्त्व :

उपमा का शाब्दिक अर्थ सादृश्य या समानता है। यह उप और मा—इन दो शब्दों के योग से बना है, जिनका अर्थ (उप) समीप, (मा) मान या माप है। 'उप सामीप्यात् मानं इत्युपमा'। अथवा 'उप समीपे सीयते परिच्छिद्यते (उपमानेन कर्त्ता उपमेयं कर्म) अनयेत्युपमा।' अर्थात् समीपता के कारण किया गया मान उपमा है।

यह सादृश्यमूलक अलंकार है। इसमें सादृश्य के कारण जो सौन्दर्यानुभूति होती है, उसी की प्रधानता होती है। अतः सादृश्य उपमा का प्राण है।

दो पदार्थों में समानता दिखलाना ही उपमा है, किन्तु समानता में चमत्कार उत्पन्न करने की क्षमता होनी चाहिए। जिस सादृश्य के कारण सहृदयों का चित्त आनन्दित हो उठे, वही उपमा होती है, अन्यथा उसके अभाव में इसका अस्तित्व संभव नहीं है।

उपमा का चमत्कार केवल काव्यशास्त्र या साहित्य में ही नहीं देखा जाता, अपितु लोक में भी इसका महत्त्व स्वीकार किया जाता है। व्यावहारिक दृष्टि से भी इसकी महत्ता असंदिग्ध है। यह मन की अति सरल प्रक्रिया है। सहजता एवं सरलता के कारण ही सभी सादृश्यमूलक अलंकारों में यह सर्वाधिक लोकप्रिय है। सरलता के कारण ही इसे व्यापक क्षेत्र प्राप्त हुआ है। कवि भाव को उद्दीप्त करने के लिए

दो पदार्थों में समानता स्थापित करता है तथा उपमा के द्वारा असादृश्य में भी सादृश्य ला देता है। उपमा की इसी सहज एवं व्यापक प्रक्रिया के कारण आलंकारिकों ने उपमा को अर्थालंकारों में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्रदान किया है। वस्तुतः उपमा आलंकारिक शैली का हृदय है। कविता के उदय के साथ ही इसका उदय होता है। उस काव्ययुग की कल्पना ही नहीं की जा सकती है, जिसमें उपमा अपने चमत्कार का प्रदर्शन नहीं करती और उपमा के द्वारा सौन्दर्य का विकास नहीं होता। कविता का तो यह प्राण ही है।

## उद्भव एवं विकास

**वेद :**

विकास-क्रम की दृष्टि से भारतीय वाङ्मय के प्राचीनतम ग्रन्थ वेदों में उपमा का शास्त्रीय विवेचन तो नहीं मिलता, किन्तु उसके भव्य एवं रमणीय उदाहरण पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। उदाहरणार्थ कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं :

**अभ्रातेव पुंस एति प्रतीची गर्तारुगिव सनये धनानाम्।**
**जायेव पत्य उशती सुवासा उषा हस्रेव निरिणीते अप्सः॥**

(ऋ० १।१२४।७)

भ्रातृविहीन स्त्री जैसे पीछे हटकर (वापस) अपने पितादि के पास जाती है, धन-प्राप्ति के लिए कोई स्त्री जैसे न्यायालय में जाती है, पति की कामना करनेवाली स्त्री उत्तम वस्त्र धारण कर जैसे पति के पास जाती है, उसी प्रकार यह उषा हँसती हुई स्त्री के समान अपनी सुन्दरता को प्रकट करती है।

उषा से सम्बद्ध इस ऋचा में एक साथ ही चार उपमाओं का प्रयोग हुआ है।

**परा हि मे विमन्यवः पतन्ति वस्य इष्टये।**
**वयो न वसतीरुप॥**

(ऋ० १।२५।४)

जिस तरह पक्षी अपने घोंसलों की ओर जाते हैं, उसी प्रकार मेरी विशेष उत्साहित बुद्धियाँ धन-प्राप्ति के लिए दूर-दूर दौड़ रही हैं।

यहाँ बुद्धि की उपमा पक्षी से दी गई है।

**सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।**
**हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥**

(यजुर्वेद ३४।६)

जिस प्रकार सारथि वेगवान् घोड़ों को बागडोर के द्वारा जहाँ-तहाँ ले जाता है, उसी प्रकार जो मन मनुष्यों को जहाँ-तहाँ ले जाता है, जो हृदय में स्थित है, सबका चालक है और अत्यन्त वेगवान् है, वह मेरा मन मंगल-विचारयुक्त हो।

**ओ३म् भूर्भुवः स्वद्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा।**
**तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥**

(यजुर्वेद ३।५)

परमेश्वर सबका आधार, सबमें व्यापक, सुख-स्वरूप है। वह संसार के लिए बहुत्व के कारण अर्थात् सब लोकों को धारण करने से आकाश के समान और अपने फैलाव से पृथ्वी के समान है। हे पृथिवि! जो तू देवताओं का यज्ञस्थान है, उस तेरी पीठ पर हव्य-ग्रहीता भौतिक अग्नि को भोज्य अन्न की प्राप्ति के लिए मैं स्थापित करता हूँ।

यहाँ परब्रह्म की उपमा आकाश और पृथ्वी से दी गई है।

इस प्रकार के उदाहरण पर्याप्त रूप में चारों वेदों में उपलब्ध होते हैं।

ऋग्वेद में उपमा अलंकार के अतिरिक्त उपमा-वाचक शब्द भी मिलते हैं; जैसे—

| | |
|---|---|
| **सोपमा दिवः ॥** | (ऋ० १।३१।१०) |
| **ईयुषीणामुपमा शश्वतीनाम् ॥** | (ऋ० १।११३।१५) |
| **यद्विष्णोरुपमं निधायि ॥** | (ऋ० ५।३।३) |
| **इन्द्रोपमातयः पूर्वीरुत ॥** | (ऋ० ८।४०।९) |

किन्तु उपमा के इन उदाहरणों को देखकर हम वेदों में अलंकार के सिद्धान्त-निरूपण की कल्पना नहीं कर सकते। वस्तुतः अलंकार ही नहीं, साहित्यशास्त्र के अन्य अंगों के भी व्यावहारिक प्रयोग वेदों में दृष्टिगत होते हैं, किन्तु उनके शास्त्रीय विवेचन का रूप वहाँ नहीं मिलता।

**ब्राह्मण :**

ब्राह्मण-ग्रन्थों में भी स्थल-स्थल पर उपमा अलंकार और उपमा-वाचक शब्दों का प्रयोग हुआ है। उदाहरणार्थ शतपथ ब्राह्मण में उपमा-वाचक शब्द का प्रयोग करते हुए कहा गया है :

**तदप्युपमास्ति ॥** (श० ब्रा० १२।१।१५)

किन्तु यहाँ भी अलंकारों का शास्त्रीय विवेचन नहीं किया गया है।

**उपनिषद् :**

उपनिषदों में उपमा के पर्याप्त उदाहरण उपलब्ध होते हैं। मुण्डकोपनिषद् में उपमा के द्वारा बताया गया है कि जिस प्रकार रथ के पहिये की नाभि से आरे सम्बद्ध रहते हैं, उसी प्रकार हृदय से नाड़ियाँ सम्बद्ध रहती हैं :

**अरा इव रथनाभौ संहता यत्र नाड्यः।** (मुण्ड० २।६)

प्रश्नोपनिषद् में भी प्राण की उपमा आरे से दी गई है :

**अरा इव रथनाभौ प्राणे सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥**
**ऋचो यजूंषि सामानि यज्ञः क्षत्रं ब्रह्म च ॥**

(प्रश्न० ६, पृ० १७)

**ब्रह्मसूत्र-भाष्य :**

ब्रह्मसूत्र-भाष्य में उपमा-वाचक शब्द का प्रयोग निम्नांकित प्रकार मिलता है :

**अतएव चोपमा सूर्यकादिवत् ॥** (ब्र० सू० भा० ३।२।१८)

उपर्युक्त सभी उदाहरणों का व्यावहारिक मूल्य ही अधिक है, सैद्धान्तिक नहीं। यास्क एवं पाणिनि के ग्रन्थों के आधार पर ऐसा कहा जा सकता है कि उपमाओं के प्रयोग के द्वारा वैदिक भाषा एवं स्वर या ध्वनियाँ निश्चित रूप से प्रभावित हुई हैं, किन्तु इससे वैदिक युग में काव्यशास्त्र या अलंकारों के सिद्धान्त-निरूपण की बात नहीं आती।

वेदांग में भी अलंकारों का विवेचन किया गया है, किन्तु वहाँ भी इसका स्वरूप स्वतंत्र अलंकारशास्त्र के रूप में नहीं ढाला गया है। निघण्टु एवं निरुक्त में भी उपमाओं का प्रयोग भाषाशास्त्रीय महत्त्व को ही अधिक प्रकट करता है, काव्य-शास्त्रीय विवेचन को नहीं।

**गार्ग्य :**

उपमा का सर्वप्रथम शास्त्रीय विवेचन यास्क के पूर्ववर्ती आचार्य गार्ग्य ने करने का प्रयत्न किया है, किन्तु उनका कोई ग्रन्थ प्राप्त नहीं है। केवल उनकी उपमा की परिभाषा यास्ककृत निरुक्त में मिलती है :

**यदतत्तत्सदृशम् इति गार्ग्यस्तदासां कर्म ॥**

(निरुक्त ३।१४)

जो 'अतत्' अर्थात् उपमान से भिन्न होकर 'तत्सदृशम्' उपमान के समान हो 'तदासां कर्म' वह इन उपमाओं का विषय होता है अर्थात् उपमान से भिन्न होकर भी जो उपमेय का उपमान के साथ सादृश्य है उसे उपमा कहते हैं।

**यास्क** (लगभग ७०० ई० पू०) :

निघण्टु में उपमा के अर्थ में प्रयुक्त होनेवाले लगभग १२ शब्दों का निर्देश है—(१) इदमिव, (२) इदं यथा, (३) अग्निर्नये, (४) चतुरश्चिद्दद मानात्, (५) ब्राह्मणा व्रत चारिणः, (६) वृक्षस्य नु ते पुरुहूत वयाः, (७) जार आ भगम्, (८) मेघो भूतोऽभियन्नयः, (९) तद्रूपः, (१०) तद्वर्णः, (११) तद्वत् तथा (१२) इत्युपमाः।

निरुक्त में उपमा का विवेचन यास्क ने निम्नांकित प्रकार किया है :

अथात उपमाः । यदतत्तत्सदृशम् इति गार्ग्यः तदासां कर्म । ज्यायसा वा गुणेन प्रख्याततमेन वा कनीयांसं वाऽप्रख्यातं वा उपमिमीते । अथापि कनीयसा ज्यायांसम् ।

तनूत्यजेव तस्करा वनर्गू रशनाभिर्दशभिरभ्यधीताम् । (ऋ० १०।४।६)

कुह स्विद् दोषा कुह वस्तोरश्विना कुहाभिपित्वं करतः कुहोषतुः
को वां शयुत्रा विधवेव देवरं मर्यं न योषा कृणुते सधस्थ आ ॥
(ऋ० १०।४०।२)

यथेति कर्मोपमा ।
यथावातो यथा वनं यथा समुद्र एजति ॥ (ऋ० ५।७८।८)
भ्राजन्तो अग्नयो यथा (ऋ० १।५०।३)
आत्मुरश्विबृहमानाद्विभीयावा नि धातोः ।
न दुरुक्ताय स्पृहयेत् ॥ (ऋ० १।४१।६)
आ इत्याकार उपसर्गः पुरस्तादेव व्याख्यातोऽप्या-
प्युपमार्थे दृश्यते ॥
जार आ भगम् ॥ (ऋ० १०।११।६)
मेष इति भूतोपमा ।
मेषो भूतोऽभियन्नयः ॥ (ऋ० ८।२।४०)
अग्निरिति रूपोपमा ।
हिरण्यरूपः स हिरण्यसन्दृगपांनपात्सेदु हिरण्यवर्णः ॥
(ऋ० २।३५।१०)
था इति च ।
तं प्रत्नथा पूर्वथा विश्वथेमथा ॥ (ऋ० ५।४४।१)
वदिति सिद्धोपमा ।
प्रियमेधवदत्रिवज्जातवेदो विरूपवत् ।
अंगिरस्वन्महिव्रत प्रस्कण्वस्य श्रुधी हवम् ॥
(ऋ० १।४५।३)

अथ लुप्तोपमान्यर्थोपमानीत्याचक्षेत सिंहो व्याघ्र इति पूजायां
श्वा काक इति कुत्सायाम् ॥

(निरुक्त ३।१३-१४)

इस प्रकार निरुक्त के तृतीय अध्याय के तीसरे पाद के बीच से उपमा का विवेचन प्रारम्भ करके चौथे पाद में ४-५ पंक्तियों तक विस्तृत वर्णन कर समाप्त कर दिया है। उन्होंने गार्ग्यकृत उपमा-लक्षण को ही स्वीकार किया है। उपमा में उपमान

उपमेय की अपेक्षा प्रायः अधिक गुणवाला या अधिक प्रसिद्ध होता है। उपमेय की अपेक्षा यदि हीन या अप्रसिद्ध उपमान का प्रयोग किया जाय तो लौकिक अलंकारों में उसे हीनत्व-दोष माना जाता है, किन्तु यास्क ने उपमा के ये दोनों ही प्रकार दिखलाये हैं अर्थात् वेद में हीनोपमा और अधिकोपमा—दोनों प्रकार की उपमाओं के उदाहरण मिलते हैं।

निघण्टु में १२ उपमा-प्रतिपादक पदों का नहीं, अपितु वाक्यांशों का संग्रह किया गया है, जिनमें से प्रथम उपमावाचक वाक्यांश के विवेचन के पश्चात् निरुक्तकार ने 'अथ निपाताः पुरस्तादेव व्याख्याताः' यह एक पंक्ति और जोड़ दी है। इसका अभिप्राय यह है कि प्रथम अध्याय के द्वितीय पाद में निपातों के वर्णन में भी वे (१) इव, (२) न, (३) चित्, (४) नु—इन चार उपमावाचक पदों की व्याख्या कर चुके हैं। उपमा-निरूपण के इस प्रसंग में भी उनका स्मरण दिलाने के लिए बीच में 'अथ निपाताः' इत्यादि लिखे गये हैं।

यास्क ने आर्थी उपमा के प्रयोजक तुल्यादिपदों का परिगणन नहीं किया है, अतः सभी पद या वाक्यांश यहाँ श्रौती उपमा के ही वाचक हैं, आर्थी उपमा के नहीं। 'इदमिव तथा 'इदं यथा'—इन दोनों में सूक्ष्म भेद दिखाया गया है। 'इदं यथा' वाले भेद की व्याख्या करते हुए उन्होंने 'यथेति कर्मोपमा' लिखा है। इसका अभिप्राय यह है कि 'यथा' इस पद से कर्म अर्थात् क्रियाओं की उपमा दी जाती है। इव को द्रव्य का सादृश्यबोधक होने से उन्होंने द्रव्योपमा माना है। 'मेषो भूतोऽभियन्नयः'—इस उपमावाचक पद को यास्क ने 'मेष इति भूतोपमा' कहा है। इसी प्रकार 'तद्रूपः' को रूपोपमा और 'तद्वर्णः' को वर्णोपमा माना है। वति प्रत्यय द्वारा 'वदिति सिद्धोपमा' लिखकर क्रिया से भिन्न सिद्ध पदार्थों की उपमा का प्रतिपादन किया है।

उपमा में उपमान, उपमेय, साधारण-धर्म और वाचक शब्द—इन चार तत्त्वों का होना आवश्यक होता है। जहाँ इन चारों की उपस्थिति रहती है उसको पूर्णोपमा कहते हैं। कहीं-कहीं उपमा में इन चारों में से किसी एक, दो या तीन का लोप भी हो जाता है। उस अवस्था में वह लुप्तोपमा कहलाती है। सामान्य रूप से वाचक-लुप्ता, धर्मलुप्ता, उपमानलुप्ता आदि लुप्तोपमा के भेद होते हैं। उपमा-प्रसंग में निरुक्तकार ने जो लुप्तोपमा का वर्णन किया है, वह इस प्रकार का विस्तृत वर्णन न होकर केवल संकेत-मात्र है। इस विषय का प्रतिपादन करते हुए उन्होंने प्रशंसापरक और निन्दापरक दो प्रकार की लुप्तोपमा मानी है।

यास्क का उपमा-विवेचन शाब्दिक अर्थों पर ही अधिक अवलम्बित है। शास्त्रीय विवेचन अर्थात् काव्यशास्त्रीय सिद्धान्त की मीमांसा की दृष्टि से उसका

महत्त्व गौण है, तथापि निरुक्तकार का उपमा-विवेचन इस तथ्य का द्योतक है कि इनके पूर्व ही अलंकारों के शास्त्रीय विवेचन का श्रीगणेश हो चुका था। यास्क के पहले ही गार्ग्य आदि आचार्यों ने उपमा का विवेचन किया था तथा उपमा की व्याख्या भी वेद-मन्त्रों के अर्थों में प्रारम्भ हो गई थी।

**पाणिनि** (लगभग ४०० ई० पू०) :

पाणिनि की अष्टाध्यायी में निरुक्त से भी अधिक स्पष्ट रूप में उपमा का निरूपण किया गया है। उन्होंने उपमा, उपमान, उपमित तथा सामान्य आदि अलंकार-शास्त्र के पारिभाषिक शब्दों का भी उल्लेख किया है। अष्टाध्यायी में उपमा के चारों अंगों का उल्लेख निम्नांकित प्रकार है :

**उपमानादाचारे ॥** (अष्टाध्यायी ३।१।१०)

**तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यां तृतीयाऽन्यतरस्याम् ॥** (अ० २।३।७२)

**उपमानानि सामान्यवचनैः ॥** (अ० २।१।५५)

**उपमितं व्याघ्रादिभिः सामान्याप्रयोगे ॥** (अ० २।१।५६)

उपमा के आर्थी एवं श्रौती भेद जो आगे चलकर अलंकारशास्त्रियों द्वारा गृहीत हुए हैं, उनका भी सर्वप्रथम विवेचन पाणिनि ने ही निम्न प्रकार किया है :

**तत्र तस्येव ॥** (अ० १।५।११६)

तथा **तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः ॥** (अ० ५।१।११५)

व्याकरण की दृष्टि से कृत्, तद्धित, समासान्त-प्रत्यय, समास-विधान तथा स्वर आदि का विचार भी उन्होंने सादृश्य के कारण उपस्थित किया है। सादृश्य के कारण इनपर पड़नेवाले प्रभाव की चर्चा भी अष्टाध्यायी में की गई है। इसी प्रकार का प्रभाव अतिदेश के विचार से भी दिखाई पड़ता है, जिसका विवेचन पाणिनि के व्याख्याताओं ने किया है।

कात्यायन भी पाणिनि के ही मत को अपने वार्त्तिक में स्वीकार करते हैं। शान्तनव नामक आचार्य ने भी अपने फिट्-सूत्रों में सादृश्य के कारण स्वर-विधान पर पड़नेवाले प्रभाव का वर्णन किया है।

**पतञ्जलि** (ल० १५० ई० पू०) :

पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य में पाणिनि के 'उपमान' शब्द की व्याख्या और उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहा है :

**मानं हि नाम अनिर्ज्ञातार्थमुपादीयते**
**अनिर्ज्ञातमर्थं ज्ञास्यामीति ।**
**तत्समीपे यत् नात्यन्ताय मिमीते**

**तद् उपमानं गौरिव गवय इति ॥** (पातञ्जल म० भा० २।१।५५)

उन्होंने उपमान के 'मान' शब्द की व्याख्या करते हुए बताया है कि मान उसे कहते हैं, जो अज्ञात वस्तु का निर्धारण करे। उन्होंने उपमान को मान या माप के अर्थ में प्रयुक्त किया है।

उपमान मान के ही समान होता है। उसके द्वारा वस्तु का सामान्य रूप से निर्देश होता है, जैसे—'गौरिवः गवयः'। इस उदाहरण में चमत्कार का अभाव है, फिर भी इसमें उपमा का रूप प्रदर्शित करते हुए कहा गया है कि 'गाय के सदृश गवय या नीलगाय होती है।' शास्त्रीय विचार की दृष्टि से पतञ्जलि के इस सोदाहरण विवेचन का निश्चित रूप से बहुत अधिक ऐतिहासिक मूल्य है।

उपर्युक्त सभी विवेचन उपमा की प्रारम्भिक स्थिति के द्योतक हैं। इन विवेचनों में शास्त्रीय विश्लेषण की अपेक्षा भाषा-परक रूप या सादृश्य के कारण भाषा या स्वर पर पड़नेवाले प्रभावों का संकेत ही अधिक है।

**भरत मुनि** (ल० ३०० ई०) :

भरत मुनि भारतीय काव्यशास्त्र के आदि आचार्य माने जाते हैं। उनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'नाट्यशास्त्र' है, जो भारतीय कलाशास्त्र का विश्वकोश माना जाता है। इसमें ३६ अध्याय और ५००० श्लोक हैं। नाट्यशास्त्र के १६वें अध्याय में अलंकारों का वर्णन है। भरत मुनि ने चार अलंकार स्वीकृत किये हैं—उपमा, दीपक, रूपक एवं यमक। उपमा का विवेचन उन्होंने निम्नांकित प्रकार किया है :

यत्किंचित् काव्यबन्धेषु सादृश्येनोपमीयते।
उपमा नाम सा ज्ञेया गुणाकृतिसमाश्रया॥
प्रशंसा चैव निन्दा च कल्पिता सदृशी तथा।
किंचिच्च सदृशी ज्ञेया ह्युपमा पञ्चधा पुनः॥
एकस्यैकेन सा कार्या ह्यनेकेनाथवा पुनः।
अनेकस्य तथैकेन बहूनां बहुभिस्तथा॥
(नाट्य० १६।४१-४२, ४६)

यदि गुण या आकृति की समानता के कारण काव्यबन्धों में सादृश्य के द्वारा तुलना की जाय तो वहाँ उपमा होती है।

इन्होंने उपमा के प्रशंसा, निन्दा, कल्पिता, सदृशी तथा किंचित्सदृशी—इन पाँच भेदों का उल्लेख किया है तथा यह भी कहा है कि शेष भेदों को विद्वान् लक्षण एवं उदाहरण से जान लें। इनके अनुसार उपमा चार प्रकार से संभव है—एक की एक के साथ, एक की अनेक के साथ, अनेक की एक के साथ एवं अनेक की अनेक के साथ।

भरत मुनि के समय तक अलंकारों को अधिक महत्त्व नहीं दिया गया था तथा इसका शास्त्रीय स्वरूप भी निर्धारित नहीं हो सका था। यही कारण है कि नाट्यशास्त्र में केवल चार ही अलंकारों का निरूपण किया गया है तथा उपमा का विवेचन भी संक्षिप्त ही है। अलंकार-शास्त्र का वास्तविक विवेचन भरत में भी उपलब्ध नहीं होता, कारण नाट्यशास्त्र में अलंकारों का शास्त्रीय मूल्यांकन अत्यल्प है।

**मेधावि रुद्र (ल० ५०० ई०) :**

भरतमुनि के पश्चात् आचार्य मेधावि रुद्र का नाम उल्लेखनीय माना जाता है। आचार्य भामह एवं नमिसाधु ने अपने ग्रन्थों में इनके नाम का उल्लेख किया है तथा दोनों ने ही उनकी चर्चा उपमा के सात दोष बतलाने के प्रसंग में की है। इनकी अपनी कोई रचना अबतक प्राप्त नहीं हुई है। मेधावि रुद्र द्वारा बताये गये उपमा-दोष निम्नलिखित हैं :

(१) लिंगभेद, (२) वचनभेद, (३) हीनता, (४) आधिक्य, (५) असंभव, (६) विपर्यय और (७) असादृश्य।

इनमें से ५ दोष भामह के काव्यालंकार के द्वितीय परिच्छेद में मिलते हैं और शेष दो दोषों का नमिसाधु ने मेधाविन् के नाम से उल्लेख किया है।

**विष्णुधर्मोत्तर पुराण (ल० ५०० ई०) :**

विष्णुधर्मोत्तर पुराण के १४ वें परिच्छेद में कुल १८ अलंकारों का वर्णन किया गया है, जिनमें सबसे अन्त में उपमा का वर्णन इस प्रकार है :

वस्तुनस्तूपमानेन दर्शनं सन्निदर्शनम् ।
विना तया स्यादुपमा तु यत्र तेनैव तस्यैव भवेन्नृवर ।

(वि० ध० पु० १४।१५)

इस पुराण में मात्र उपमा की परिभाषा दी गई है, उसके भेद-प्रभेद का वर्णन नहीं किया गया है।

**दण्डी (ल० ६००—७५० ई०) :**

अलंकारों का वास्तविक काव्यशास्त्रीय विवेचन दण्डी के 'काव्यादर्श' से ही प्रारम्भ होता है, जो पण्डितराज जगन्नाथ तक आते-आते चरम सीमा को पहुँच गया। अलंकारवादी आचार्यों में दण्डी का स्थान सर्वोत्कृष्ट है। इन्होंने काव्यशास्त्र-विषयक प्रसिद्ध ग्रन्थ 'काव्यादर्श' की रचना की है। इसमें ३ परिच्छेद और ६६० छन्द हैं। काव्यादर्श के द्वितीय परिच्छेद में दण्डी ने उपमा के ३२ भेदों का उल्लेख किया है, जो अवैज्ञानिक है। उनके अनुसार—

यथा कथंचित् सादृश्यं यत्रोद्भूतं प्रतीयते ।
उपमा नाम सा तस्याः प्रपञ्चोऽयं प्रदर्श्यते ।।

(काव्यादर्श २।१४)

जहाँ पर जिस किसी प्रकार से गुण एवं क्रियादि के द्वारा सादृश्य की प्रतीति हो, वहाँ उपमा अलंकार होता है। उन्होंने उपमा के धर्मोपमा, वस्तूपमा, विपर्यासोपमा, अन्योन्योपमा, नियमोपमा, अनियमोपमा, समुच्चयोपमा, अतिशयोपमा, उत्प्रेक्षितोपमा, अद्भुतोपमा, मोहोपमा, संशयोपमा, निर्णयोपमा, श्लेषोपमा, समानोपमा, निन्दोपमा आदि ३२ भेद किये हैं तथा अन्त में उपमा-दोष एवं इव, वत् आदि उपमावाचक पदों का भी वर्णन किया है।

**भामह** (ल० ६००—६५० ई०) :

दण्डी के पश्चात् भामह ने अपने काव्यालंकार में व्यापक रूप से अलंकारों का विवेचन किया है। काव्यालंकार में ६ परिच्छेद हैं। इसके द्वितीय एवं तृतीय परिच्छेद में अलंकारों का वर्णन है। द्वितीय परिच्छेद में उपमा के साथ ही इन्होंने मेधावि रुद्र का उल्लेख करते हुए उपमा के सात दोषों का भी विवेचन कर उपमा को दोषमुक्त रखने का आग्रह किया है। भामह ने व्याकरण के आधार पर उपमा का वर्गीकरण किया है, जिसे बाद में उद्भट एवं मम्मट ने भी स्वीकार किया। उपमा तथा समस्त सादृश्यमूलक अलंकारों के मूल में वर्त्तमान असंगति का बड़ी स्पष्टता से निवारण करते हुए उन्होंने लिखा है कि जब एक वस्तु की तुलना दूसरी वस्तु से की जाती है तो उनमें सर्वतोभावेन सादृश्य होना चाहिए, तभी वह तुलना उचित होगी, पर किसी भी तुलना में ऐसा नहीं होता, फिर भी उपमा दी जाती है। इस विषय में उनका कथन है कि गुण-लेशमात्र से भी साम्य दिखाई देने पर उपमा हो सकती है; क्योंकि—

सर्वं सर्वेण सारूप्यं नास्ति भावस्य कस्यचित् ।
यथोपपत्ति कृतिभिरुपमासु प्रयुज्यते ।।

(का० २।४३)

उपमा की विवेचना करते हुए उन्होंने कहा है :

विरुद्धेनोपमानेन देशकालक्रियादिभिः ।
उपमेयस्य यत्साम्यं गुणलेशेन सोपमा ।।
यथेवशब्दौ सादृश्यमाहतुर्व्यतिरेकिणोः ।
दूर्वाकाण्डमिव श्यामं तन्वी श्यामा लता यथा ।।
विना यथेव शब्दाभ्यां समासादिहिता परा ।
यथा कमलपत्राक्षी शशांकवदनेति च ।।

वतिनापि क्रियासाम्यं तद्वदेवाभिधीयते ।
द्विजातिवदधीतेऽसौ गुरुवच्चानुशास्ति नः ॥

(का० २।३०—३३)

भामह ने देश, काल और क्रिया आदि के साथ विरुद्ध (भिन्न) उपमान से गुणलेश के कारण उपमेय की समता को उपमा कहा है तथा श्रौती, आर्थी आदि उपमा के कई भेद-प्रभेद किये हैं। इन्होंने प्राचीनतर आचार्यों द्वारा वर्णित निन्दा, प्रशंसा, आचिख्यासा आदि उपमा-भेदों का खण्डन किया है। उनका कहना है कि उपमा के सामान्य गुणों का जो निरूपण हुआ है उसी में ये गतार्थ हो जाते हैं। अतः मालोपमा आदि भेदों का उल्लेख व्यर्थ का विस्तार होगा। भेद की उपयोगिता तो तब है जब उसमें कोई वैशिष्ट्य हो, वैशिष्ट्य के अभाव में भेदीकरण निष्प्रयोजन है।

**उद्भट (ल० ७५०—८०० ई०) :**

अलंकार-विवेचन के क्षेत्र में उद्भट का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन्होंने मात्र पूर्ववर्ती आलंकारिकों का अनुकरण ही नहीं किया, अपितु अलंकार-विवेचन के क्षेत्र में नवीन पद्धति को भी अपनाया। इनके काव्यालंकार सार-संग्रह में ६ वर्ग और ७९ कारिकाएँ हैं। प्रथम वर्ग में उपमा का विवेचन इस प्रकार है :

यच्चेतोहारि साधर्म्यमुपमानोपमेययोः ।
मिथो विभिन्नकालादिशब्दयोरुपमा तु तत् ॥
यथेवशब्दयोगेन सा श्रुत्यान्वयमर्हति ।
सदृशादिपदा श्लेषादनन्यर्थत्वुदिता द्विधा ॥
संक्षेपाभिहिताप्येषा साम्यवाचक विच्युतेः ।
साम्योपमेयतद्वाचिवियोगाच्च निबध्यते ॥
उपमानोपमेयोक्तौ साम्यतद्वाचिविच्यवात् ।
क्वचित्समासे तद्वाचि विरहेण क्वचिच्च सा ॥
तथोपमानादाचारे क्यच्प्रत्यय बलोत्थितः ।
क्वचित्सा कर्तुराचारे क्यङा सा च द्विधा क्वचित् ॥
उपमाने कर्मणि वा कर्त्तरि वा यो णमुल्कषादिगतः ।
तद्वाच्या सा वतिना च कर्मसामान्यवचनेन ॥
षष्ठीसप्तम्यन्ताच्च यो वतिर्भिहतस्तदभिधेया ।
कल्पप्रभृतिभिरन्यैश्च तद्धितैः सा निबध्यते कविभिः ॥

(का० सा० सं० १।१५—२१)

उद्भट के अनुसार उपमा अलंकार में उपमेय एवं उपमान के बीच मनोहारी

सादृश्य होता है। इन्होंने उपमा-लक्षण में 'चेतोहारित्व' का प्रयोग कर नये विचार का समावेश किया है, जिससे चमत्कारजनकता उपमा के लिए आवश्यक तत्त्व हो गई है।

उद्भट ने उपमा के दो भेद किये हैं—पूर्णोपमा एवं लुप्तोपमा। पुनः पूर्णोपमा के ५ भेद तथा लुप्तोपमा के १२ भेद—कुल १७ भेदों का उल्लेख किया है। इनका उपमा-विवेचन वैज्ञानिक है, जिसे मम्मट आदि आचार्यों ने उसी रूप में स्वीकार कर लिया है। अलंकारों के वर्गीकरण में इन्होंने स्वतन्त्रता से काम लिया है तथा शब्द-शास्त्रीय दृष्टिकोण को अपनाकर उसका विभाजन किया है।

**वामन** ( ल० ८०० ई० ) :

उद्भट के पश्चात् साहित्यशास्त्र में वामन का नाम उल्लेखनीय है। इनकी 'काव्यालंकार-सूत्रवृत्ति' में ५ अधिकरण और १२ अध्याय हैं। आलंकारिक नामक चतुर्थ अधिकरण के द्वितीय अध्याय में उपमा को अर्थालंकारों का मूल मानते हुए उन्होंने कहा है :

**उपमानेनोपमेयस्य गुणलेशतः साम्यमुपमा।**
**कविभिः कल्पितत्वात् कल्पिता। पूर्वातु लौकिकी॥**

(का० ४।२।१-२)

वामन ने गुण के लेश से उपमान के साथ उपमेय के साम्य को उपमा कहा है। इन्होंने उपमा के कल्पिता, लौकिकी, पदवृत्ति, वाक्यार्थवृत्ति, पूर्णा एवं लुप्ता—ये ६ भेद किये हैं तथा स्तुति, निन्दा और तत्त्वाख्यान को उपमा का प्रयोजन बताया है। इसी प्रसंग में इन्होंने ६ उपमा-दोषों का भी वर्णन किया है।

**रुद्रट** (ल० ८२५—८७५ ई०) :

रुद्रट के काव्यालंकार में १६ अध्याय हैं। इसमें काव्यशास्त्र के सभी अंगों का विस्तृत विवेचन किया गया है। अलंकारों को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान करके इन्होंने ११ अध्यायों में इसका विस्तृत विवेचन किया है। इनका वर्गीकरण वैज्ञानिक है। इनके अनुसार—वास्तव, औपम्य, अतिशय एवं श्लेष ही अलंकारों के चार विभाजक तत्त्व हैं। काव्यालंकार के आठवें अध्याय में सर्वप्रथम औपम्य की परिभाषा के पश्चात् उपमा का विवेचन किया गया है :

**उभयोः समानमेकं गुणादिसिद्धं भवेद्यथैकत्र।**
**अर्थेऽन्यत्र तथा तत्साध्यत इति सोपमा त्रिधा॥**

(का० ८।४)

रुद्रट के अनुसार उपमेय एवं उपमान में समान साधारण धर्म के कारण समता का दिखाई पड़ना ही उपमा है। इस लक्षण में इन्होंने गुणादि सिद्ध समान को महत्त्व

प्रदान किया है। यहाँ गुणादि से अभिप्राय गुण संस्थानादि से है। इन्होंने उपमा के मुख्य तीन भेद माने हैं—वाक्योपमा, समासोपमा एवं प्रत्ययोपमा। वाक्योपमा के ६ भेद तथा अन्य दोनों के एक-एक भेद हैं। उपमा के भेद-प्रभेद का वर्णन करने के पश्चात् ११ वें अध्याय में इन्होंने वैषम्य, असम्भव, अप्रसिद्धि और सामान्य शब्द-भेद—इन चार उपमा-दोषों का भी उल्लेख किया है।

**अग्निपुराण (ल० ९०० ई०) :**

अग्निपुराण के ३४४ वें अध्याय में ८ अर्थालंकारों का वर्णन किया गया है, जिनमें से सादृश्य के अन्तर्गत उपमा का उल्लेख इस प्रकार किया गया है :

**उपमा नाम सा यस्यामुपमानोपमेययोः।**
**सत्ता चान्तरसामान्ययोगित्वेऽपि विवक्षितम्॥**
**किञ्चिदादाय सारूप्यं लोकयात्रा प्रवर्त्तते।**
**समासेनासमासेन सा द्विधा प्रतियोगिनः॥**

(अ० पु० ३४४।६-७)

उपमान एवं उपमेय की समानता में अन्तर होने पर भी यदि उनमें सादृश्य दिखाया जाय तो वहाँ उपमा होती है। इसमें उपमा के १८ भेदों की कल्पना की गई है। सर्वप्रथम (१) समासोपमा और (२) असमासोपमा—ये दो भेद किये गये हैं। जहाँ संश्लिष्ट शब्दों का प्रयोग हो, वहाँ समासोपमा तथा उपमावाचक (सादृश्य) पदों के प्रयोग में असमासोपमा होती है। इनके तीन-तीन भेद होकर कुल १८ भेद किये गये हैं।

**कुन्तक (ल० ९५०—१००० ई०) :**

वक्रोक्ति-सम्प्रदाय के संस्थापक आचार्य कुन्तक ने अपने 'वक्रोक्तिजीवितम्' को चार उन्मेषों में विभाजित किया है। तृतीय उन्मेष में वाक्यवक्रता का विस्तृत विवेचन कर उसमें अलंकारों का अन्तर्भाव किया है। तृतीय उन्मेष में ही उपमा का विवेचन किया गया है। कुन्तक के अनुसार—

**विवक्षित परिस्पन्द मनोहारित्व सिद्धये।**
**वस्तुनः केनचित्साम्यं तदुत्कर्षवतोपमा॥**

(व० जी० ३।२८)

वर्णनीय पदार्थ के स्वभाव की सुन्दरता की सिद्धि के लिए इस (सौन्दर्य) के उत्कर्ष से युक्त किसी वस्तु के साथ साम्य (प्रदर्शन करना) उपमा है। इन्होंने उपमा के भेद-प्रभेद के वर्णन के अतिरिक्त प्रतिवस्तूपमा, उपमेयोपमा, तुल्ययोगिता, अनन्वय, निदर्शना और परिवृत्ति अलंकार का अन्तर्भाव भी उपमा में ही किया है तथा उपमा को

एकमात्र वाक्यवक्रता में अन्तर्भूत किया है। वक्रोक्तिजीवितकार का उपमा लक्षण सबसे विलक्षण है। इनके लक्षण में तीन बातों पर विचार किया गया है—(१) वर्णनीय पदार्थ की सौन्दर्य-वृद्धि के लिए उससे अधिक गुणशाली पदार्थ से समता दिखाना; (२) उपमावाचक शब्दों का चमत्कारपूर्ण क्रियादि के साथ सम्बन्ध; (३) वर्णनीय के मनोहारित्व की सिद्धि ही उपमा का उद्देश्य है।

वस्तुतः कुन्तक वक्रोक्तिवादी आचार्य हैं, जिसमें वचन-वक्रता पर विशेष बल दिया गया है, अतः उनके उपमा-लक्षण में 'विदग्धता' का समावेश स्वाभाविक है।

**भोज** (ल० १००५—१०५४ ई०) :

धारा-नरेश भोजराज इतिहास-प्रसिद्ध दानी एवं कवियों के आश्रयदाता थे। इन्होंने काव्यशास्त्र-विषयक दो ग्रन्थों की रचना की है—(१) शृंगार-प्रकाश, (२) सरस्वती-कण्ठाभरण।

शृंगार-प्रकाश रसपरक ग्रन्थ है। सरस्वती-कण्ठाभरण में ५ प्रकरण हैं। द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ प्रकरण में ७२ अलंकारों का वर्णन किया गया है। चतुर्थ प्रकरण में उभयालंकार के अन्तर्गत उपमा का विवेचन इस प्रकार किया गया है :

**तत्प्रसिद्ध्यनुरोधेन यः परस्परमर्थयोः।**
**भूयोऽवयवसामान्ययोगः सेहोपमा मता॥**

(स० क० ४।५)

दो पदार्थों में प्रसिद्धि के कारण परस्पर अवयव की समानता के योग का वर्णन उपमा है। भोज ने दो पदार्थों (उपमेय एवं उपमान) में आकृति के योग को ही उपमा स्वीकार किया है। इन्होंने उपमान की प्रसिद्धि का भी उल्लेख किया है, जो परम्परागत है तथा उपमा के २४ भेद किये हैं।

**मम्मट** (ल० १०५०—११०० ई०) :

आचार्य मम्मट का काव्यप्रकाश संस्कृत-साहित्यशास्त्र का गौरव एवं काव्य-शास्त्र का समन्वयात्मक ग्रन्थ है। इसमें प्राचीन आलोचकों की मान्यताओं का खण्डन-मण्डन कर उनकी युक्तियुक्तता पर विस्तृत विवेचन किया गया है तथा समीक्षा के द्वारा काव्यशास्त्र का एक प्रौढ़, सुव्यवस्थित एवं सामंजस्यपूर्ण सिद्धान्त निर्धारित किया गया है।

काव्य-प्रकाश में १० उल्लास हैं। दशम उल्लास के प्रारम्भ में ही अर्थालंकारों के अन्तर्गत सर्वप्रथम उपमा का विवेचन किया गया है। मम्मट ने उपमेय तथा उपमान में भेद होने पर उनके साधर्म्य को उपमा कहा है। उनके उपमा-लक्षण में भामह एवं उद्भट—दोनों के विचारों का सार है। उन्होंने 'साधर्म्यमुपमा भेदे'

(का० प्र० १०।१२५) इस परिभाषा में भामह द्वारा कथित देश, काल, क्रिया आदि का विरोध तथा उद्भट द्वारा निरूपित 'मिथोविभिन्नकालादिवाच्यत्व' विचार का भेद शब्द में समन्वय किया है। संक्षिप्तता एवं गंभीरता इनकी परिभाषा की विशेषता है। इन्होंने उपमा के २५ भेद किये हैं। मुख्य भेद २ हैं—पूर्णा एवं लुप्ता। पूर्णा के ६ एवं लुप्ता के १९ भेद किये हैं। इन्होंने उपमा-विभाजन में उद्भट के वर्गीकरण को अपनाया है तथा लुप्तोपमा के श्रेणी-विभाग में व्याकरण-विषयक व्युत्पत्ति को प्रदर्शित किया है।

रुय्यक (ल० ११३५—११५० ई०) :

रुय्यक का 'अलंकार-सर्वस्व' अत्यन्त प्रौढ़ रचना है। यह दो प्रकरणों में विभाजित है—(१) शब्दालंकार-प्रकरण और (२) अर्थालंकार-प्रकरण। अर्थालंकार में विभाजित उपमा की विवेचना की गई है :

**उपमानोपमेययोः साधर्म्ये भेदाभेदतुल्यत्वे उपमा ॥**

(अ० स० २।१२)

उपमान और उपमेय का समान धर्म के साथ ऐसा सम्बन्ध, जिसमें भेद और अभेद ( प्रधान या अप्रधान न होकर ) समान हो, उपमा अलंकार कहलाता है। इन्होंने तीन प्रकार का साम्य बतलाकर उपमा में तीसरे प्रकार के साम्य की स्थिति को स्वीकार किया है। ध्वनिवादी होने पर भी इनका अलंकार-निरूपण अत्यन्त प्रौढ़ और वैज्ञानिक है।

वाग्भट (ल० ११२३—११५० ई०) :

वाग्भट जैन-परम्परा के आचार्य थे। इनका 'वाग्भटालंकार' ५ परिच्छेदों में विभाजित है। वाग्भटालंकार के चतुर्थ परिच्छेद के मध्य में उपमा का विवेचन किया गया है :

**उपमानेन सादृश्यमुपमेयस्य यत्र सा ।**
**प्रत्ययाव्ययतुल्यार्थसमासैरुपमा मता ॥**

(वा० ४।५०)

जहाँ वति आदि प्रत्यय, इव आदि अव्यय, तुल्य आदि शब्द और कर्मधारय आदि समासों के प्रयोग से अप्रस्तुत (उपमान) के साथ प्रस्तुत (उपमेय) में सादृश्य दिखाया जाता है, वहाँ उपमा अलंकार होता है। इन्होंने उपमा के पूर्णोपमा, लुप्तोपमा, अन्योन्योपमा, समुच्चयोपमा और मालोपमा—ये ५ भेद किये हैं तथा उपमा-दोष का भी उल्लेख किया है।

हेमचन्द्र (ल० ११३६—११४३) :

प्रसिद्ध वैयाकरण जैनाचार्य हेमचन्द्र का काव्यानुशासन आठ अध्यायों में

विभाजित है। काव्यानुशासन के पंचम अध्याय में शब्दालंकार एवं षष्ठ अध्याय में अर्थालंकार का विवेचन किया गया है। हेमचन्द्र के अनुसार :

"हृद्यं साधर्म्यमुपमा ॥"

(काव्या० ६।१।६)

सुन्दर चमत्कारपूर्ण सादृश्य ही उपमा है। उन्होंने उपमा-भेद के अन्तर्गत समस्तविषया एवं एकदेशविषया नामक भेद का विशेष रूप से उल्लेख किया है तथा उपमेयोपमा और अनन्वय का अन्तर्भाव उपमा में ही किया है।

**जयदेव** (ल० १२००—१२५० ई०) :

जयदेव का 'चन्द्रालोक' अलंकार-विषयक अत्यन्त लोकप्रिय ग्रन्थ है। इसमें १० मयूख हैं—३५० छन्दों में काव्यशास्त्र के सभी अंगों का सुबोध शैली में विवेचन किया गया है। पंचम मयूख में अलंकारों का निरूपण किया गया है। इसमें एक ही श्लोक में अलंकारों के लक्षण एवं उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं। संख्या की दृष्टि से जयदेव ने सबसे अधिक अलंकारों का वर्णन किया है। पंचम मयूख में उपमा की परिभाषा निम्न प्रकार है :

उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयोः।
हृदये खेलतोरुच्चैस्तन्वङ्गीस्तनयोरिव ॥

(चन्द्रालोक ५।११)

उपमेय एवं उपमान के सादृश्य को सहृदय के हृदय का आह्लादक तथा व्यंजना-शक्ति के बिना ही स्पष्ट रूप से (अभिधा के द्वारा ही) प्रकट करना उपमा है। उपमा के भेद-प्रभेद का इन्होंने विस्तृत विवेचन नहीं किया है। उपमा-लक्षण में 'द्वयोः' शब्द के द्वारा अनन्वय का निवारण एवं सादृश्य के द्वारा अभिधागत सादृश्य या व्यंग्य-रहित सादृश्य को द्योतित किया है। इन्होंने उपमान एवं उपमेय दोनों के सादृश्य लक्ष्मी या चमत्कारजनक सादृश्य का वर्णन किया है, गुणलेश या उपमान के उत्कर्ष का नहीं। यहाँ उपमान एवं उपमेय का सादृश्य वाच्य रहता है, व्यंग्य नहीं।

**विद्याधर** (ल० १२८५—१३२५) :

विद्याधर की एकावली तीन भागों में विभाजित है—कारिका, वृत्ति एवं उदाहरण। तीनों विद्याधर की ही रचना हैं। इसमें आठ उन्मेष हैं, जिनमें काव्य के स्वरूप, वृत्ति, ध्वनिभेद, गुणीभूत व्यंग्य, गुण, रीति, शब्दालंकार एवं अर्थालंकार का विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ पर अलंकार-सर्वस्व एवं काव्यप्रकाश का प्रभाव है। आठवें उन्मेष में उपमा-लक्षण एवं भेद-प्रभेद का विवेचन किया गया है।

**विद्यानाथ** (ल० १३२५ ई०)

विद्यानाथ ने अपने आश्रयदाता आन्ध्रप्रदेश के काकतीयवंशी राजा प्रतापरुद्र की प्रशंसा में 'प्रतापरुद्रयशोभूषण' की रचना की है। यह ९ प्रकरणों में विभाजित है। इसके अलंकार-प्रकरण पर अलंकारसर्वस्व का अधिक प्रभाव है। अलंकार-विवेचन में स्पष्टता अधिक है। इन्होंने प्रारम्भ में अलंकारों के स्वरूप, विभाग एवं परस्पर वैलक्षण्य का निरूपण किया है। इनके अनुसार :

**स्वतः सिद्धेन भिन्नेन संगतेन च धर्मतः।**
**साम्यमन्येन वर्ण्यस्य वाच्यं चेदेकदोपमा॥**

(प्र० रु० य०, पृ० २५४)

एक वाक्य में दो पदार्थों का वैधर्म्य-रहित वाच्य सादृश्य-उपमा है। इन्होंने उपमा में साम्य को वाच्य माना है, व्यंग्य नहीं। साधर्म्य का विभाजन तीन प्रकार से किया है—भेद-प्रधान, अभेद-प्रधान, भेदाभेद-प्रधान। उपमा को इन्होंने भेदाभेद-प्रधान साधर्म्य पर आश्रित माना है।

उपमा-भेद में समस्तवस्तुविषया तथा एकदेशविवर्तिनी नामक उपमा के दो विशेष भेद माने हैं।

**वाग्भट** (ल० १४०० ई०) :

वाग्भट-रचित 'काव्यानुशासन' अलंकार-विषयक ग्रन्थ है। इसमें पाँच अध्याय हैं। तृतीय अध्याय में ६३ अर्थालंकारों का एवं चतुर्थ अध्याय में शब्दालंकारों का परम्परागत वर्णन है। इनके अनुसार :

चमत्कारि साम्यमुपमा॥ (काव्या०, पृ० ३३)

उपमान और उपमेय का वह सादृश्य, जो सहृदय के हृदय में चमत्कार उत्पन्न करता है, उपमा है।

**विश्वनाथ** (ल० १३००—१३८४ ई०) :

कविराज विश्वनाथ का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'साहित्यदर्पण' है, जो विषय के विस्तार एवं प्रतिपादन की सुबोधता के कारण अत्यधिक लोकप्रिय है। इसमें विषय की स्पष्टता एवं सुबोध शैली के अतिरिक्त मनोहर हृदयगाही उदाहरणों की भी कमी नहीं है। इसमें १० परिच्छेद हैं। दशम परिच्छेद में अलंकारों का विवेचन किया गया है। अलंकार-विवेचन में अलंकारसर्वस्व एवं काव्यप्रकाश का प्रभाव होते हुए भी मौलिकता अधिक है। दशम परिच्छेद में उपमा का विवेचन इस प्रकार किया गया है :

**साम्यं वाच्यमवैधर्म्यं वाक्यैक्य उपमा द्वयोः॥**

(सा० द०, १०।१४)

उपमा दो पदार्थों का वह वैधर्म्यवाच्यसाम्य है, जो एक वाक्य-प्रतिपाद्य हुआ करता है। इन्होंने उपमा के मुख्य दो भेद किये हैं—पूर्णोपमा और लुप्तोपमा। पुनः श्रौती एवं आर्थी रूप से पूर्णोपमा के ६ और लुप्तोपमा के २१, कुल २७ भेद किये हैं। उपमा में साधारण धर्म, उसके स्वरूप एवं प्रकार का भी निर्देश किया गया है।

**केशव मिश्र** (ल० १५५० ई०) :

केशव मिश्र का 'अलंकारशेखर' आठ रत्नों में विभाजित है। प्रत्येक अध्याय में कई मरीचियाँ हैं, जिनकी संख्या २२ है। चतुर्थ रत्न की द्वितीय मरीचि में उपमा का विवेचन किया गया है :

**तत्र भेदे सति साधर्म्यमुपमा** (अ० शे०, ४।२।३)

भेद होने पर उपमेय का उपमान के साथ जो परस्पर साम्य है, वह उपमा है। इन्होंने वाक्यार्थोपमा, अतिशयोपमा आदि उपमा के १० भेद किये हैं।

**अप्पय दीक्षित** (ल० १५५४—१६२६ ई०) :

अप्पय दीक्षित बहुमुखी प्रतिभावान् व्यक्ति थे। इन्होंने काव्यशास्त्र-विषयक तीन ग्रन्थों की रचना की है—वृत्तिवार्त्तिक, चित्रमीमांसा और कुवलयानन्द। वृत्तिवार्त्तिक में अभिधा, लक्षणा-शक्तियों का विवेचन है। चित्रमीमांसा अत्यन्त प्रौढ़ एवं स्वतन्त्र ग्रन्थ है। इसमें १२ अलंकारों का विस्तार से विवेचन, विश्लेषण एवं मूल्यांकन किया गया है। यह ग्रन्थ अधूरा है। इसमें पूर्ववर्ती आचार्यों के मत का खण्डन कर नवीन परिभाषा प्रस्तुत की गई है। उपमा का विवेचन करते हुए कहा है :

**उपमैका शैलूषी सम्प्राप्ता चित्रभूमिकाभेदान्।**
**रञ्जयन्ती काव्यरङ्गे नृत्यन्ती तद्विदां चेतः ॥**
**उपमिति क्रिया निष्पत्तिमत्सादृश्य वर्णनमुपमा ॥**

(चि० मी०, पृ० ६)

जहाँ सादृश्य या समानता के वर्णन में उपमिति क्रिया की उत्पत्ति होती है तथा सादृश्य का वर्णन अपने में अपर्यवसायी होता है, वहाँ उपमा होती है अथवा वही सादृश्य-वर्णन उपमा है, जो दोष-रहित हो, वाच्य हो तथा उपमिति क्रिया से उत्पन्न हो।

कुवलयानन्द में दीक्षित ने जयदेव के ही शब्दों को उतारकर सीधे-साधे ढंग से उपमा का वर्णन किया है; जैसे—

**उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयोः ।**
**हंसीव कृष्ण ते कीर्तिः स्वर्गङ्गामवगाहते ॥**
**वर्ण्योपमानधर्माणामुपमावाचकस्य च ।**
**एकद्वित्र्यनुपादानैर्भिन्ना लुप्तोपमाष्टधा ॥** (कु० ६-७, पृ० ९)

जहाँ दो पदार्थों—उपमान तथा उपमेय में समानता के कारण विशेष प्रकार की शोभा होती हो, वहाँ उपमा होती है। इसी कथन को और स्पष्ट करते हुए इन्होंने कहा है कि जहाँ व्यंजना-शक्ति के स्पष्ट रूप से उपमेय और उपमान की समानता की चारुता सहृदयों को आनन्दित करती है, वहाँ उपमा होती है। इन्होंने उपमा के पूर्णा और लुप्ता दो भेद किये हैं तथा लुप्तोपमा के आठ भेद किये हैं।

**पण्डितराज जगन्नाथ** (ल० १६२०—१६६०) :

पण्डितराज संस्कृत-काव्यशास्त्र के अन्तिम प्रौढ़ आचार्य हैं। इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'रसगंगाधर' है, जिसमें काव्यशास्त्र का वैज्ञानिक विवेचन नव्यन्याय-शैली में किया गया है। यह ग्रन्थ ध्वन्यालोक एवं काव्यप्रकाश की श्रेणी का है। इसमें विद्वत्ता, पाण्डित्य, तर्कपूर्ण खण्डन एवं सरस उदाहरणों का समावेश है। पण्डितराज ने अलंकारों का विवेचन करते समय पूर्ववर्त्ती आचार्यों के लक्षणों एवं उदाहरणों में दोष दिखलाकर उनका नये ढंग से विश्लेषण प्रस्तुत किया है। इन्होंने शब्दालंकारों का वर्णन नहीं किया है। अलंकारों का क्रम रुय्यक के अलंकार-सर्वस्व के अनुसार है। शब्द-शक्तियों के दृष्टिकोण से अलंकारों का विवेचन प्रस्तुत कर इन्होंने नवीन प्रणाली चलाई है। रसगंगाधर के द्वितीय आनन के मध्य में इन्होंने उपमा का विवेचन किया है :

सादृश्यं सुन्दरं वाक्यार्थोपस्कारमुपमालङ्कृतिः ॥

(रस० गं०, द्वितीय आ०, पृ० २११)

पण्डितराज के अनुसार वाक्यार्थ को शोभित करनेवाले सुन्दर सादृश्य का नाम उपमा है। उपमा-लक्षण के पश्चात् इन्होंने कल्पितोपमा को उपमा के अन्दर सयुक्तिक संगृहीत किया है तथा प्राचीन आचार्यों द्वारा रचित उपमा-लक्षणों की आलोचना की है। तत्पश्चात् प्राचीनोक्त उपमा के २५ भेदों को गिनाकर उनके उदाहरण दिये हैं। २५ भेदों के अतिरिक्त उपस्कार्य-भेद से उपमा के ५ भेद और किये हैं। इस प्रकार २५ के पञ्चविध और हो जाने से १२५ और ३२ भेद माननेवाले प्राचीनों के मत से १६० भेद हो सकते हैं। उपमा के भेद-प्रभेद के पश्चात् अन्त में उपमा-दोषों का भी वर्णन किया है।

**समीक्षा :**

उपर्युक्त उपमा अलंकार के क्रमिक विकास के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अधिकांश आचार्यों ने उपमा का विस्तृत विवेचन करने का प्रयत्न किया है। प्रायः सभी आलंकारिकों ने उपमा को अर्थालंकारों में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्रदान करते हुए इसकी परिभाषा में सादृश्य, साम्य एवं साधर्म्य—इन तीनों में से किसी एक शब्द का प्रयोग किया है, जैसे—भरत, दण्डी, जयदेव एवं जगन्नाथ ने 'सादृश्य' शब्द का; भामह, वामन, विद्यानाथ, वाग्भट एवं विश्वनाथ ने 'साम्य' शब्द का

तथा उद्भट, मम्मट, रुय्यक और हेमचन्द्र ने 'साधर्म्य' शब्द का प्रयोग किया है। कतिपय आलंकारिकों ने सादृश्य , साम्य अथवा साधर्म्य के अतिरिक्त अन्य शब्दों का भी उपमा की परिभाषा में सन्निवेश किया है। ये शब्द प्रधानतः तीन प्रकार के हैं—(१) गुणलेश अथवा उसके पर्यायवाची शब्द, जो सादृश्य आदि के कारण हैं। (२) उपमानोपमेय, जिनमें सादृश्य स्थापित किया जाता है। (३) उपमा के अन्य अलंकारों से विभेद के सूचक शब्द।

भामह तथा वामन ने गुणलेश और उपमानोपमेय—दोनों प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। दण्डी ने केवल गुणलेश के पर्यायवाची शब्द का तथा उद्भट एवं रुय्यक ने उपमानोपमेय शब्द का सन्निवेश किया है। मम्मट, विद्यानाथ और विश्वनाथ ने उपमा को अनन्वय, उत्प्रेक्षा, रूपक एवं उपमेयोपमा से पृथक् सिद्ध करने के लिए क्रमशः 'भेदे', 'स्वतः सिद्धत्व' तथा 'वाच्य' आदि शब्दों का प्रयोग किया है।

उपमा की परिभाषा में गुणलेशतः अथवा उसके पर्यायवाची शब्द का सन्निवेश अनावश्यक है। यह गुणलेश सादृश्य शब्द में ही अन्तर्भूत है। अतः इसके पृथक् निर्देश की आवश्यकता नहीं। सादृश्य की परिभाषा 'तद्भिन्नत्वे सति तद्गत भूयोधर्मवत्त्वम्' की गई है। इस प्रकार 'तद्गतभूयोधर्मवत्त्वम्' अथवा 'अवयव-सामान्य-योग' इसका एक अंग है। यह 'अवयव-सामान्य-योग' 'गुण-सामान्य-योग', अथवा 'क्रियासामान्य-योग' के रूप में होता है। अतः गुणलेशतः के पृथक् निर्देश की आवश्यकता नहीं।

उपमानोपमेय के भी पृथक् निर्देश की आवश्यकता नहीं है। 'सादृश्य' शब्द से ही इन दोनों का काम चल सकता है। सादृश्य ऐसी दो वस्तुओं को मानकर चलता है, जिनमें एक दूसरी के समान हो। ये दो वस्तुएँ ही क्रमशः उपमेय तथा उपमान होती हैं। जिस वस्तु का अन्य वस्तु से सादृश्य दिखाया जाता है वह उपमेय होती है और उसका जिससे सादृश्य दिखाया जाता है वह उपमान होती है। इस प्रकार उपमानोपमेय भी सादृश्य में अन्तर्हित है। उपमानोपमेय भाव के सादृश्य में इसी अन्तर्भाव को लक्ष्य करके मम्मटादि ने उपमा की परिभाषा में इन शब्दों का प्रयोग नहीं किया है। काव्य-प्रकाश के टीकाकार वामनाचार्य भी इसी मत के समर्थक हैं।

उपमा में अन्य अलंकारों से विभेद करनेवाले तत्त्वों का सन्निवेश भी उचित नहीं है। अलंकार के स्वरूप का निर्णायक हेतु चमत्कार होता है। अतः उसकी परिभाषा में चमत्कार का सन्निवेश होना चाहिए, चमत्कार से असम्बद्ध अन्य अलंकारों के विभेदक तत्त्वों का नहीं। विभेदक तत्त्वों का ज्ञान तो बाद की एक क्रिया है, जिसका अलंकार के स्वरूप से उतना सम्बन्ध नहीं होता जितना अलंकारों की पारस्परिक तुलना की तर्क-प्रणाली से है।

अलंकार का स्वरूप चमत्कार है। चमत्कार के स्वरूप-भेद के अनुसार ही भिन्न-भिन्न अलंकार बनते हैं। अतः अलंकार की परिभाषा में चमत्कार अथवा उसके पर्यायवाची शब्दों का सन्निवेश उचित है। जहाँ इन शब्दों का प्रयोग नहीं भी होता, वहाँ अलंकार के सामान्य लक्षण द्वारा आक्षेप से इनकी उपस्थिति माननी चाहिए। उद्भट, वाग्भट, हेमचन्द्र एवं जगन्नाथ ने उपमा की परिभाषा में चमत्कार-सूचक शब्दों का प्रयोग किया है।

पण्डितराज जगन्नाथ ने अपनी परिभाषा में सादृश्य तथा सुन्दर शब्द के अतिरिक्त 'वाक्यार्थोपस्कारक' शब्द का भी प्रयोग किया है। कारण, वे अलंकार को गौण मानकर प्रधान अर्थ का उपस्कारक मानते हैं। उनके अनुसार प्रधानता तथा अलंकारता परस्पर-विरोधी हैं, किन्तु वास्तविकता यह है कि जहाँ चमत्कार अलंकार के कारण होता है, वहाँ प्रधानता अलंकार की ही होती है और वही वाक्यार्थ के रूप में अभिव्यक्त होता है। वाक्यार्थ उससे भिन्न कोई वस्तु नहीं, जिसका अलंकार उपकार करे। ऐसा तो तभी संभव है जब अलंकार शब्द तथा अर्थ से भिन्न कोई वस्तु हो। परन्तु ऐसी बात नहीं। अलंकार शब्द तथा अर्थ के रूप में अभिव्यक्त होता है और उसीका रूप है।

व्यंग्यार्थ की प्रधानता होने पर अलंकार का व्यंग्यार्थ से भिन्न रहकर उसका उपस्कारक होना संभव है, किन्तु वाच्यार्थ की प्रधानता की दशा में ऐसी बात नहीं। व्यंग्यार्थ वाच्यार्थ से भिन्न होता है, अतः इसकी प्रधानता होने पर वाच्यार्थ के स्वरूप, उपमा, रूपक आदि उसके अंग बनकर उसके उपस्कारक होते हैं जबकि वाच्यार्थ की प्रधानता होने पर अलंकार उससे भिन्न होकर उसके उपस्कारक नहीं होते, अपितु उसीके स्वरूप होते हैं।

कुछ आलंकारिकों ने उपमा की परिभाषा में 'सादृश्य' अथवा 'साम्य' शब्द का प्रयोग न करके 'साधर्म्य' का प्रयोग किया है, किन्तु सादृश्य तथा साधर्म्य में भेद है। सादृश्य में अवयव-सामान्य के अतिरिक्त अवयव-विशेष का भी ध्यान रहता है जबकि साधर्म्य में केवल अवयव-सामान्य का ही ध्यान रहता है। उपमा में साधर्म्य की प्रतीति न होकर सादृश्य की प्रतीति होती है। 'मुखं कमलमिव सुन्दरम्' इस उदाहरण में साधारण धर्म 'सौन्दर्य' के आधार पर मुख का कमल से सादृश्य अभिप्रेत है। मुख तथा कमल दोनों का साधारण धर्म सौन्दर्य से नहीं। अतः उपमा की परिभाषा 'सुन्दरम् साधर्म्यम्' न करके 'सुन्दरम् सादृश्यम्' करना उपयुक्त है।

वस्तुतः उपमा औपम्यमूलक अलंकारों का पुराण-पुरुष है। भामह के अनुसार रूपक में गुण-साम्य तथा उत्प्रेक्षा में क्रिया-साम्य पर ध्यान जाता है, अतः उपमा अलंकार वस्तु-साम्य में माना जाय तो उत्तम है।

द्वितीय अध्याय

# अग्नि

**अग्नि-उपासना की प्राचीनता :** आदिकाल से ही मानव-जीवन में अग्नि का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। आभिचारिक अनुष्ठानों में अग्नि-अनुष्ठान सर्वाधिक प्राचीन और सर्वप्रसिद्ध है। अग्नि-उपासना पर विचार करते हुए पाश्चात्य विद्वान् फ्रेजर[1] ने विभिन्न प्राचीन संस्कृतियों में प्रचलित अग्नि-सम्बन्धी अनेक अन्धविश्वासों का उल्लेख किया है; जैसे—सस्य और सन्तति की उत्पत्ति एवं वृद्धि पर अग्नि का प्रभाव, नाना प्रकार के रोगों, घातक पशुओं और भूतादि से अग्नि द्वारा रक्षा आदि।

भाषाशास्त्रीय और सांस्कृतिक आधारों पर ऐसा माना जा सकता है कि आर्य अपने मूल स्थान में भी अग्नि-उपासना से परिचित थे। अग्नि शब्द ( Latin—Ignis-s; Slavonic—Ogni ) आद्य आर्यभाषा-काल का है। अग्नि-उपासना भी, जिसमें विभिन्न देवों के नाम से अग्नि में हवि चढ़ाई जाती थी, ग्रीकों और रोम-वासियों में प्रचलित थी। Pur—जो ग्रीक, हिट्टाइट, तोखारी, जर्मन और अँगरेजी में प्रचलित है, संभवतः प्राचीन भारत-यूरोपीय समाज में प्राकृतिक अग्नि के लिए प्रयुक्त होता था और egni अथवा Ogni, जो सर्वत्र पुँल्लिग में ही मिलता है, धार्मिक कृत्य आदि के सम्पादनार्थ अग्निदेव का वाचक था। यही अग्नि-उपासना ईरानी और भारतीय आर्यों के बीच भी बद्धमूल हो गई। ईरानी जिस 'आतर' नाम से अग्नि की उपासना करते थे, वह ऋग्वेद (७।१।१) में 'अथर' के रूप में आया है। अवेस्ता के 'आथ्रवन्' शब्द का अर्थ अग्नि का पुरोहित ही है। अवेस्ता का 'आथ्रवन्' और ऋग्वेद का 'अथर्वन्' दोनों एक ही हैं। अतः यह सिद्ध है कि ईरानी और भारतीय आर्य-अभिचार के प्रधान ऋषि 'अथर्वा' हैं; क्योंकि स्वयं ऋग्वेद में यह कहा गया है कि अग्नि की उत्पत्ति अथर्वा से हुई (१०।२१।५)। अथर्वा का सम्प्रदाय आथर्वण कहलाता था। 'आथर्वण' शब्द 'अथर्व-सूक्त-संग्रह' के अर्थ में अथर्ववेद ( १९।२३।१ ) में आया है। किन्तु अथर्वा की परम्परा का संकेत ऋग्वेद (१०।८७।१२) में मिलता है, जहाँ अग्नि से अथर्वा की तरह यातुधानों का संहार करने के लिए कहा गया है।[2]

---

१. *The Golden Bough*, p. 53.

२. ऋग्वेद में लोक-साहित्य : अभिचार—डॉ० हरिमोहन मिश्र ('परिषद्-पत्रिका', बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना)

**अग्नि की उत्पत्ति :** अग्नि की उत्पत्ति के विषय में ऋग्वेद (२।१।१) में कहा है :

**त्वमाग्ने द्युभिस्त्वमाशुशुक्षणिस्त्वमद्भ्यस्त्वमश्मनस्परि ।**
**त्वं वनेभ्यस्त्वमोषधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः ।।**

"हे मनुष्यों के स्वामी अग्ने ! तुम तेजों से युक्त होकर उत्पन्न होते हो । तुम शीघ्र सर्वत्र दीप्तिमान् और सबको शुद्ध करनेवाले हो । तुम जल और पत्थर से उत्पन्न होते हो । तुम वनों और औषधियों से उत्पन्न होते हो ।"

इस ऋचा में आये हुए 'अद्भ्यः', 'अश्मनः' और 'वनेभ्यः' शब्द विशेष महत्त्वपूर्ण हैं । ये तीनों शब्द इस बात के द्योतक हैं कि ऋषिगण जल, पत्थर और लकड़ियों से अग्नि उत्पन्न करना जानते थे । प्राचीन काल में यज्ञ के लिए वही अग्नि पवित्र माना जाता था, जो पत्थर को घिसकर अथवा अरणियों को मथकर उत्पन्न किया जाता था ।

**व्युत्पत्ति :**

महर्षि यास्क ने निरुक्त में अग्नि का निर्वचन करते हुए लिखा है : "अग्निः कस्मात् । अङ्गुणीर्भवति । अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते । अङ्क्ते नयति सन्नयमानः । अक्नोपनो भवतीति स्थौलाष्ठीविः । न क्नोपयति न स्नेहयति । त्रिभ्य आख्यातेभ्यो जायत इति शाकपूणिः । इतात्, अक्तात् दग्धाद्वा । नीतात् । स खल्वेतेरकारमादत्ते गकारमनक्तेर्वा दहतेर्वा नीः परः । तस्यैषा भवति ।" ( निरुक्त दैवत० ७।१४ )

पृथ्वी-स्थानीय देवताओं में सर्वश्रेष्ठ अग्नि अग्रणी (नेता) है । यह यज्ञ में सर्वप्रथम प्रणीत किया जाता है । जिस ओर भी नमता है, प्रत्येक वस्तु को अपना अंग बना लेता है । स्थौलाष्ठीविन् के अनुसार यह प्रत्येक वस्तु को रुक्ष बना देता है । शाकपूणि के अनुसार यह हवि को देवों तक ले जाता है, स्वयं हवि भक्षण करता है और सभी वस्तुओं को जला देता है, इसीलिए इसे अग्नि कहते हैं । यह विश्व का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है । मानव के सभी कार्य इसीसे संचालित होते हैं । तेज, प्रकाश और उष्णता के पुंज अग्नि से ही यह विश्व स्थिर है । यदि अग्नि न रहे तो सारा विश्व ही विनष्ट हो जाय ।

**स्वरूप, अर्थ एवं महत्त्व :** 'अग्नि' शब्द आग का पर्याय है और इसका उपयोग प्रतिदिन भोजन पकाने से लेकर यज्ञ, हवन, हविष्य आदि बनाने में होता है । अतः अग्नि के स्वरूप से सभी परिचित हैं । यहाँ विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि यद्यपि 'अग्नि' शब्द आग का वाचक है और वेद में अधिकांशतः अग्निदेवता के मन्त्र यज्ञाग्नि से सम्बद्ध हैं तथापि सर्वत्र अग्नि का अर्थ 'आग' ही है, ऐसा मानना असंगत

होगा; कारण, अग्नि शब्द के आग के अतिरिक्त दूसरे अर्थ भी होते हैं; जैसे—लौकिक संस्कृत में अग्नि शब्द—अग्नि जार, वृक्ष, केशर, स्वर्ण, नींबू, भिलावा, चित्रक, रक्त-चित्रक, कपित्थाष्टक, जठराग्नि, पित्त आदि अनेक अर्थों में प्रचलित है। वेद में अग्नि का परमात्मा, आत्मा, आदिमानव, राजा, नेता, ज्ञानी आदि अनेक अर्थों में प्रयोग किया गया है। अधिभूत में अग्नि का अर्थ ज्ञानी, अधिदेव में भौतिक अग्नि एवं विद्युत्, अधियज्ञ में यज्ञाग्नि, तथा अध्यात्म में प्राण और जीव है। ऋचाओं में वर्णित 'रत्नधातमम्', 'कविक्रतु', 'सत्य', 'पुरोहित', 'ऋत्विज', 'अंगिरा' आदि अग्नि के विशेषण पद भी, अग्नि का आग के अतिरिक्त अर्थों की ही सूचना दे रहे हैं। अग्नि के पर्यायवाची—(१) वैश्वानर—विश्व में (नर) पुरुष-शक्ति, विश्व का चालक, (विश्व) सब (नर) मनुष्यों के सम्बन्ध से होनेवाला इत्यादि। (२) धनंजय—धन को जीतनेवाला, धन प्राप्त करनेवाला, (३) जातवेदाः—जिससे वेद उत्पन्न हुए हैं, जिससे धन उत्पन्न होता है, जिससे ज्ञान होता है। (४) तनूनपात्—(तन्) शरीर को (न-पात्) न गिरानेवाला, जिसके कारण शरीर का पतन नहीं होता। (५) रोहिताश्वः—लाल रंग के घोड़ों से युक्त। (६) हिरण्यरेताः—सुवर्ण का वीर्य वाला। (७) सप्तार्चिः—सात ज्वालाओं से युक्त। (८) सप्तजिह्वः—सात जिह्वाओं से युक्त। (९) सर्वदेवमुखः—सब देवों में प्रमुख, किंवा सब देवों का मुख। ये सभी शब्द आग से भिन्न अर्थ को ही प्रकट कर रहे हैं।

ऋग्वेद में अग्नि ज्ञान का प्रतिनिधित्व करता है। ज्ञान की मुख्यता होने के कारण ऋग्वेद में केवल आठवें और नौवें मण्डल को छोड़कर शेष सभी मण्डलों का आरम्भ अग्नि से ही किया गया है, उदाहरणार्थ :

| ऋचा | मण्डल |
|---|---|
| अग्निमीडे पुरोहितं | (ऋ० १।१।१) |
| त्वमग्ने द्युभिस्त्वमाशुशुक्षणिः | (ऋ० २।१।१) |
| सोमस्य मा तवसं वक्ष्यग्ने | (ऋ० ३।१।१) |
| त्वां ह्यग्ने सदमित् समन्यवो | (ऋ० ४।१।१) |
| अबोध्यग्निः समिधा जनानां | (ऋ० ५।१।१) |
| त्वं ह्यग्ने प्रथमो मनोषिणाम् | (ऋ० ६।१।१) |
| अग्निं नरो दीधितिभिः | (ऋ० ७।१।१) |
| अग्निर्मानुना रुशता | (ऋ० १०।१।१) |

उपर्युक्त सभी मण्डलों का प्रारम्भ अग्नि की प्रार्थना से हुआ है। अग्नि से सम्बद्ध सूक्तों के बाद इन्द्र के सूक्त हैं। इन्द्र कर्मशक्ति का प्रतिनिधि है। संभवतः सूक्तों की इस व्यवस्था में ऋषियों की यह मनीषा रही हो कि कर्म-शक्ति का आधार

ज्ञान-शक्ति है। ज्ञान से ही कर्म को प्रेरित होना चाहिए। ज्ञान से प्रेरित कर्म ही शिव का उत्पादक होता है। केवल कर्म या ज्ञान-हीन कर्म उद्धतता का जनक होकर समाज या राष्ट्र में अराजकता या अव्यवस्था का कारण बनता है। इसीलिए इन्द्र-शक्ति को अग्नि-शक्ति से नियन्त्रित करने के लिए ही ऋग्वेद में अग्निसूक्तों को प्राथमिकता दी गई है।

चारों संहिताओं में कुल मिलाकर इन्द्र और अग्नि से सम्बद्ध लगभग छह हजार मन्त्र हैं, जिनमें साढ़े तीन हजार इन्द्र के और ढाई हजार अग्नि देवता के मन्त्र हैं। केवल ऋग्वेद में अग्नि से सम्बद्ध २२४ सूक्त हैं—१९१ अग्नि-सूक्त और ३३ अग्नि के पर्याय वैश्वानर अग्नि, रक्षोहा अग्नि, जातवेदोऽग्नि, धर्मोऽग्नि, औषसोऽग्नि, द्रविणोदाग्नि, शुचिरग्नि, अग्निरापो गावश्च और आप्रीसूक्त हैं। अग्नि-विषयक यह विस्तृत वर्णन अग्नि देवता की विशाल महिमा को सूचित कर रहा है।

**अग्नि के विविध रूप :** अग्नि के विविध रूप का वर्णन करते हुए उपनिषद् में कहा गया है :

अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो।
रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव ॥

(कठ० ५।९)

अर्थात् एक ही अग्नि इस पृथ्वी में प्रविष्ट होकर सभी पदार्थों का रूप धारण करता है। ऋग्वेद के द्वितीय मण्डल की एक ऋचा में इसी बात को इस प्रकार कहा गया है :

त्वमग्न इन्द्रो वृषभः सतामसि
त्वं विष्णुरुरुगायो नमस्यः।
त्वं ब्रह्मा रयिविद् ब्रह्मणस्पते
त्वं विधर्तः सचसे पुरंध्या ॥

(ऋ० २।१।३)

अग्नि सज्जनों में सर्वश्रेष्ठ होने के कारण इन्द्र है। यह देवों में सर्वाधिक ऐश्वर्यवान् होने के कारण इन्द्र है। यही अग्नि 'उरुगायः विष्णुः' सर्वत्र व्यापक होने से विष्णु है। सबसे बृहत् होने के कारण ब्रह्मा है और नाना तरह की बुद्धियों से युक्त होने के कारण मेधावी है। व्रतों को धारण करके उनका पालन करनेवाला होने से वरुण है। सज्जनों का पालक होने से अर्यमा और प्राणदाता होने के कारण 'असुर' है।

'आदित्यासः आस्यं।'

(ऋ० २।१।१३)

अग्नि देवों का मुख है। यज्ञाग्नि में डाली गई आहुति आदित्य में जाती है अथवा देवों के पास पहुँचती है। 'शुचयः जिह्वां' अग्नि की किरणें जिह्वा को

पवित्र करनेवाली हैं। इसके प्रज्वलित होने पर वेदों की ऋचाएँ पढ़ी जाती हैं और इन ऋचाओं के उच्चारण से बोलनेवाले की जीभ, मन और बुद्धि सभी पवित्र हो जाते हैं।

तं देवा बुध्ने रजसः सुदंससं दिवस्पृथिव्योररतिं न्येरिरे ॥

(ऋ० २।२।३)

उत्तम कर्म करनेवाले अग्नि को देवगण सबसे श्रेष्ठ स्थान पर स्थापित करते हैं।

अग्निं देवासो मानुषीषु विक्षु प्रियं धुः क्षेष्यन्तो न मित्रम् ॥

(ऋ० २।४।३)

देवों ने प्रिय और हितकारी अग्नि को मानवी प्रजाओं में तेजस्वी सूर्य के समान स्थापित किया है।

विद्वाँ अस्य व्रता ध्रुवा वया इव अनुरोहते ॥

(ऋ० २।५।४)

इस अग्नि के अटल नियमों में रहनेवाला विद्वान् पेड़ों की शाखाओं के समान प्रतिदिन बढ़ता ही रहता है। यह अग्नि 'शुचिः' स्वयं शुद्ध रहकर अन्यों को भी शुद्ध बनानेवाला, 'प्रशास्ता'—उत्तम शासक, 'शुचिक्रतुः'—स्वयं उत्तम कर्म करते हुए दूसरों को भी उत्तम कर्म करने की प्रेरणा देनेवाला, 'उर्ध्व शोचिः'—सदा उन्नति के लिए प्रयत्नशील, 'मित्रः इव जन्यः'—मित्र के समान हितकारी तथा 'अदब्ध व्रतः'—आलस्य-रहित होकर सदैव नियमों का पालन करनेवाला है। यह 'अन्तः ईयते'—लोगों के हृदय में विचरता है। इसीलिए प्राण को हृदय में सन्निविष्ट बताकर उसे हृदय-गुहा का अधिपति कहा है।

अत्रिमनु स्वराज्यमग्निमुक्थानि वावृधुः। विश्वा अधिश्रियो दधे ॥

(ऋ० २।८।५)

शत्रुओं का विनाशक तथा स्वयं प्रकाशक अग्नि सम्पूर्ण शोभाओं का धारक है।

अयं कविरकविषु प्रचेता मर्तेष्वग्निरमृतो निधायि।
स मा नो अत्र जुहुरः सहस्वः सदात्वे सुमनसः स्याम ॥

(ऋ० ७।४।४)

ज्ञानी अग्नि शब्द न करनेवालों में शब्द का प्रवर्त्तक और मरनेवालों में अमर है।

देवो न यः पृथिवीं विश्वधाया उपक्षेति हितमित्रो न राजा ॥

(ऋ० १।७३।३)

अनुकूल मित्र से युक्त राजा की तरह अग्नि पृथ्वी पर निवास करते हुए सबका पालन करता है। हवन-कर्त्ता यजमान यज्ञ में अग्नि का वरण कर ऐश्वर्य-सम्पन्न राजा की तरह उसे प्रसन्न करते हैं।

**अग्ने साचीव विश्वा भुवनान्युज्जसे ॥**

(ऋ० १०।१४२।२)

सर्वप्रिय अग्नि मित्र के समान सम्पूर्ण प्राणियों को वश में करता है। प्रसन्न मनवाले वीर के समान सबके हित के लिए अपना जीवन अर्पित करता है। प्रजाओं में यह महारथी वीर के समान प्रशंसनीय है। जब यह जंगलों को जलाता है तो दाढ़ी को नापित की तरह साफ कर देता है।

ऋग्वेद (१।५८।६) में अग्नि को दिव्य जन्म-कर्त्ता बताया गया है। यह अत्यन्त श्रेष्ठ धन के समान धारण किया जाता है। अतः मनुष्य में सबसे श्रेष्ठ धन, किंवा (रयि) श्रेष्ठ शोभा आत्माग्नि ही है। यह आत्माग्नि शरीर का 'अ + तिथि' है; क्योंकि इसके शरीर में आने-जाने की तिथि निश्चित नहीं है। यही सेवा करने योग्य सच्चा मित्र और सर्वमान्य है।

**अयं होता प्रथमः पश्यतेमम् इदं ज्योतिरमृतं मर्त्येषु।**
**अयं स जज्ञे ध्रुव आ निषत्तोऽमर्त्यस्तन्वा वर्धमानः ॥**

(ऋ० ६।९।४)

"मर्त्येषु मरण स्वभावेषु शरीरेषु अमृतं मरणरहितं इदं वैश्वानराख्यं ज्योतिः जाठर रूपेण वर्त्तते। अपि च सोऽयमग्निः ध्रुवो निश्चल आ समन्तात् निषण्णः सर्व-व्यापी अतएवामर्त्यो मरणरहितोऽपि तन्वा शरीरेण सम्बन्धाज्जज्ञे ॥"

(ऋ०, सा० भा० ६।९।४)

मरनेवाले शरीरों में मरणधर्म-रहित वैश्वानर नामक यह तेज जठरानि-रूप में रहता है। यह ध्रुव, सर्वव्यापक, अमर होते हुए भी शरीर के सम्बन्ध से उत्पन्न होता है, अमर चेतन अग्नि वाणी के मूल स्थान में स्थित है; कारण, यही आत्माग्नि बुद्धि के साथ मिलकर मन के द्वारा प्राण को संचारित करके नाना प्रकार से शब्द उत्पन्न करता है। बुद्धिगत इस ज्ञानाग्नि का स्वरूप 'चित्' है। 'सत्-चित्-आनन्द' में 'चित्' ही आत्मा नाम से प्रसिद्ध है, जो आत्माग्नि कहलाता है। यह आत्माग्नि बुद्धि की वेदी में प्रज्वलित होता है। मन आदि इन्द्रियाँ इसमें विविध ज्ञान-संस्कारों का हवन करती हैं।

**अग्निं सूनुं सहसो जातवेदसं दानाय वार्याणाम्।**
**द्विता योऽ भूदमृतो मर्त्येष्वा होता मंद्रतमो विशि ॥**

(ऋ० ८।७१।११)

यह सहनशक्ति को बढ़ानेवाला, ज्ञान और धन का उत्पादक, शत्रु-निवारक, शक्तियों का दाता, मर्त्यों में अमर, प्रजा में अत्यन्त तृप्तिकारक एवं दानी है।

**स नो विभावा चक्षणिर्न वस्तोरग्निर्वन्दारुवेद्यश्चनोधात् ।**
**विश्वायुर्यो अमृतो मर्त्येषूषर्भुद भूदतिथिः जातवेदाः ।।**

(ऋ० ६।४।२)

अग्नि दिन में सूर्य-सदृश प्रकाश देनेवाला, जानने के योग्य, वंदनीय, अन्न का दाता, पूर्ण आयु देनेवाला, अमर, ब्राह्म-मुहूर्त्त में जागनेवाला तथा ज्ञान का प्रकाशक है।

**यो मर्त्येष्वमृत ऋतावा होता यजिष्ठ इत्कृणोति देवान् ।**

(ऋ० १।७७।१)

मर्त्यों में अमर देव अग्नि सत्य नियमों का पालक, दाता, पूज्य और देवताओं का हितकारक है।

**अग्निर्देवेषु राजत्यग्निर्मर्तेष्वाविशन् ।**
**अग्निर्नो हव्यवाहनो अग्नि धीभिः सपर्यत ।।**

(ऋ० ५।२५।४)

देवों में प्रकाशमान यह अग्नि मर्त्यों में आवेश करता है और मानव का अन्नवाहक है। अतः बुद्धि और कर्मों के द्वारा पूजनीय है।

**गुहा चरन्तं सखिभिः शिवेभिः ।।**

(ऋ० ३।१।६)

शुभ मित्रों के साथ गुहा में संचार करनेवाला अग्नि विलक्षण होते हुए भी सुगमता से जानने योग्य है।

यज्ञाग्नि :

यज्ञाग्नि के रूप में यह 'रोहिताश्वः'—लाल अश्ववाला, हिरण्यरेताः, सुवर्ण-वीर्य, सप्तार्चिः—सात ज्वालाओं से युक्त, सप्तजिह्वः—सप्त-जिह्व तथा सर्वदेवमुखः—सब देवों का मुख है। यह वायु का अग्रगामी और यज्ञ का प्रथम सम्पादक है। जड़ अग्नि का अधिष्ठाता यही चेतन अग्नि है। इसी से यह देव कहलाता है। यह यज्ञ-दूत, ध्रुव, सत्यवान्, शुद्धिकर्त्ता, होता, धृतपृष्ठ, शोचिष्केश, रक्त-श्मश्रु, तीक्ष्ण-दंष्ट्र और रुक्म-दन्त है। यज्ञ में अग्निरूप जिह्वा के द्वारा ही देवता हवि भक्षण करते हैं।

**अग्न आयाह्यग्निभिर्होतारं त्वा वृणीमहे ।**
**आ त्वामनक्तु प्रयता हविष्मती यजिष्ठं बर्हिरासदे ।।**

(ऋ० ८।६०।१)

इस ऋचा में अग्नि को ऋत्विज् हवन-कर्त्ता के रूप में स्वीकार किया गया है। 'होता' शब्द का अर्थ दाता, आदाता, आह्वानकर्त्ता और हवन-कर्त्ता है। यह आत्माग्नि इन्द्राग्नियों, प्राणाग्नियों एवं जाठरादि अग्नियों में विविध प्रकार के हवन कर रहा है, अतः होता है।

**द्वियं पंच जीजनन्त्संवसानाः स्वसारो अग्निं मानुषीषु विक्षु ।।**

(ऋ० ४।६।८)

दस अंगुलियाँ अरणियों में घर्षण उत्पन्न कर इस अग्नि को यज्ञ के लिए सिद्ध करती हैं। दीप्यमान मूर्धारूप ज्वालाओं से यह सब दिशाओं में विचरण करता है। इसकी उपमा शब्द करते हुए वृषभ आदि पशुओं से दी गई है। उत्पन्न हुआ यज्ञाग्नि बाल-वत्स के समान है। आकाश में उड़नेवाले श्येन एवं हंस से भी इसकी तुलना की गई है। यह लकड़ी को उसी प्रकार आक्रान्त करता है जैसे पक्षी विटंक पर बैठता है। लकड़ी एवं घृत इसका भोजन है, पिघला हुआ मक्खन इसका पेय है और दिन में तीन बार यज्ञ में भोज्य पदार्थ को अंगीकार करता है। यह देवताओं का मुख है। लपटें चम्मच हैं। हव्य-भक्षण करने के लिए इससे प्रार्थना की जाती है तथा सोमपान के लिए इसे बुलाया जाता है। रात्रि में दीप्त होकर यह अन्धकार को भगा देता है। इसका रास्ता काला है। इसकी लपटों की ध्वनि समुद्र की लहरों के गर्जन के समान है। इसका लाल रंग का धुआँ आकाश तक उठता है और ऐसा प्रतीत होता है, जैसे आकाश को थामने के लिए स्तम्भ हो। इसे जल-पुत्र और धूम-केतु भी कहते हैं। यह अरणियों से उत्पन्न होता है, जो इसके मातृ-स्थानीय हैं। सूखी समिधाओं और शुष्क काष्ठों से भी इसका जन्म होता है। उत्पन्न होते ही यह अपने माता-पितारूप काष्ठ का भक्षण कर जाता है। यह पुरोहित, होता, अध्वर्यु और ऋत्विक् भी कहलाता है। यज्ञ के प्रत्येक रहस्य को जानने के कारण यह जातवेद है। हव्यवाहन अग्नि क्रव्याद-अग्नि से भिन्न है।

**स देवेषु वनते वार्याणि ।।** (ऋ० ५।४।३)

**देवो देवान् क्रतुना पर्यभूषत् ।।** (ऋ० २।१२।१)

**देवो देवान् परिभूर्ऋतेन ।।** (ऋ० १०।१२।२)

**देवो देवान् यजत्वग्निरर्हन् ।।** (ऋ० २।३।१)

**देवो देवान् यजसि जातवेदः ।।** (ऋ० १०।१०।१)

**देवो देवान् स्वेन रसेन पृञ्चन् ।।** (ऋ० ९।९७।१२)

**स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः ।।** (यजु० ३४।५१)

यज्ञाग्नि देवताओं को शक्ति प्रदान करनेवाला एवं अच्छे कार्यों से सुशोभित करनेवाला है। योग्य होने के कारण देवताओं का यजनकर्त्ता तथा अपने रस से उन्हें पुष्ट कर दीर्घ आयु प्रदान करता है।

ऋग्वेद ५।११।२ में अग्नि को यज्ञ का ध्वज, उत्तम यज्ञकर्त्ता और अन्तःकरण में स्थित होकर हवन करनेवाला कहा गया है। यह इन्द्र तथा अन्य देवों के साथ एक रथ में बैठकर आता है। सम्पूर्ण जगत् इस अग्नि का रथ है। इस रथ पर सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, वायु आदि सभी देव बैठे हैं। विश्व-व्यापक परमात्मा स्त्री है और इसके रथ पर बैठनेवाले अन्य देव इसके सहायक हैं। इसका प्रतिरूप दूसरा छोटा रथ है, जिसे शरीर कहते हैं। इसमें आत्माग्नि रथी है और सम्पूर्ण देवताओं के अंशरूप इन्द्रियाँ इसकी सहायक हैं। जीवात्मा का रथ छोटा है और परमात्मा का बड़ा। यदि छोटे-बड़ेपन को छोड़ दिया जाय तो दोनों में तत्त्वों की एकता समान है। शरीर में अंशरूप ३३ और विश्व में विस्तृत ३३ देवता विराजमान हैं। यज्ञ का ध्वज यह आत्माग्नि ही है। यही पूर्ण हितकर्त्ता है। इसकी पूजा (त्रि-षधस्थे) तीन स्थानों में होती है—(क) मस्तिष्क, (ख) हृदय और (ग) पेट।

जो केवल पेट की पूजा करते हैं, वे गिरते हैं। इसके विपरीत, जो पेट के साथ ही मस्तिष्क के ज्ञान और हृदय की भक्ति से भी इसकी पूजा करते हैं, वे दुःख के पार हो जाते हैं। तीन स्थानों में, तीन धामों में, इस प्रकार इस अग्नि की उपासना आवश्यक है। कारण, यही आत्माग्नि मस्तिष्क में ज्ञानरूप कार्य करता है, हृदय में शान्ति अनुभव करता है और पेट में भक्षक बनकर अन्न-रसों को अपनाता है। यह अन्तःकरण में बैठता है, जो इसका मुख्य स्थान है।

**अग्निं वो देव यज्ययाग्नि प्रयत्यध्वरे।**
**अग्नि धीषु प्रथममग्निमर्वत्यग्नि क्षेत्राय साधसे॥**

(ऋ० ८।७१।१२)

अग्नि के विभिन्न रूप हैं, जैसे—

(क) यज्ञ-कुण्ड में प्रदीप्त अग्नि;

(ख) अध्वरों में प्रदीप्त अग्नि;

(ग) मनुष्यों की बुद्धि में स्थित अग्नि—जिसकी चेतना से मनुष्य धारणा-शक्ति के कार्य करता है;

(घ) सामुदायिक हलचल उत्पन्न करनेवाले तेजस्वी मनुष्यों में स्थित अग्नि—जिसके द्वारा जनता में श्रेष्ठ मार्ग पर अग्रसर होने की प्रवृत्ति देखी जाती है;

(ङ) क्षत्रियों में स्थित अग्नि—जिसके कारण वे अपने राज्य का विस्तार करते हैं।

इन पाँचों अग्नियों में प्रथम तीन ब्राह्मण से सम्बद्ध हैं और अवशिष्ट दो क्षत्रियों से। "हवन और याग से सम्बद्ध अग्नि मानव-बुद्धिगत ज्ञानाग्नि से सर्वथा भिन्न है।

**प्रथम मानव-अग्नि :**

**त्वामग्ने प्रथममायुमायवे देवा अकृण्वन्नहुषस्य विश्पतिं ।**
**इलामकृण्वन्मनुषस्य शासनीं पितुर्यत् पुत्रो ममकस्य जायते ।।**

(ऋ० १।३१।११)

अग्नि नहुष का सेनापति तथा अंगिरा का पुत्र है। पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी अग्नि को पहला मानव-प्राणी मानकर निम्नांकित प्रकार अर्थ करते हैं :

हे अग्ने ! मनुष्यों में नरपति-रूप तुम प्रथम मनुष्य को देवों ने मानव-जाति के लिए बनाया है और वाणी को मानव-जाति की शासन-कर्त्री बनाया है, जिसे उसकी धर्म-पत्नी भी मान सकते हैं।

**वैश्वानर अग्नि :**

**वैश्वानरो महिम्ना विश्वकृष्टिर्भरद्वाजेषु यजतो विभावा ।**
**शातवनेये शतिनीभिरग्निः पुरुणीथे जरते सूनृतावान् ।।**

(ऋ० १।५९।७)

अग्नि विश्वकृष्टिः अर्थात् सर्वमनुष्य-रूप है। वस्तुतः मानव-समाज ही यह अग्नि है। इसी का नाम वैश्वानर अग्नि है। 'विश्वनर' शब्द का अर्थ सर्वमनुष्य है। मानव-संघ में विद्यमान विशिष्ट तेज ही वैश्वानर अग्नि है। इसे 'राष्ट्रीय जीवनाग्नि' अथवा 'सामाजिक जीवनाग्नि' भी कह सकते हैं। इसकी पूजा उन यज्ञों में होती है, जिनमें (भरत्-वाज) अन्न और बल का संवर्धन करना होता है। संघ के द्वारा बल का संवर्धन स्वतः होता ही है। वैश्वानर (विश्वनर) में सब मनुष्यों की अभेद्य संघशक्ति की निश्चित कल्पना है। यही भाव विश्व-कृष्टि में भी है। इस शब्द का अर्थ श्रीसायणाचार्य और ऋषि दयानन्द ने इस प्रकार किया है :

**विश्वकृष्टिः कृष्टिरिति मनुष्य नाम ।**
**विश्वे सर्वे मनुष्याः यस्य स्वभूताः स तथोक्तः ।**

(ऋ०, सा० भा० १।५९।७)

**वैश्वानरः सर्वनेता । विश्वकृष्टिः विश्वाः सर्वाः कृष्टीः मनुष्यादिकाः प्रजाः ।**

(ऋ० दया० भा० १।५९।७)

सायण-भाष्य—कृष्टि मनुष्यवाचक शब्द है। सब मनुष्य, जिसके लिए अपने (निज) होते हैं, वह विश्वकृष्टि है।

दयानन्द-भाष्य—वैश्वानर सबका नेता है। विश्वकृष्टि सब प्रजाओं का संघ है।

दोनों ही भाष्यकारों के अनुसार सब प्रजाओं के अभेद्य संघ का नाम विश्व-कृष्टि —अग्नि है।

**प्रथम प्रवर्त्तक अग्नि :**

असच्च सच्च परमे व्योमन् दक्षस्य जन्मन्नदितेरुपस्थे ।
अग्निर्ह नः प्रथमजा ऋतस्य पूर्व आयुनि वृषभश्च धेनुः ॥

(ऋ० १०।५।७)

भौतिक अग्नि सृष्टि के पहले अव्यक्त था और सृष्टि होने पर व्यक्त हुआ । आकाश में यह सूर्य-रूप में स्थित है। यह हमसे (त्रित आप्त्य ऋषि से) पहले उत्पन्न हुआ है और यज्ञ के पहले अवस्थित था। पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी के अनुसार अग्नि पहला प्रवर्त्तक अर्थात् शासक है। यह मनुष्य में अवतीर्ण होने के पूर्व आयु में वृषभ-रूप में अर्थात् पशुरूप में था। तत्पश्चात् वही मनुष्य-रूप में प्राकट हुआ है (यह कथन उत्क्रांतिवाद का सूचक है।), यह मानव, पशु, पक्षी—सबमें विद्यमान है।

**वृद्ध नागरिक अग्नि :**

अधा हि विक्षवीड्योऽसि प्रियो नो अतिथिः ।
रण्वः पुरीव जूर्यः सूनुर्न त्रययाय्यः ॥

(ऋ० ६।२।७)

अग्नि प्रिय अतिथि और प्रजाओं में पूज्य है। जैसे नगर में वृद्ध पुरुष रमणीय होता है तथा पुत्र संरक्षणीय होता है उसी प्रकार इस शरीर-रूपी नवद्वार-पुरी में बहुत समय से रहनेवाला, सबसे प्राचीन पूर्वज होने से यह आत्मारूप अग्नि भी पूज्य है। यहाँ अग्नि की वृद्ध और बालक दोनों से तुलना कर विशेष बात यह बताई गई है कि यह आत्माग्नि स्वयं अशक्त है, अतः दूसरों की सहायता की अपेक्षा करता है, जैसे—वृद्ध मनुष्य यद्यपि पूज्य होता है तथापि तरुणों के साथ उसकी शक्ति का मुकाबला नहीं हो सकता। उसी प्रकार यद्यपि बालक सुकुमार होने से सबका प्यारा होता है तथापि तरुणों की अपेक्षा वह अशक्त होता है। अशक्त होने पर भी वृद्ध अपने अनुभव की शक्ति के कारण वंदनीय होता है और बालक सुकुमारता के कारण तथा सभी शक्तियों को बीजवत् अपने अन्दर धारण करने के कारण सबका प्यारा होता है। इसी प्रकार आत्मारूप अग्नि भी इस शरीर के जन्म से पहले विद्यमान था, अतः शरीर से वृद्ध है और उसकी सम्पूर्ण शक्तियों का विकास होनेवाला है, अतः वह बालकवत् ही है। आत्माग्नि अपना प्रत्येक कार्य अपनी शक्ति से इन्द्रियों द्वारा करवाता है, अतः इन्द्रियों की सहायता की अपेक्षा रहने के कारण वह वृद्ध बालकवत् दूसरे की सहायता चाहता है। अग्नि की चिनगारी छोटी होती है, अतः बालकवत् उसकी रक्षा आवश्यक है। अनुकूल परिस्थिति मिलने पर वही चिनगारी दावानल का रौद्ररूप धारण कर लेती है। इसी प्रकार 'आत्माग्नि' प्रारम्भ

में सब शक्तियों को बीजरूप में धारण करता है तथा योग्य माता-पिता, गुरु, वातावरण आदि मिलने पर उचित विकास के कारण वही पूज्य हो जाता है। यहाँ भौतिक अग्नि की आत्माग्नि से की गई तुलना उत्कृष्ट कोटि की है।

**प्रथम मननकर्त्ता अग्नि :**

**त्वं ह्यग्ने प्रथमो मनोताऽअस्या धियो अभवो दस्म होता।**
**त्वं सीं वृषन्नकृणोर्दुष्टरीतु सहो विश्वस्मै सहसे सहध्यै॥**

(ऋ० ६।१।१)

इस ऋचा में अग्नि का विशेषण 'मनोता' है। श्री सायणाचार्य इस शब्द का अर्थ "देवानां मनः यत्र ऊतं सम्बद्धं भवति तादृशः" अर्थात् देवों का मन जिसमें सम्बद्ध होता है, ऐसा करते हैं। 'देव' शब्द का अर्थ इन्द्रियगण भी होता है। मनरूप इन्द्रिय आत्मा से सम्बद्ध होती है, अतः मनोता अग्नि आत्मा है। इसमें मन आदि सारी इन्द्रियाँ सम्बद्ध रहती हैं।

**दूत अग्नि :**

**स मानुषीषु दूलभो विक्षु प्रावरिभर्त्यः।**
**दूतो विश्वेषां भुवत्॥**

(ऋ० ५।९।२)

अग्नि मानवी प्रजाओं में न दबनेवाला, अमर होने से सबका दूत माना गया है। जिस समय श्रद्धा-भक्ति से इसको कहा जाता है कि यह कार्य ऐसे करो, तो यह उस कार्य को शीघ्र ही कर देता है; अतः यह आज्ञाधारक दूत कहलाता है।

**विश्वे हि त्वा सजोषसो देवासो दूतमक्रत।**
**श्रुष्टी देव प्रथमो यज्ञियो भुवः॥**

(ऋ० ८।२३।१८)

अग्नि देवदूत है। दूत नाम सेवक का होता है। आज्ञाकारी सेवक आज्ञा के अनुसार शीघ्र ही कार्य करता है। पेट में स्थित अन्न को सम्पूर्ण इन्द्रियों तक पहुँचाने का दूत-कार्य अग्नि ही करता है। इसीलिए अनेक ऋचाओं में आत्माग्नि को दूत कहा गया है। इस ऋचा के प्रथम अर्थ में कहा है कि देवों ने इसे दूत बनाया है। इसके विपरीत दूसरे अर्धभाग में कहा है कि यह पहला पूज्य देव है। यहाँ शंका हो सकती है कि जो सबसे श्रेष्ठ देव है वह अन्य गौण देवों का दूत कैसे हो सकता है? इस शंका के समाधान के लिए राजा का उदाहरण लिया जा सकता है। राजा अपने राज्य में सबसे श्रेष्ठ होता है। उसके नीचे अनेक पदाधिकारी होते हैं। उनके अधीन सब प्रजाजन रहते हैं। उच्च पदस्थ होने पर भी वस्तुतः सभी पदाधिकारी प्रजा के

सेवक कहलाते हैं। प्रजा के सेवकों में जो सबसे बड़ा सेवक होता है वही राजा कहलाता है। इतिहास में वही राजा पूज्य माना गया है, जो प्रजा की सेवा सबसे अच्छी तरह से करता है। यह बात जैसे राष्ट्र के लिए सत्य है, उसी प्रकार अध्यात्म की दृष्टि से भी सत्य है। यहाँ आत्माग्नि राजा, महाराजा और सम्राट् है। इसीलिए वह सबसे बड़ा दूत, नौकर अथवा सेवक है।

**हस्त-पादहीन गुह्य अग्नि :**

**स जायत प्रथमः पस्त्यासु महो बुध्ने रजसो अस्य योनौ।**
**अपादशीर्षा गुहमानो अन्तायोयुवानो वृषभस्य नीडे॥**
**प्र शर्ध आर्तप्रथमं विपन्यं ऋतस्य योना वृषभस्य नीडे।**
**स्पार्हो युवा वपुष्यो विभावा सप्त प्रियासोऽजनयन्त वृष्णे॥**

(ऋ० ४।१।११-१२)

अग्नि सब देवों में अत्यन्त प्राचीन प्रथम देव है। यह महान् अन्तरिक्ष इसका स्थान है। हाथ, पैर, सिर आदि अवयवों से रहित यह अशरीरी और निराकार है तथा सबके अन्दर गुप्त या व्याप्त रहता है। बलवान् मनुष्य के अन्दर यह सम्मिश्रण का कार्य करता है। ऋत के मूल कारण में, बलवानों में प्रथम ज्ञानी को तेज और बल प्राप्त होता है। यह स्पृहणीय, प्राप्तव्य, युवादेहधारी तथा प्रभावशाली है।

**मर्त्यों में अमृत अग्नि :**

**अयं होता प्रथमः पश्यतेममिदं ज्योतिरमृतं मर्त्येषु।**
**अयं स जज्ञे ध्रुव आ निषत्तोऽमर्त्यस्तन्वा वर्धमानः॥**

(ऋ० ६।९।४)

अग्नि मर्त्य-धर्मा प्राणियों में अमर प्रकाश-रूप है। आत्मा की ज्योति-रूप इसी अग्नि का साक्षात्कार करना मनुष्य का कर्त्तव्य है। मानव अपने-आप को शरीर-रूप समझकर मरनेवाला न समझे प्रत्युत आत्मरूप से अपने-आप को अमर समझे—कारण, अजर, अमर और अजन्मा यह आत्मा जीर्ण होनेवाले, मरणधर्मा तथा पुनः-पुनः जन्म को प्राप्त होनेवाले शरीर के साथ बढ़ता हुआ प्रतीत होने पर भी बढ़ता नहीं, अपितु ध्रुव है।

**इन्द्रिय-शक्तियाँ आत्मा की दस बहनें हैं :**

**द्विर्यं पंच जीजनन्त्संवसानाः स्वसारो अग्निं मानुषीषु विक्षु॥**

(ऋ० ४।६।८)

इस अग्नि को दो गुना पाँच बहनें मानवी प्रजाओं में रहती हुई प्रकट करती हैं अर्थात् पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ-रूप दस बहनें इस शरीर में रहकर

आत्मरूप अग्नि को प्रकट करती हैं। अरणियों के घर्षण से जो अग्नि सिद्ध होता है वह भी दस अंगुलियों के घर्षण से ही होता है। अतः ये बहनें कहलाती हैं। इस ऋचा में 'स्वसार.' शब्द का प्रयोग हुआ है। 'स्व + सृ' शब्द का अर्थ बहन है, किन्तु इसका यौगिक अर्थ ( स्वंसरति ) अपने निज के प्रति जो जाती है, अथवा (स्वस्मात् सरति) 'अपने निज से जो चलती है' वह 'स्वसृ' है। अर्थात् जागृति की अवस्था में जो इन्द्रियाँ आत्मा से शक्ति लेकर बाहर जाती हैं और सुषुप्ति-अवस्था में इन्द्रियाँ बाहर से आकर आत्मा के अन्दर लीन हो जाती हैं, अतः ये सब इन्द्रिय-शक्तियाँ आत्मा की बहनें हैं, जो शरीर में आत्माग्नि को प्रकट करती हैं।

**देवों द्वारा प्रदीप्त अग्नि :**

> **मा नो अग्ने दुर्भृतये सचैषु देवेद्धेष्वग्निषु प्रवोचः।**
> **मा ते अस्मान् दुर्मतयो भृमाच्चिद्देवस्य सूनो सहसो नशन्त॥**
>
> (ऋ० ७।१।२२)

इस ऋचा में देवों द्वारा प्रदीप्त अग्नियों का उल्लेख है। यहाँ कौन-से अग्नि देवों के प्रयत्न से प्रदीप्त हुए हैं, इसका पता लगाना आवश्यक है। उपनिषदों में कहा है कि—

सूर्य भगवान् नेत्र-स्थान में आकर रह रहे हैं और दर्शनाग्नि को प्रदीप्त कर रहे हैं। अश्विनी देव नासिका-स्थान में प्राणाग्नि को प्रदीप्त कर रहे हैं। अग्नि वाक्-स्थान में बैठकर शब्दाग्नि को जला रहा है। शिश्न-स्थान में जल-देवियाँ बैठी हैं और वीर्याग्नि को प्रदीप्त कर रही हैं। नाभि-स्थान में मृत्युदेव आकर अपानाग्नि को उद्दीप्त कर रहा है। इसी प्रकार अन्यान्य देवता अन्यान्य इन्द्रिय-स्थानों में बैठकर अपने-अपने हवन-कुण्ड में अपने-अपने अग्नि को प्रदीप्त कर रहे हैं। ये सब अग्नि ( देव + इद्ध ) देवों द्वारा प्रदीप्त किये गये हैं। ऊपर लिखित ऋचा में भी देवों द्वारा प्रदीप्त इन्हीं अग्नियों का वर्णन है।

ऋग्वेद ३/५/३ के अनुसार सीधे मार्ग से जाने पर सिद्धि देनेवाला सच्चा मित्र और कर्मों का केन्द्र अग्नि मानवी प्रजाओं में देवों द्वारा स्थापित किया गया है। यह स्पृहणीय और पूज्य होकर उच्च स्थान में रहता है तथा विशेष ज्ञानी बुद्धियों का हवन करनेवाला है अर्थात् यह आत्माग्नि मानवी देह में हृदय से लेकर मस्तक तक जो स्थान है, वहीं निवास करता है। सच्चा मित्र होने के कारण यह सीधे मार्ग से चलता है तथा सभी कर्मों और सम्पूर्ण हलचलों का प्रेरक है। जिस प्रकार किरणों का केन्द्र सूर्य है, उसी प्रकार कर्मों का केन्द्र यह आत्माग्नि है। यह शरीर में सौ वर्ष निवास करके सैकड़ों कर्म करता है। इसीलिए इसको शतक्रतु कहते हैं। इसका 'स्वभाव-धर्म' ही कर्म है। अतः इसे क्रतु भी कहते हैं।

**सात संख्या का महत्त्व :**

ऋग्वेद ४।५८।३, ३।६।२ एवं ३।१।४ में क्रमशः अग्नि को सात हाथवाला, सप्तजिह्व और सात नदियों एवं सात ऋषियों से युक्त बताया गया है। शरीर में आत्माग्नि मध्य में स्थित है। इस उद्गम-स्थल से अहंकार, मन, श्रोत्र, स्पर्श, नेत्र, रसना और नासिका—ये सात प्रवाह चलते हैं। अहंकार की नदी घमण्ड के क्षेत्र से बह रही है। मन का नद मनन-प्रदेश को भिगो रहा है। श्रोत्र-नदी कानों के द्वारा प्रवाहित होकर शब्द-भूमि में बह रही है। स्पर्श-नदी चर्म-मार्ग से स्पर्श-प्रदेश में फैल रही है। नेत्र-नदी दृष्टि-मार्ग से दर्शन-क्षेत्र में प्रवाहित हो रही है। रसना-नदी रुचि के क्षेत्र से जिह्वा-स्थान में व्याप्त हो रही है। इसी प्रकार नासिका द्वारा सुवास के क्षेत्र में नासा-नदी प्रवाहित हो रही है। प्रत्येक नदी का क्षेत्र, जल और स्वभाव भिन्न-भिन्न है। ये सप्त नदियाँ आत्मा के स्थान से बह रही हैं। सुषुप्ति की अवस्था में ये सातों नदियाँ अन्तर्मुख होकर उल्टा बहने लग जाती हैं और आत्मा में मग्न होती हैं। किन्तु जाग्रत् अवस्था में आत्मा से बहिर्मुख होकर फिर बाहर प्रवाहित होकर जगत् में कार्य करने लग जाती हैं। इस प्रवाह के उलटा चलने का नाम सुषुप्ति और बाहर की ओर बहने का नाम जागृति है। प्रत्येक नदी के तट पर एक-एक अधिष्ठाता ऋषि है, जो वहाँ तप कर रहा है। ये सात ऋषि इस जीवन-रूपी महायज्ञ में यजन कर रहे हैं। जिस समय ये सातों अधिष्ठाता ऋषिगण थककर सो जाते हैं, उस समय तथा अन्य समय में भी इस देहरूपी सत्र में दो देव जागते हैं। इन दोनों का नाम प्राण अर्थात् श्वास और उच्छ्वास है। जन्म से मृत्यु-पर्यन्त ये श्वासोच्छ्वास-रूपी दो देव जाग्रत् रहकर पहरा देते हैं। इनके कारण ही इस सत्र अर्थात् शरीर-रूपी यज्ञभूमि का संरक्षण हो रहा है। आत्माग्नि को मध्य में रखकर ये सातों नदियाँ चारों ओर फैल रही हैं। यह आत्माग्नि प्रारम्भ में श्वेत और पश्चात् रक्तवर्ण होता है। यहाँ श्वेत वर्ण सत्त्वगुण और रक्तवर्ण रजोगुण का द्योतक है। प्रथमतः आत्म-बुद्धि में सात्त्विक भाव होते हैं, परन्तु जब वे भाव भोगों के साथ परिणत होते हैं तब रजोगुणमय होते हैं। आत्माग्नि के सात हाथ ये अहंकार, मन आदि ही हैं, जिनसे वह कार्य करता है। इन्हीं सात जिह्वाओं से वह आत्मा की घोषणा करता है। इन्हीं सात जल-प्रवाह के तट पर सात ऋषि तपस्या कर रहे हैं तथा ये ही सप्तरश्मि हैं, जो आत्मा-रूपी सूर्य की सात किरणें हैं। सात रत्नों को धारण करनेवाला अग्नि भी यही आत्माग्नि हैं। इनके सात रत्न भी पूर्वोक्त सात शक्तियाँ ही हैं। यही सात शक्तियाँ शरीर में मुख्य धन मानी गई हैं। अग्नि के रथ को ये सात घोड़े ही खींचते हैं। वस्तुतः सात ऋषि, सात किरण, सात अश्व, सात नदियाँ, सात प्रवाह, सात रत्न, सात धातु—ये सभी विभिन्न नाम पूर्वोक्त सात शक्तियों के ही वाचक हैं, जिन्हें अग्नि की सात बहनें कहा गया है।

वुहन्ति सप्तैकामुप द्वा पंच सृजतः।
तीर्थे सिंधोरधि स्वरे ॥

(ऋ० ८।७२।७)

एक गौ माता का सात दोहन कर रहे हैं। उनमें दो अन्य पाँचों को प्रेरित करते हैं। स्वर-युक्त सिन्धु के तीर्थ पर यह हो रहा है अर्थात् मन और अहंकार दोनों श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना और प्राण को प्रेरित करके आत्माग्नि का दोहन करते हैं। इस प्रकार के अनेक उदाहरण अलंकृत भाषा में आत्माग्नि की इन सात शक्तियों को प्रकट कर रहे हैं। हृदय-कन्दरा में जहाँ यह आत्माग्नि रहता है, वहीं से ही सत्य का स्रोत चलता है; अतः जो सत्य के ऊपर स्थिर रहनेवाले होते हैं, वे ही इसको प्राप्त करते हैं। जिस प्रकार नदी के प्रवाह के साथ उलटा जाने से नदी के उद्गम-स्थल तक पहुँच सकते हैं उसी प्रकार सत्य की नदी इससे शुरू होती है। अतः सत्य का आश्रय लेकर इस तक पहुँचा जा सकता है। देवत्व-प्राप्ति का आधार सत्य ही है।

**अनेक अग्नियों के साथ एक अग्नि :**

ऋग्वेद १।२६।१०, ३।२४।४, ६।१०।२, ५।६।६ में अनेक अग्नियों के साथ एक अग्नि का उल्लेख किया गया है। शरीर में आत्माग्नि के अतिरिक्त इन्द्रिय-रूप अग्नि का भी वर्णन किया गया है, जो अनेक हैं। प्रत्येक इन्द्रिय में एक-एक अग्नि-कुण्ड है और वहाँ उस-उस विषय का हवन हो रहा है। आँख के स्थानीय अग्नि में रूप का हवन होता है, कर्ण-स्थानीय अग्नि में शब्द का हवन, इसी प्रकार अन्यान्य इन्द्रियाग्नियों में अन्यान्य विषयों का हवन हो रहा है। आत्माग्नि-रूपी शरीर में ही ज्ञानाग्नि, दर्शनाग्नि और कोष्ठाग्नि आश्रय लेते हैं। इनमें से कोष्ठाग्नि अन्न का पचन करता है। दर्शनाग्नि रूपों को देखता है। ज्ञानाग्नि शुभाशुभ कर्मों को प्राप्त करता है। अग्नियों के तीन स्थान हैं—मुख में आहवनीयाग्नि, उदर में गार्हपत्याग्नि और हृदय में दक्षिणाग्नि। इस यज्ञ में आत्मा यजमान, मन ब्रह्मा, लोमादि पशु, धृति दीक्षा, ज्ञानेन्द्रियाँ यज्ञ-पात्र, कर्मेन्द्रियाँ हविर्द्रव्य, सिर कपाल, केश, दर्भ और मुख अन्तर्वेदि हैं। इस प्रकार शरीर में यह यज्ञ चल रहा है। यही शतसांवत्सरिक महासत्र है। यहाँ यज्ञपुरुष प्रत्यक्ष आत्माग्नि है, जो इस यज्ञ को अपने अन्दर देखेगा। इस प्रकार इन मन्त्रों में जो एक अग्नि के साथ अनेक अग्नियों का वर्णन किया गया है, वहाँ मुख्य अग्नि आत्माग्नि है और गौण अग्नि इन्द्रियाग्नि हैं।

**अग्नि के साथी अनेक देव :**

त्रीणि शता त्री सहस्राण्यग्निं त्रिंशच्च देवा नव चासपर्यन् ॥

(ऋ० ३।९।९)

तीन सहस्र तीन सौ तीस और नौ देव इस अग्नि की सेवा करते हैं। अग्नि के साथी इन देवों की संख्या विशेष महत्त्व रखती है। उक्त संख्या-वृद्धि का क्रम ३३ करोड़ तक है। स्थान-स्थान पर इस संख्या का वर्णन ब्राह्मण-ग्रन्थों में आया है। एक मुख्य देव है, जिसे आत्मदेव कहते हैं। इसके साथ अनेक देवता हैं। अन्य देवता प्राकृतिक शक्तियाँ हैं और एक देवता आत्मा है। आत्मा और प्रकृति, पुरुष और प्रकृति आदि शब्द इस भेद के द्योतक हैं। आत्मा की शक्तियाँ प्रकृति में जाकर सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, अग्नि, वायु, जल आदि अनेक देव बने हैं। इसका क्रम इस प्रकार है—(क) एकदेव—आत्मा। (ख) दो देव—आत्मा और प्रकृति, पुरुष-प्रकृति। (ग) तीन देव—पृथ्वी-स्थानीय अग्नि, अन्तरिक्ष-स्थानीय विद्युत् और द्यु-स्थानीय सूर्य। त्रिमूर्त्ति। (घ) ३३ देव—११ पृथ्वी पर, ११ अन्तरिक्ष में, ११ द्युलोक में रहनेवाले।

इन्हीं का विभाजन ३३३९ और इससे भी अधिक रूपों में किया गया है। सभी विभिन्न देव वस्तुतः एक ही अभिन्न देव के साथी हैं—

(क) एक अभिन्न देव—आत्मा।

(ख) अनेक विभिन्न देव—(अनात्मा) देवगण।

इन अनेक विभिन्न देवों में एक अभिन्न देव की ही शक्ति कार्य करती है, अतः एक अभिन्न देव 'आत्माग्नि' श्रेष्ठ और अनेक विभिन्न देव गौण हैं।

**परम आत्माग्नि :**

**अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम।**
**स नो मह्या अदितये पुनर्दात् पितरं च दृशेयं मातरं च॥**
(ऋ० १/२४/२)

अमर देवों में सर्वश्रेष्ठ अग्निदेव अर्थात् तेजस्वी परमात्मा ही सबको पुनः-पुनः प्रकृति में डालते हैं, जिससे सभी अपने माता-पिता को देखते हैं। इस ऋचा में अग्निदेव तेजस्वी परमात्मा हैं।

**उपसंहार :**

इस प्रकार अग्नि के विविध रूप ऋग्वेद में दृष्टिगत होते हैं। अग्नि की विशिष्टता प्रदर्शित करने के लिए अनेक उपमाओं का आश्रय लिया गया है। सभी विशेषण गुणबोधक हैं, जिससे अग्नि का स्वरूप समझने में सहायता मिलती है।

इन्द्र, वरुण, मित्र, सविता, अश्विनी, भग, पूषा, ब्रह्मणस्पति, सोम, मरुत, विष्णु आदि देवताओं के साथ भी अनेकानेक ऋचाओं में अग्नि की स्तुति एवं प्रशंसा की गयी है। सैकड़ों ऋक् एवं ऋगंश संभवतः विषयों को दृढ़ करने के लिए तथा जटिल संदर्भों को बोधगम्य बनाने के लिए कई बार दुहराये भी गये हैं।

## तृतीय अध्याय

# उपमान : दैविक, प्राकृतिक, सामाजिक एवं भावात्मक

ऋग्वेद के अग्निसूक्तों की ४८९ ऋचाओं में ६६२ उपमानों का प्रयोग हुआ है। उपमान दैविक, प्राकृतिक, सामाजिक एवं भावात्मक विषयों से सम्बद्ध हैं, जिनका क्रमिक विवरण इस प्रकार है :

**दैविक उपमान :**

देवताओं से सम्बद्ध उपमान दैविक उपमान कहलाते हैं। इनमें अग्नि की तुलना अन्य देवताओं से की गई है। दैविक उपमान कुल १०८ हैं। देवताओं में सबसे अधिक उपमान सूर्य से सम्बद्ध हैं, जिनकी संख्या ७३ है। सूर्यः, स्वः, सूरः, सविता, मित्रः, भगः, दिवः, देवः, अजः, तरणिः, घृणा, घृणीवान्, असुरः, वसु, यह्व, ततरुपः, चक्षणिः, महिव्रतं, औशिजः, उषः-जारः, सूर्यरश्मयः, सूर्य-चक्षुः, दिवः-शिशु, दिवः-ज्योतिः, द्यां-परिज्मानं, दिवि-रुक्मं, उरुव्यञ्चम्, अर्वते-अंशा और तोदो अध्वन् —इन २८ सूर्यवाचक शब्दों का प्रयोग उपमान के रूप में हुआ है; जैसे—

**सूर्यः :**

इन्द्राग्नी शतदाव्यश्वमेधे सुवीर्यम् ।
क्षत्रं धारयतं बृहद् दिवि सूर्यमिवाजरम् ॥
(ऋ० ५।२७।६)

श्यावो न यस्य पनयन्त्यभ्वं भासांसिवस्ते सूर्यो न शुक्रः
(ऋ० ६।४।३)

आ सूर्यो न भानुमद्भिरर्कैरग्ने ततन्थ रोदसी विभासा ।
(ऋ० ६।४।६)

मध्ये होता दुरोणे बर्हिषो राळग्निस्तोदस्य रोदसी यजध्यै ॥
अयं स सूनुः सहस ऋतावा दूरात्सूर्यो न शोचिषा ततान ॥
(ऋ० ६।१२।१)

प्र प्रायमग्निर्भरतस्य शृण्वे वियत्सूर्यो न रोचते बृहद्भाः ॥
(ऋ० ७।८।४)

स त्वमग्ने विभावसुः सृजन्त्सूर्यो न रश्मिभिः । शर्धन्तमांसि जिघ्नसे ॥
(ऋ० ८।४३।३२)

पदं देवस्य मीळ्हुषोऽनाधृष्टाभिरूतिभिः ।
भद्रा सूर्य इवोपदृक् ॥
(ऋ० ८।१०२।१५)

अग्नेरनीकं बृहतः सपर्यं दिवि शुक्रं यजतं सूर्यस्य ॥
(ऋ० १०।७।३)

धृतेनाहुत उर्विया वि पप्रथे सूर्य इव रोचते सर्पिरासुतिः
(ऋ० १०।६९।२)

स्वः :

नि यं दधुर्मनुष्यासु विक्षु स्वर्ण चित्रं वपुषे विभवम् ।
(ऋ० १।१४८।१)

दा नो अग्ने बृहतो दाः सहस्रिणो दुरो न वाजं श्रुत्या अपा वृधि ।
प्राची द्यावापृथिवी ब्रह्मणा कृधि स्वर्ण शुक्रमुषसो वि दिद्युतुः ॥
( ऋ० २।२।७ )

स इधान उषसो राम्या अनु स्वर्ण दीदेदरुषेण भानुना ॥
(ऋ० २।२।८)

अस्माकं द्युम्नमधि पञ्चकृष्टिषूच्चा स्वर्ण शुशुचीतदुष्टरम्
(ऋ० २।२।१०)

आ यः स्वर्ण भानुना चित्रो विभात्यर्चिषाअञ्जानो अजरैरभि ।
(ऋ० २।८।४)

एभिर्नो अर्कैर्भवा नो अर्वाङ् स्वर्ण ज्योतिः ।
अग्ने विश्वेभिः सुमना अनीकैः ॥
(ऋ० ४।१०।३)

स्वर्ण वस्तोरुषसामरोचि यज्ञं तन्वाना उशिजो न मन्म ।
अग्निर्जन्मानि देव आ वि विद्वान्द्रवद्दूतो देवयावा वनिष्ठः ॥
(ऋ० ७।१०।२)

सूरः :

रयिर्न चित्रा सूरो न संदृगायुर्न प्राणो नित्यो न सूनुः ॥
(ऋ० १।६६।१)

आ यः पुरं नार्मिणीमदीदेदत्यः कविर्नभन्यो नार्वा ।
सूरो न रुरुक्वाञ्छतात्मा ॥
(ऋ० १।१४९।३)

सूरो न हि द्युता त्वं कृपा पावक रोचसे ।
(ऋ० ६।२।६)

सूरो न यस्य दृशतिररेपा भीमा यदेति शुचतस्त आ क्षीः
(ऋ० ६।३।३)

दिवो न ते तन्यतुरेति शुष्मश्चित्रो न सूरः प्रति चक्षि भानुम् ॥
(७।३।६)

सविता :

ऊर्ध्व ऊ षु ण ऊतये तिष्ठा देवो न सविता ।
(ऋ० १।३६।१३)

देवो न यः सविता सत्यमन्मा क्रत्वा निपाति वृजनानि विश्वा ।
(ऋ० १।७३।२)

उद्यंयमीति सवितेव बाहू उभे सिचौ यतते भीम ऋञ्जन् ।
(ऋ० १।९५।७)

अमूरो होता न्यसादि विक्ष्वग्निर्मन्द्रो विदथेषु प्रचेताः ।
ऊर्ध्वं भानुं सवितेवाश्रेन्मेतेव धूमं स्तभायदुप द्याम् ॥
(ऋ० ४।६।२)

**मित्र :**

स हि क्रतुः स मर्यः स साधुर्मित्रो न भूदद्भुतस्य रथीः ।
(ऋ० १।७७।३)

मित्र इव यो दिधिषाय्यो भूद्देव आदेवे जने जातवेदाः ।
(ऋ० २।४।१)

अग्निं देवासो मानुषीषु विक्षु प्रियं धुः क्षेष्यन्तो न मित्रम् ।
(ऋ० २।४।३)

अधा मित्रो न सुधितः पावकोऽग्निर्दीदाय मानुषीषु विक्षु ।
(ऋ० ४।६।७)

अञ्जन्ति मित्रं सुधितं न गोभिर्यद्दम्पती समनसा कृणोषि ।
(ऋ० ५।३।२)

त्वं असुर्यं मारुहत्क्राणा मित्रो न यज्ञियः ॥
(ऋ० ५।१०।२)

यं मित्रं न प्रशस्तिभिर्मर्तासो दधिरे पुरः ॥
(ऋ० ५।१६।१)

त्वं हि क्षैतवद्यशोऽग्ने मित्रो न पत्यसे ।
(ऋ० ६।२।१)

अग्ने मित्रो न बृहत ऋतस्यासि क्षत्ता वामस्य देव भूरेः ॥
(ऋ० ६।१३।२)

अमूरः कविरदितिर्विवस्वान्त्सुसंसन्मित्रो अतिथिः शिवो नः ।
चित्रभानुरुषसां भात्यग्रेऽपां गर्भः प्रस्व आ विवेश ॥
(ऋ० ७।९।३)

यं जनासो हविष्मन्तो मित्रं न सर्पिरासुतिम् ॥
(ऋ० ८।७४।२)

तमर्वन्तन्न सानसिं गृणीहि विप्रशुष्मिणम् । मित्रं न यातयञ्जनम्
(ऋ० ८।१०२।१२)

द्युभिर्हितं मित्रमिव प्रयोगं प्रत्नमृत्विजमध्वरस्य जारम् ।
बाहुभ्यामग्निमायवोऽजनन्त विक्षु होतारं न्यसादयन्त ॥
(ऋ० १०।७।५)

मित्रश्चिद्धि ष्मा जुहुराणो देवाञ्छ्लोको न यातामपि वाजो अस्ति ।
(ऋ० १०।१२।५)

एवाग्निमर्तैः सह सूरिभिर्वसुः ष्टवे सहसः सूनरो नृभिः ।
मित्रासो न ये सुधिता ऋतायवो द्यावो न द्युम्नैरभि सन्ति मानुषान् ॥
(ऋ० १०।११५।७)

**भगः :**

आदिद्धोतारं वृणते दिविष्टिषु भगमिव पपृचानास ऋञ्जते ।
(ऋ० १।१४१।६)

तं त्वा नु नव्यं सहसो युवन्वयं भगं न कारे महिरत्नधीमहि ।
(ऋ० १।१४१।१०)

आदीं भगो न हव्यः समस्मदा बोडहुर्न रश्मीन्त्समयंस्त सा रथिः ।
(ऋ० १।१४४।३)

अग्निर्नेता भग इव क्षितीनां दैवीनां देव ऋतुपा ऋतावा ।
(३।२०।४)

विहव्यमग्निरानुषग्भगो न वारमृण्वति ॥
(ऋ० ५।१६।२)

उदीरय पितरा जार आ भगमियक्षति हर्यतो हृत्त इष्यति ।
(ऋ० १०।११।६)

**दिवः :**

दिवो न यस्य रेतसा बृहच्छोचन्त्यर्चयः ॥
(ऋ० ५।१७।३)

दिवो न यस्य विधतो नवीनोद्वृषा रुक्ष ओषधीषु नूनोत्
(६।३।७)

**देवः :**

देवो न यः पृथिवीं विश्वधाया उपक्षेति हितमित्रो न राजा ॥
(ऋ० १।७३।३)

**अजः :**

अजो न क्षां दाधार पृथिवीं तस्तम्भ द्यां मन्त्रेभिः सत्यैः ।
(ऋ० १।६७।२)

**तरणिः :**

विश्वो विहाया अरतिर्वसुद्धे हस्ते दक्षिणे तरणिर्न शिश्रथ-
च्छ्रवस्यया न शिश्रथत् ।
(ऋ० १।१२८।६)

**घृणा :**

घृणा न यो ध्रजसा पत्मना यन्ना रोदसी वसुना दं सुपत्नी
(ऋ० ६।३।७)

**घृणीवान् :**

अयमुष्य प्र देवयुर्होता यज्ञाय नीयते ।
रथो न योरभीवृतो घृणीवाञ्चेतति त्मना ॥ (ऋ० १०।१७६।३)

**असुर :**

यदी घृतेभिराहुतो वाशीमग्निर्भरत उच्चाव च ।
असुर इव निर्णिजम् ॥ (ऋ० ८।१९।२३)

**वसु :**

वसु न चित्रमहसं गृणीषे वामं शेवमतिथिमद्विषेण्यम्
(ऋ० १०।१२२।१)

**यह्व :**

तमिद्यह्वं न रोदसी परि श्रवो बभूवतुः ॥
(ऋ० ५।१६।४)

**ततरुष: :**

आ यस्मिन्त्वे स्वपाके यजत्र यक्षद्राजन्त्सर्वतातेव नु द्यौः ।
त्रिषधस्थस्ततरुषो न जंहो हव्या मघानि मानुषा यजध्यै ।
(ऋ० ६।१२।२)

**चक्षणि :**

स नो विभावा चक्षणिर्न वस्तोरग्निर्वन्दारु वेद्यश्चनो धात् ।
(ऋ० ६।४।२)

**महिव्रत :**

तं वो विं न द्रुषदं देवमन्धस इन्दुं प्रोथन्तं प्रवपन्तमर्णवम् ।
आसा वह्निं न शोचिषा विरप्शिनं महिव्रतं न सरजन्तमध्वनः ॥
(ऋ० १०।११५।३)

**औशिज: :**

आ सूर्यो न भानुमद्भिरर्कैरग्ने ततन्थ रोदसी वि भासा ।
चित्रो नयत्परि तमांस्यक्तः शोचिषा पत्मन्नौशिजो न दीयन् ।
(ऋ० ६।४।६

**उष:-जार: :**

शुक्रः शुशुक्वाँ उषो न जारः पप्रा समीची दिवो न ज्योतिः ।
(ऋ० १।६९।१)

उषो न जारो विभावोस्रः संज्ञात रूपश्चिकेतदस्मै ।
(ऋ० १।६६।५)

उषो न जारः पृथु पाजो अश्रेद्दविद्युतद्दीद्यच्छोशुचानः ॥
(ऋ० ७।१०।१)

**सूर्ये समयः :**

आ सूर्ये न रश्मयो ध्रुवासो वैश्वानरे दधिरेऽग्ना वसूनि ।
( ऋ० १।५९।३ )

आ ते चिकित्र उषसामिवेतयोऽरेपसः सूर्यस्येव रश्मयः ॥
( ऋ० १०।९१।४ )

**सूर्ये चक्षुः :**

अभ्यक्षि सद्म सदने पृथिव्या अश्रायि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः ।
(ऋ० ६।११।५)

**दिवः शिशुम् :**

तमर्वन्तं न सानसिमरुषं न दिवः शिशुम् मर्मृज्यन्ते दिवेदिवे ॥
( ऋ० ४।१५।६)

**दिवःज्योतिः :**

शुक्रः शुशुक्वाँ उषो न जारः पप्रा समीची दिवो न ज्योतिः ।
( ऋ० १।६६।१)

**द्यां परिज्मानं :**

परिज्मानमिव द्यां होतारं चर्षणीनाम् ।
शोचिष्केशं वृषणं यमिमा विशः प्रावन्तु जूतये विशः ॥
(ऋ० १।१२७।२)

**दिवि रुक्मं उरु व्यञ्चं :**

गविष्ठिरो नमसा स्तोममग्नौ दिवीव रुक्ममुरुव्यञ्चमश्रेत्
( ऋ० ५।१।१२ )

**अर्वते अंशा :**

अर्हन्ता चित्पुरो दधेंऽशेव देवावर्वते ॥
( ऋ० ५।८६।५ )

**तोदः :**

पुरु त्वा दाश्वान्वोचेऽरिरग्ने तव स्विदा ।
तोदस्येव शरण आ महस्य ॥
( १।१५०।१ )

तेजिष्ठा यस्यारतिर्वनेराट् तोदो अध्वन्न वृधसानो अद्यौत् ।
(ऋ० ६।१२।३)

**वायु :**

वायु से सम्बद्ध उपमान २० हैं । वातः, वायुः, मरुतां, स्वना, अह्नोथो, परिज्म, मारुतं शर्धः, मरुतां-प्रयाः, मरुतां स्वनः, वात प्रमियः, वातस्य पत्मन्, वातस्वनं—ये १२ वायु-वाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं; जैसे—

**वातः :**

हिरण्यकेशो रजसो विसारेऽहिर्धुनिर्वात इव ध्रजीमान् ।
( ऋ० १।७६।१ )

वि यस्य ते ज्रयसानस्याजर धक्षोर्न वाताः परिसन्त्यच्युताः ।
(ऋ० १०।११५।४)

वातस्याश्वो वायोः सखाथ देवेषितो मुनिः ॥
( १०।१३६।५ )

**वायुः :**

नितिक्ति यो वारणमन्नमत्ति वायुर्न राष्ट्र्यत्येत्यक्तून् ।
( ऋ० ६।४।५ )

इन्द्रं न त्वा शवसा देवता वायुं पृणन्ति राधसा नृतमाः ।
( ऋ० ६।४।७ )

स जायमानः परमे व्योमन्वायुर्न पाथः परि पासि सद्यः ॥
( ऋ० ७।५।७ )

**मरुतो :**

ऋत्वा यदस्य तविषीषु पृञ्चतेऽग्नेरवेण मरुतां न भोज्ये-
षिराय न भोज्या ॥ (ऋ० १।१२८।५)

यजस्व होतरिषितो यजीयानग्ने बाधो मरुतां न प्रयुक्ति ।
(ऋ० ६।११।१)

**स्वना :**

स्वना न यस्य भामासः पवन्ते रोचमानस्य बृहतः सुदिवः ॥
( ऋ० १०।३।५ )

**अघ्रोघो :**

अघ्रोघो न द्रविता चेतति त्मन्नमर्त्योऽवर्त्र ओषधीषु ॥
(ऋ ६।१२।३ )

**परिज्म :**

ऋत्वा हि द्रोणे अज्यसेऽग्ने वाजी न कृत्व्यः ।
परिज्मेव स्वधा गयोऽत्यो न ह्वार्यः शिशुः ॥
( ६।२।८ )

त्वं भगो न आ हि रत्नमिषे परिज्मेव क्षयसि दस्मवर्चाः ।
(ऋ० ६।१३।२)

**मारुतं शर्धः :**

स हि शर्धो न मारुतं तुविष्वणिरप्नस्वतीषूर्वरास्विष्टनिरार्तना-
स्विष्टनिः ॥
( ऋ० १।१२७।६ )

ये हत्ये ते सहमाना अयासस्त्वेषासो अग्ने अर्चयः चरिन्त ॥
श्येनासो न दुवसनासो अर्थं तुविष्वणसो मारुतं न शर्धः ॥
(ऋ० ४।६।१०)

शर्धो वा यो मरुतां ततक्ष ऋमुर्न त्वेषो रथसानो अद्यौत् ।
( ६।३।८ )

**मरुतां प्रयाः ।**

अमित्रायुधो मरुतामिव प्रयाः प्रथमजा ब्रह्मणो विश्वमिद् विदुः ॥
(ऋ० ३।२९।१५)

**मारुतं स्वनः :**

न यो वराय मरुतामिव स्वनः सेनेव सृष्टा दिव्या यथाशनिः ।
(ऋ १।१४३।५ )

**वातप्रमिय :**

सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः ।
घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः ।
(ऋ० ४।५८।७)

**वातस्य पत्मन् :**

वातस्य पत्मन्नीडिता दैव्या होतारा मनुषः । इमं नो यज्ञमा गतम् ।
(ऋ० ५।५।७)

**वात स्वनं :**

हुवे वातस्वनं कविं पर्जन्यक्रन्द्यं सहः । अग्निं समुद्रवाससम् ।
(ऋ० ८।१०२।५)

**इन्द्र (इन्द्रं) :**

इन्द्रं से सम्बद्ध उपमान ४ हैं :

इन्द्रं न त्वा शवसा देवता वायुं पृणन्ति राधसा नृतमाः ॥
(ऋ० ६।४।७)

इन्द्रस्येव प्र तवसस्कृतानि वन्दे दारुं वन्दमानो विवक्मि ।
(ऋ० ७।६।१)

अश्वमिङ्गां रथप्रां त्वेषमिन्द्रं न सत्पतिम् ।
यस्य श्रवांसि तूर्वथ पन्यम्पन्यञ्च कृष्टयः ॥
(ऋ० ८।७४।१०)

तमुस्रामिन्द्रं न रेजमानमग्निं गीर्भिर्नमोभिरा कृणुध्वम् ।
(ऋ० १०।६।५)

**देव :**

देवं—देवता से सम्बद्ध उपमान ३ हैं—

यच्चिद्धि शश्वता तना देवन्देवं यजामहे । त्वे इद्धूयते हविः ।
(ऋ० १।२६।६)

यथा विप्रस्य मनुषो हविर्भिर्देवाँ अयजः कविभिः कविः सन् ।
एवा होतः सत्यतर त्वमद्याग्ने मन्द्रया जुह्वा यजस्व ॥
(ऋ० १।७६।५)

यथायज ऋतुभिर्देव देवानेवा यजस्व तन्वं सुजात ॥
(ऋ० १०।७।६)

**उषा (उषसः) :**

उषा से सम्बद्ध ४ उपमान हैं :

पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन्रुरुच उषसो न भानुना ।
(ऋ० ६।१५।५)

एतेत्ये वृथगग्नय इद्धासः सदृक्षत । उषसामिव केतवः ॥
(ऋ० ८।४३।५)

आ ते चिकित्र उषसामिवेतयोऽरेपसः सूर्यस्येव रश्मयः ॥
(ऋ० १०।९१।४)

तव श्रियो वर्ष्यस्येव विद्युतश्चित्राश्चिकित्र उषसां न केतवः ।
(ऋ० १०।९१।५)

**वरुण (वरुणः) :**

वरुणवाचक उपमान २ हैं :

य एको वस्वो वरुणो न राजति ॥
(ऋ० १।१४३।४)

विश्वं स वेद वरुणो यथा धिया स यज्ञियो यजतुयज्ञियाँ ऋतून् ।
(ऋ० १०।११।७)

**ऋभु (ऋभुः) :**

ऋभुवाचक उपमान १ है—

शर्धो वा यो मरुतां ततक्ष ऋभुर्न त्वेषो रभसानो अद्यौत् ।
(ऋ० ६।३।८)

**मित्र, वरुण, मरुत, इन्द्र :**

एक ऋचा में मित्र, वरुण, मरुत और इन्द्र—चारों देवों को एक साथ उपमान के रूप में प्रयुक्त किया गया है :

आ भन्दमाने उषसा उपाके उत स्मयेते तन्वा विरूपे ।
यथा नो मित्रो वरुणो जुजोषदिन्द्रो मरुत्वाँ उत वा महोभिः
(ऋ० ३।४।६)

**प्राकृतिक उपमान :**

प्राकृतिक वस्तुओं से सम्बद्ध उपमान प्राकृतिक उपमान कहलाते हैं। इनमें अग्नि की तुलना आकाश, पृथ्वी, पर्वत, समुद्र आदि प्राकृतिक वस्तुओं से की गई

है। प्राकृतिक उपमान ३०८ हैं। इनका अन्तर्विभाजन इस प्रकार किया गया है—(१) जड़-जगत्, (२) जीव-जगत्, (३) सामाजिक उपकरण।

**जड़-जगत् : द्युस्थानीय उपमान :**

**आकाश :**

आकाश से सम्बद्ध उपमान ७ हैं। द्योः, द्यावो, दिवः—इन तीन आकाश-वाचक पदों का प्रयोग किया गया है, जैसे :

**द्यौ :**

ऋतस्य देवा अनुव्रता गुर्भुवत्परिष्टिर्द्यौर्न भूम ॥

(ऋ० १।६५।२)

स होता विश्वं परि भूत्वध्वरं तमु हव्यैर्मनुषऋञ्जते गिरा।
हिरिशिप्रो वृधसानासु जर्भुरद्द्यौर्न स्तभिश्चितयद्रोदसी अनु ॥

(ऋ० २।२।५)

कृष्णाध्वा तपूरण्वश्चिकेत द्यौरिव स्मयमानो नभोभिः ॥

(ऋ० २।४।६)

ऋतावानं विचेतसं पश्यन्तो द्यामिव स्तृभिः ॥
विश्वेषामध्वराणां हस्कर्तारं दमेदमे ॥

(ऋ० ४।७।३)

**द्यावो :**

मित्रासो न ये सुधिता ऋतायवो द्यावो न द्युम्नैरभि सन्ति मानुषान्

(ऋ० १०।११५।७)

**दिव :**

दिव इवेदरतिर्मानुषा युगा क्षपो भासि पुरुवार संयतः ॥

(ऋ० २।२।२)

यथायजो होत्रमग्ने पृथिव्या यथा दिवो जातवेदश्चिकित्वान्।
एवानेन हविषा यक्षि देवान्मनुष्वद्यज्ञं प्र तिरेममद्य ॥

(ऋ० ३।१७।२)

**बादल**—बादल से सम्बद्ध उपमान ७ हैं। द्योः, दिवः, नभः, सानु, मिहं, पर्जन्यक्रन्द्यं, वृष्टिः—ये ७ मेघवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं; जैसे—

**द्यौः :**

अक्रन्ददग्निः स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद्वीरुधः समञ्जन्

(ऋ० १०।४५।४)

**दिवः :**

प्र ते दिवो न स्तनयन्ति शुष्माः ॥

(ऋ० ४।१०।४)

**नभः :**

नभो न रूपं जरिमा मिनाति पुरा तस्या अभिशस्तेरधीहि ।

(ऋ० १।७१।१०)

**सानु :**

अत्यो न पृष्ठं प्रुषितस्य रोचते दिवो न सानु स्तनयन्नचिक्रवत्

(ऋ० १।५८।२)

**मिहं :**

अमी च ये मघवानो वयं च मिहं न सूरो अतिनिष्टतन्युः ।

(ऋ० १।१४१।१३)

**पर्जन्यक्रन्द्यं :**

हुवे वातस्वनं कविं पर्जन्यक्रन्द्यं सहः । अग्निं समुद्रवाससम् ।

(ऋ० ८।१०२।५)

**वृष्टिः :**

इयं वामस्य मन्मन इन्द्राग्नी पूर्व्यस्तुतिः अभ्राद्वृष्टिरिवाजनि ॥

(ऋ० ७।९४।१)

**कड़क (तन्यतुः) :**

कड़क से सम्बद्ध उपमान दो हैं—

उतो ते तन्यतुर्यथा स्वानो अर्तत्मना दिवः ॥

(ऋ० ५।२५।८)

दिवो न ते तन्यतुरेति शुष्मश्चित्रो न सूरः प्रतिचक्षिभानुम्

(ऋ० ७।३।६)

**विद्युत् (विद्युतः) :**

विद्युत् से सम्बद्ध उपमान ४ हैं—

बृहन्त इद्भानवो भाऋजीकमग्निं सचन्त विद्युतो न शुक्राः ।

(ऋ० ३।१।१४)

तव त्ये अग्ने अर्चयो भ्राजन्तो यन्ति धृष्णुया ।

परिज्मानो न विद्युतः स्वानो रथो न वाजयुः ॥

(ऋ० ५।१०।५)

धायोभिर्वा यो युज्येभिरर्कैर्विद्युन्न दविद्योत्स्वेभिः शुष्मैः ॥

(ऋ० ६।३।८)

तव श्रियो वर्ष्यस्येव विद्युतश्चित्राश्चिकित्र उषसां न केतवः ।

(ऋ० १०।९१।५)

**वज्र :**

वज्र से सम्बद्ध उपमान ३ हैं । अशनिः और पव्य—ये दो वज्रवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**अशनिः :**

न यो वराय मरुतामिव स्वनः सेनेव सृष्टा दिव्या यथाशनिः ।

(ऋ० १।१४३।५)

अध जिह्वा पापतीति प्र वृष्णो गौषुयुधो नाशनिः सृजाना ।
शूरस्येव प्रसितिः क्षातिरग्नेर्दुर्वर्तुर्भीमो दयते वनानि ।।

(ऋ० ६।६।५)

**पव्य :**

पव्येव राजन्नघशंसमजर नीचा नि वृश्चवनिनं न तेजसा ।

(ऋ० ६।८।५)

**छाया (छाया) :**

छायावाचक उपमान २ हैं :

छायेव विश्वं भुवनं सिसक्ष्या पप्रिवान् रोदसी अन्तरिक्षम् ।

(ऋ० १।७३।८)

उपच्छायामिव घृणेरगन्म शर्मतेवयम् । अग्ने हिरण्यऽसंदृशः ।।

(ऋ० ६।१६।३८)

**सूर्योदय (सवितुः, सवं) :**

एक ऋचा में सूर्योदयवाचक उपमान का प्रयोग हुआ है; जैसे—

आ सवं सवितुर्यथा भगस्येव भुजि हुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ।

(ऋ० ८।१०२।६)

**पृथ्वी-स्थानीय उपमान**

**पृथ्वी :**

पृथ्वीवाचक उपमान ४ हैं । क्षितिः, क्षामा, पृथिव्याः, भूम—ये ४ पृथ्वी-वाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं ।

**क्षितिः :**

पुष्टिर्न रण्वा क्षितिर्न पृथ्वी गिरिर्न भुज्म क्षोदो न शंभु ।।

(ऋ० १।६५।३)

**क्षामा :**

क्षामेव विश्वा भुवनानि यस्मिन्त्संसौभगानि दधिरे पावके ।

(ऋ० ६।५।२)

**पृथिव्याः :**

यथायजो होत्रमग्ने पृथिव्या यथादिवो जातवेदश्चिकित्वान् ।
एवानेन हविषा यक्षि देवान् मनुष्वद् यज्ञं प्रतिरेममद्य ॥

(ऋ० ३।१७।२)

**भूम :**

स मुदा काव्या पुरु विश्वं भूमेव पुष्यति देवो देवेषु यज्ञियो नभन्तामन्यके समे ॥

(ऋ० ८।३९।७)

**पर्वत (गिरिः) :**

पर्वतवाचक उपमान १ है :

पुष्टिर्न रण्वा क्षितिर्न पृथ्वी गिरिर्न भुज्म क्षोदो न शंभु ॥

(ऋ० १।६५।५)

**गुहा :**

गुहावाचक उपमान १ है :

बृहन्त इद्भानवो भाऋजीकमग्निं सचन्त विद्युतो न शुक्राः ।
गुहेव वृद्धं सदसि स्वे अन्तरपार ऊर्वे अमृतं दुहानाः ॥

(ऋ० ३।१।१४)

**समुद्र (समुद्रं) :**

समुद्रवाचक उपमान १ है :

अग्निं विश्वा अभि पृक्षः सचन्ते समुद्रं न स्रवतः सप्त यह्वीः ।

(ऋ० १।७१।७)

**तरङ्ग (ऊर्मयः) :**

तरङ्गवाचक उपमान ४ हैं :

विभक्तासि चित्रभानो सिन्धोरूर्मा उपाक आ ।

(ऋ० १।२७।६)

सिन्धोरिव प्रस्वनितास ऊर्मयोऽग्नेर्भ्राजन्ते अर्चयः ॥

(ऋ० १।४४।१२)

मा नः समस्य दूढ्यः परिद्वेषसो अंहतिः । ऊर्मिर्न नावमा वधीत् ।

(ऋ० ८।७५।९)

दुष्टरा यस्य प्रवणे नोर्मयो धिया वाजं सिषासतः ॥

(ऋ० ८।१०३।११)

**जल :**

जलवाचक उपमान ८ हैं । वा, आपः, पाथः, उद्न, उदन्याः-धारा, क्षोदः : ये ६ जलवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**वाः :**

आ यो वना तातृषाणो न भाति वार्ण पथा रथ्येव स्वानीत् ।
कृष्णाध्वा तपू रण्वश्चिकेत द्यौरिव स्मयमानो नभोभिः ॥
( २।४।६ )

यदुस्त्रियाणामप वारिव व्रन्पाति प्रियं रुपो अग्रं पदं वेः ॥
(ऋ० ४।५।८)

**आपः :**

सद्यो जात ओषधीभिर्ववक्षे यदी वर्धन्ति प्रस्वो घृतेन ।
आप इव प्रवता शुम्भमाना उरुष्यदग्निः पित्रोरुपस्थे ॥
(ऋ० ३।५।८)

अस्मै तिस्रो अव्यथ्याय नारीर्देवायदेवीर्दिधिषन्त्यन्नम् ।
कृता इवोप हि प्रसर्स्रे अप्सु स पीयूषं धयति पूर्वसूनाम् ॥
(ऋ० २।३५।५)

**पाथः :**

तमुक्षमाणं रजसि स्व आ दमे चन्द्रमिव सुचं ह्वार आ दधुः ।
पृश्न्याः पतरं चितयन्तमक्षभिः पाथो न पायुं जनसी उभे अनु ॥
(ऋ० २।२।४)

**उद्न :**

विश्वेत्स धीभिः सुभगो जनाँ अति द्युम्नैरुद्न इव तारिषत् ॥
(ऋ० ८।१९।१४)

**उदन्या-धारा :**

विश्वा उत त्वया वयं धारा उदन्या इव । अति गाहेमहि द्विषः ॥
(ऋ० २।७।३)

**क्षोदः :**

पुष्टिर्न रण्वा क्षितिर्न पृथ्वी गिरिर्नभुज्म क्षोदो न शंभु ॥
( ऋ० १।६५।३ )

**नदी :**

नदीवाचक उपमान ९ हैं । सिन्धुः, सरितः, अम्रुवः—ये ३ नदीवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**सिन्धुः :**

अत्यो नाज्मन्त्सर्गप्रतक्तः सिन्धुर्न क्षोदः क ईं वरा ॥
(ऋ० १।६५।६)

सिन्धुर्न क्षोदः प्र नीचीरैनोन्नवन्त गावः स्वर्दृशीके ।।
(ऋ० १।६६।१०)

अध क्षरन्ति सिन्धवो न सृष्टाः प्र नीचीरग्ने अरुषीरजानन् ।
(ऋ० १।७२।१०

भात्वक्षसो अत्यक्तुर्न सिन्धवोऽग्ने रेजन्ते असंसन्तो अजराः ।
(१।१४३।३)

सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः ।
घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः ।।
(ऋ० ४।५८।७)

त्वां गिरः सिन्धुमिवावनीर्महीरा पृणन्ति शवसा वर्धयन्ति च ।
(ऋ० ५।११।५)

अग्ने धृतव्रताय ते समुद्रायेव सिन्धवः । गिरो वाश्रास ईरते ।।
(ऋ० ८।४४।२५)

**सरितः :**

सम्यक् स्रवन्ति सरितो न धेना अन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः ।
एते अर्षन्त्यूर्मयो घृतस्य मृगा इव क्षिपणोरीषमाणाः ।।
(ऋ० ४।५८।६)

**अम्बु :**

स्वाध्यो वि दुरो देवयन्तोऽशिश्रयू रथयुर्देवताता ।
पूर्वी शिशुं न मातरा रिहाणे समम्बवो न समनेष्वञ्जन् ।।
(ऋ० ७।२।५)

**निर्झर-'प्रपा' :**

निर्झरवाचक उपमान १ है :

धन्वन्निव प्रपा असि त्वमग्न इयक्षवे पूरवे प्रत्न राजन् ।।
(ऋ० १०।४।१)

**वृक्ष (वना) :**

वृक्षवाचक उपमान ४ हैं :

वीडु चिद्यस्य समृतौ श्रुवद्वनेव यत् स्थिरम् ।
निष्षहमाणो यमते नायते धन्वासहा नायते ।।
(ऋ० १।१२७।३)

प्र यः पुरूणि गाहते तक्षद्वनेव शोचिषा ।
स्थिरा चिदन्ना नि रिणात्योजसा नि स्थिराणि चिदोजसा ।।
(ऋ० १।१२७।४)

पथ्येव राजन्नघशंसमजर नीचा नि वृश्च वनिनं न तेजसा ।।
(ऋ० ६।८।५)

येन दृळहा समत्स्वा वीलु चित्साहिषीमह्यग्निर्वनेव वात इन्नभन्तामन्यके समे ॥
(ऋ० ८।४०।१)

**वृक्षशाखा : (क्या) :**

वृक्ष-शाखा-वाचक उपमान ५ हैं :

विद्वाँ अस्य व्रता ध्रुवा वया इवानु रोहते ॥
(ऋ० २।५।४)

यह्वा इव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सिस्रते नाकमच्छ ॥
(ऋ० ५।१।१)

तस्येदु विश्वा भुवनाधि मूर्धनि वया इव रुरुहुः सप्त विस्रुहः
(ऋ० ६।७।६)

त्वद्विश्वा सुभग सौभगान्यग्ने वि यन्ति वनिनो न वयाः ।
श्रुष्टी रयिर्वाजो वृत्रतूर्ये दिवो वृष्टिरीड्यो रीतिरपाम् ॥
(ऋ० ६।१३।१)

यस्य ते अग्ने अन्ये अग्नय उपक्षितो वया इव ।
(ऋ० ८।१९।३३)

**घास :**

घासवाचक उपमान २ हैं । अतसं और यवस—ये २ घासवाचक पद उपमान के रूप प्रयुक्त हुए हैं :

**अतसं :**

यो नो अरातिं समिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यतसं न शुष्कम् ।
(ऋ० ४।४।४)

**यवस :**

सदासि रण्वो यवसेव पुष्यते होत्राभिरग्ने मनुष स्वध्वरः ॥
(ऋ० १०।११।५)

**लता (व्रततेः) :**

लतावाचक उपमान १ है :

अपि वृश्च पुराणवद्व्रततेरिव गुष्पितमोजो दासस्य दम्भय ॥
(ऋ० ८।४०।३)

**खनिज पदार्थ**

**स्वर्ण :**

स्वर्णवाचक उपमान १५ हैं । हिरण्यं, चन्द्रं, द्रविः, पेशनानि—ये ४ स्वर्ण-वाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**हिरण्यं :**

तस्य ज्येष्ठं महिमानं वहन्तीहिरण्यवर्णाः परि यन्ति यह्वीः ।
(ऋ० २।५३।९)

हिरण्यरूपः स हिरण्यसन्दृगपां नपात्सेदु हिरण्यवर्णः ।
हिरण्ययात्परि योनेर्निषद्या हिरण्यदा ददत्यन्नमस्मै ॥
(ऋ० २।३५।१०)

यमिन्धते युवतयः समित्था हिरण्यवर्णं घृतमन्नमस्य ।
(ऋ० २।३५।११)

अग्निं पुरा तनयित्नोरचित्ताद्धिरण्य रूपमवसे कृणुध्वम् ॥
(ऋ० ४।३।१)

कृष्णः श्वेतोऽरुषो यामो अस्य ब्रघ्न ऋज्र उत शोणो यशस्वान् ।
हिरण्यरूपं जनिता जजान ॥
(ऋ० १०।२०।६)

उपच्छायामिव घृणेरगन्म शर्म ते वयम् ।
अग्ने हिरण्यऽसन्दृशः ॥
(ऋ० ६।१६।३८)

हिरण्यकेशो रजसो विसारेऽहिर्धुनिर्वात इव ध्रजीमान् ।
(ऋ० १।७९।१)

हिरण्यदन्त शुचिवर्णमारात्क्षेत्रादपश्यमायुधा मिमानम् ॥
(ऋ० ५।२।३)

स हि ष्मा धन्वाक्षितं दाता न दात्वा पशुः ।
हिरिश्मश्रुः शुचिदन्नृभुरनिभृष्टतविषिः ॥
(ऋ० ५।७।७)

स दूतो विश्वेदभि वष्टि सद्मा होता हिरण्यरथो रसुजिह्वः ।
(ऋ० ४।१।८)

**चन्द्र :**

तमुक्षमाणं रजसि स्व आ दमे चन्द्रमिव सुरुचं ह्वार आ दधुः ॥
(ऋ० २।२।४)

**द्रविः :**

बिजेहमानः परशुर्न जिह्वां द्रविर्न द्रावयति दारु धक्षत् ॥
(ऋ० ६।३।४)

**पेशनानि :**

स॰तु वस्त्राण्यध पेशनानि वसानो अग्निर्नाभा पृथिव्याः ।
अरुषो जातः पद इडायाः पुरोहितो राजन्यक्षीह देवान् ॥
(ऋ० १०।१।६)

**जीव-जगत् (पशु से सम्बद्ध उपमान)**

**अश्व :**

अश्ववाचक उपमान ५२ हैं। अश्वः, अत्यः, वाजी, अर्वा, सप्ती, रंह्या, आशुं, श्वेतः, रघ्या, एतरी—ये १० अश्ववाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**अश्वः :**

अश्वं न त्वा वारवन्तं वन्दध्या अग्निं नमोभिः ।
सम्राजन्तमध्वराणाम् ॥

(ऋ० १।२७।१)

नित्ये चिन्नु यं सदने जगृभ्रे प्रशस्तिभिर्दधिरे यज्ञियासः ।
प्र सू नयन्त गृभयन्त इष्टावश्वासो न रथ्यो रारहाणाः ॥

(ऋ० १।१४८।३)

शिशुं न जातमभ्यारुरश्वा देवासो अग्निं जनिमन्वपुष्यन्

(ऋ० ३।१।४)

अश्वो न क्रन्दञ्जनिभिः समिध्यते वैश्वानरः कुशिकेभिर्युगेयुगे

(ऋ० ३।२६।३)

वृषो अग्निः समिध्यतेऽश्वो न देववाहनः ॥

(ऋ० ३।२७।१४)

यदी मन्थन्ती बाहुभिर्वि रोचतेऽश्वो न वाज्यरुषो वनेष्वा ॥

(ऋ० ३।२९।६)

अश्वो न स्वे दम आ हेम्यावान्तमंहसः पीपरो दाश्वांसम् ॥

(ऋ० ४।२।८)

अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदिस्पृशम् ।
ऋध्यामा त ओहैः ॥

(ऋ० ४।१०।१)

तिग्मं चिदेममहि वर्षो अस्य भसदश्वो न यमसान आसा ।

(ऋ० ६।३।४)

ये ते शुक्रासः शुचयः शुचिष्मः क्षां वपन्ति विषितासो अश्वाः ॥

(ऋ० ६।६।४)

प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन्यदा महः संवरणाद्व्यस्थात् ॥

(ऋ० ७।३।२)

अ वो देवं चित्सहसानमग्निमश्वं न वाजिनं हिषे नमोभिः ॥

(ऋ० ७।७।१)

अग्ने तय त्ये अजरेन्धानासो बृहद्भाः । अश्वा इव वृषणस्तविषीयवः ।

(ऋ० ८।२३।११)

अश्वमिद्गां रथप्रां त्वेषमिन्द्रं न सत्पतिम् ।
यस्य श्रवांसि तूर्वथ पन्यं पन्यं च कृष्टयः ॥

(ऋ० ८।७४।१०)

अश्वं न गीर्भी रथ्यं सुदानवो मर्मृज्यन्ते देवयवः ॥

(ऋ० ८।१०३।७)

सं यस्मिन्विश्वा वसूनि जग्मुर्वाजे नाश्वाः सप्तीवन्त एवैः ॥

(ऋ० १०।६।६)

प्र नूनं जातवेदसमश्वं हिनोत वाजिनम् ॥

(ऋ० १०।१८८।१)

अत्यः :

आ स्वमद्म युवमानो अजरस्तृष्वविष्यन्नतसेषु तिष्ठति ।
अत्यो न पृष्ठं प्रुषितस्य रोचते दिवो न सानु स्तनयन्नचिक्रदत् ॥

(ऋ० १।५८।२)

अत्यो नाज्मन्त्सर्गप्रतक्तः सिन्धुर्न क्षोदः कई वराते ॥

(ऋ० १।६५।३)

आ यः पुरं नार्मिणीमदीदेदत्यः कविर्नभन्यो नार्वा ॥

(ऋ० १।१४९।३)

वि यो भरिभ्रदोषधीषु जिह्वामत्यो न रथ्यो दोधवीति वारान्

(ऋ० २।४।४)

क्रत्वा दक्षस्य तरुषो विधर्मणि देवासो अग्निं जनयन्त चित्तिभिः ।
रुरुचानं भानुना ज्योतिषा महामत्यं न वाजं सनिष्यन्नुप ब्रुवे ॥

(ऋ० ३।२।३)

सो अध्वराय परि णीयते कविरत्यो न वाजसातये चनोहितः ।

(ऋ० ३।२।७)

सहस्रिणं वाजमत्यं न सप्तिं ससवान्त्सन्त्स्तूयसे जातवेदः ॥

(ऋ० ३।२२।१)

परिज्मेव स्वधागयोऽत्यो न ह्वार्यः शिशुः ॥

(ऋ० ६।२।८)

तुर्याम यस्त आदिशामरातीरत्यो न ह्रुतः पततः परिह्रुत् ॥

(ऋ० ६।४।५)

तमिद्दोषा तमुषसि यविष्ठमग्निमत्यं न मर्जयन्त नरः ॥

(ऋ० ७।३।५)

आ यो विवाय सख्या सखिभ्योऽपरिह्वृतो अत्यो न सप्तिः ॥
(ऋ० १०।६।२)

**वाजी :**

ऋषिर्न स्तुभ्वा विक्षु प्रशस्तो वाजी न प्रीतो वयो दधाति ॥
(ऋ० १।६६।२)

पुत्रो न जातो रण्वो दुरोणे वाजी न प्रीतो विशो वितारीत् ॥
(ऋ० १।६९।३)

ऋतेन देवीरमृता अमृक्ता अर्णोभिरापो मधुमद्भिरग्ने ।
वाजी न सर्गेषु प्रस्तुभानः प्र सदमित्स्रवितवे दधन्युः ॥
(ऋ० ४।३।१२)

का मर्यादा वयुना कद्ध वाममच्छा गमेम रघवो न वाजम् ॥
(ऋ० ४।५।१३)

द्रवन्त्यस्य वाजिनो न शोका भयन्ते विश्वा भुवना यदभ्राट् ॥
(ऋ० ४।६।५)

अग्निर्होता नो अध्वरे वाजी सन्परि णीयते ॥
(ऋ० ४।१५।१)

सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः ।
घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः ॥
(ऋ० ४।५८।७)

तव त्ये अग्ने अर्चयो महि ब्राधन्त वाजिनः ॥
(ऋ० ५।६।७)

कृत्वा हि द्रोणे अज्यसेऽग्ने वाजी न कृत्व्यः ॥
(ऋ० ६।२।८)

**अर्वा :**

आ यः पुरं नार्मिणीमदीदेदत्यः कविर्नभन्यो नार्वा ॥
(ऋ० १।१४९।३)

तृषुयदन्ना तृषुणा ववक्ष तृषुं दूतं कृणुते यह्वो अग्निः ।
वातस्य मेंडिं सचते निजूर्वन्नाशुं न वाजयते हिन्वे अर्वा ॥
(ऋ० ४।७।११)

तमर्वन्तं न सानसिमरुषं न दिवः शिशुम् ।
मर्मृज्यन्ते दिवेदिवे ॥
(ऋ० ४।१५।६)

अर्वन्तो न काष्ठां नक्षमाणा इन्द्राग्नी जोहुवतो नरस्ते ॥
(ऋ० ७।९३।३)

तमर्वन्तन्न सानसिं गृणीहि विप्रशुष्मिणम् ॥

(ऋ० ८।१०२।१२)

नयन्तो गर्भं वनां धियं धुर्हिरिश्मश्रुं नावीणं धनर्चम् ॥

(ऋ० १०।४६।५)

**सप्ती :**

ओकिवांसा सुते सचाँ अश्वा सप्ती इवादने ॥

(ऋ० ६।५६।३)

अग्निं विश्वायुवेपसं मर्यं न वाजिनं हितम् ।
सप्तिं न वाजयामसि ॥

(ऋ० ८।४३।२५)

प्र सप्तयः प्र सनिषन्त नो धियः पुरश्चरन्ति पशुपा इव त्मना

(ऋ० १०।१४२।२)

अग्निं हिन्वन्तु नो धियः सप्तिमाशुमिवाजिषु ॥

(ऋ० १०।१५६।१)

**रंह्या :**

सखे सखायमभ्या ववृत्स्वाशुं न चक्रं रथ्येव रंह्यास्मभ्यं दस्म रंह्या ।
अग्ने मृळीकं वरुणे सचा विदो मरुत्सु विश्वभानुषु ॥

(ऋ० ४।१।३)

**आशुं :**

तं त्वा वयं पतिमग्ने रयीणां प्र शंसामो मतिभिर्गोतमासः ।
आशुं न वाजम्भरं मर्जयन्तः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥

(ऋ० १।६०।५)

**श्वेतः ;**

चित्रो यदभ्राट् श्वेतो न विक्षु रथो न रुक्मी त्वेषः समत्सु ॥

(ऋ० १।६६।३)

**रथ्या :**

आ यो वना तातृषाणो न भाति वार्ण पथा रथ्येव स्वानीत् ।

. . . . . (ऋ० २।४।६)

**एतरी ;**

सास्माकेभिरेतरी न शूषैरग्निः ष्टवे दम आ जातवेदाः ॥

(ऋ० ६।१२।४)

**गो :**

गौवाचक उपमान १३ हैं। धेनुः, गावः, प्रस्नातीः-उस्राः, मातुः-जयः—ये ४ गौवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**धेनुः :**

तक्वा न भूर्णिर्वना सिषक्ति पयो न धेनुः शुचिर्विभावा ॥
(ऋ० १।६६।१)

अभि त्वा नक्तीरुषसो ववाशिरेऽग्ने वत्सं न स्वसरेषु धेनवः ।
(ऋ० २।२।२)

एवा नो अग्ने अमृतेषु पूर्व्य धीष्पीपाय बृहद्दिवेषु मानुषा ।
दुहाना धेनुर्वृजनेषु कारवे त्मना शतिनं पुरुरूपमिषणि ॥
(ऋ० २।२।६)

अबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषासम्
(ऋ० ५।१।१)

उत योषणे दिव्ये मही न उषासानक्ता सुदुघेव धेनुः ।
बर्हिषदा पुरुहूते मघोनी आ यज्ञिये सुविताय श्रयेताम् ॥
(ऋ० ७।२।६)

त्वे धेनुः सुदुघा जातवेदोऽसश्चतेव समना सबर्धुक् ॥
(ऋ० १०।६९।८)

**गावः :**

तं वश्चराथा वयं वसत्यास्तं न गावो नक्षन्त इद्धम् ।
(ऋ० १।६६।५)

स्वसारः श्यावीमरुषीमजुष्रञ्चित्रमुच्छन्तीमुषसं न गावः ॥
(ऋ० १।७१।१)

उभे भद्रे जोषयेते न मेने गावो न वाश्रा उप तस्थुरेवैः ॥
(ऋ० १।९५।६)

यथा ह त्यद्वसवो गौर्यं चित्पदि षिताममुञ्चता यजत्राः ।
एवो ष्व स्मन्मुञ्चता व्यंहः प्र तार्यग्ने प्रतरं न आयुः ॥
(ऋ० ४।१२।६)

उत त्वाग्ने मम स्तुतो वाश्राय प्रतिहर्यते । गोष्ठं गाव इवाशत ॥
(ऋ० ८।४३।१७)

**प्रस्नातीः-उस्राः :**

मानो देवानां विशः प्रस्नातीरिवोस्राः । कृशं न हासुरघ्न्याः ॥
(ऋ० ८।७५।८)

**मातुः-जयः :**

यस्य धर्मन्त्स्वरेनीः सपर्यन्ति मातुरूधः ॥
(ऋ० १०।२०।२)

**वृषभ :**

वृषभवाचक उपमान १३ हैं। वृषभः, वंसगः, वह्नि, गविषः-सत्वा, उग्रः-पिता—ये ५ वृषभवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**वृषभः :**

यदयुक्था अरुषा रोहिता रथे वातजूता वृषभस्येव ते रवः ॥
(ऋ० १।९४।१०)

भूषन्न योऽधि बभ्रूषु नम्नते वृषेव पत्नीरभ्येति रोरुवत् ॥
(ऋ० १।१४८।६)

वृषायन्ते महे अत्याय पूर्वीर्वृष्णे चित्राय रश्मयः सुयामाः ।
(ऋ० ३।७।९)

शिशानो वृषभो यथाग्निः शृङ्गे दविध्वत् ॥
(ऋ० ८।६०।१३)

कूचिज्जायते सनयासुनव्यो वने तस्थौ पलितो धूमकेतुः ।
अस्नातापो वृषभो न प्र वेति सचेतसो यं प्रणयन्त मर्ताः ॥
(ऋ० १०।४।५)

प्र केतुना बृहता यात्यग्निरा रोदसी वृषभो रोरवीति ।
(ऋ० १०।८।१)

अभिक्रन्दन्वृषायसे वि वोमदे गर्भं दधासि जामिषु विवक्षसे ।
(ऋ० १०।२१।८)

अग्निर्ह नाम धायि दन्नपस्तमः सं यो वना युवते अस्मना दता ।
अभिप्रमुरा जुह्वा स्वध्वर इनो न प्रोथमानो यवसे वृषा ॥
(ऋ० १०।११५।२)

**वंसगः :**

तपुर्जम्भो वन आ वातचोदितो यूथे न साह्वाँ अव वाति वंसगः ॥
(ऋ० १।५८।५)

य उग्र इव शर्यहा तिग्मशृङ्गो न वंसगः ॥
(ऋ० ६।१६।३९)

**वह्नि :**

आसा वह्नि न शोचिषा विरप्शिनं महिव्रतं न सरजन्तमध्वनः ॥
(ऋ० १०।११५।३)

**गविषः सत्वा :**

ऊर्ध्वं भानुं सविता देवो अश्रेद्द्रप्सं दविध्वद्गविषो न सत्वा ।
(ऋ० ४।१३।२)

**उग्रः पिता :**

द्रुवन्नो वन्वन् ऋत्वा नार्वोस्रः पितेव जारयायि यज्ञैः ॥

(ऋ० ६।१२।४)

**पशु :**

पशुवाचक उपमान ११ हैं। पशुः, पश्वः-यूथं, आरोका, तक्वा, दुर्गृभिः-भीमः—ये ५ पशुवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**पशुः :**

सोमो न वेधा ऋत प्रजातः पशुर्न शिश्वा विभुर्दूरेभाः ॥

(ऋ० १।६५।१०)

स यो व्यस्थादभि दक्षदुर्वीं पशुर्नेति स्वयुरगोपाः ॥

(ऋ० २।४।७)

स हि ष्मा धन्वाक्षितं दाता न दात्या पशुः ॥

(ऋ० ५।७।७)

पुरू यो दग्धासि वनाग्ने पशुर्न यवसे ॥

(ऋ० ५।६।४)

त्वं त्या चिदच्युताग्ने पशुर्न यवसे ।
धामा ह यत्ते अजर वना वृश्चन्ति शिक्वसः ॥

(ऋ० ६।२।६)

धनोरधि प्रवता यासि हर्यञ्जिगीषसे पशुरिवावसृष्टः ।

(ऋ० १०।४।३)

**पश्वः-यूथं :**

आ यूथेव क्षुमति पश्वो अरव्यद्देवानां यज्जनिमान्त्युग्र ।
मर्तानां चिदुर्वशीरकृप्रन्वृधे चिदर्य उपरस्यायोः ॥

(ऋ० ४।२।१८)

क्षेत्रादपश्यं सनुतश्चरन्तं सुमद्यूथं न पुरु शोभमानम् ।

(ऋ० ५।२।४)

**आरोका :**

आरोका इव घेदहं तिग्मा अग्ने तवत्विषः । दद्भिर्वनानि बप्सति

(ऋ० ८।४३।३)

**तक्वा :**

तक्वा न भूर्णिर्वना सिषक्ति पयो न धेनुः शुचिर्विभावा ।

(ऋ० १।६६।१)

**दुर्गृभिः-भीमः :**

ओजायमानस्तन्वश्च शुम्भते भीमो न शृङ्गा दविधाव दुर्गृभिः ॥

(ऋ० १।१४०।६)

**वत्स :**

वत्सवाचक उपमान ४ हैं। वत्सः, शिशु—ये दो वत्सवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**वत्सः :**

अस्मे वत्सं परिषन्तं न विन्दन्निच्छन्तो विश्वे अमृता अमूराः।

(ऋ० १।७२।२)

समानं वत्समभि सञ्चरन्ती विष्वग्धेनू विचरतः सुमेके।

(ऋ० १।१४६।३)

चरन्वत्सो रुशन्निह निदातारं न विन्दते।

(ऋ० ८।७२।५)

**शिशु :**

स्वाध्यो वि दुरो देवयन्तोऽशिश्रयू रथयुर्देवताता।
पूर्वी शिशुं न मातरा रिहाणे समग्रुवो न समनेष्वञ्जन्॥

(ऋ० ७।२।५)

**सिंह (सिंहः) :**

सिंहवाचक उपमान ३ हैं :

स जिन्वते जठरेषु प्रजज्ञिवान्वृषा चित्रेषु नानदन्न सिंहः।

(ऋ० ३।२।११)

अन्वीमविन्दन्निचिरासो अद्रुहोऽप्सु सिंहमिव श्रितम्

(ऋ० ३।९।४)

स संस्तो नवजातस्तुतुर्यात्सिंहं न क्रुद्धमभितः परिष्ठुः

(ऋ० ५।१५।३)

**हस्ति (इभेन) :**

हस्तिवाचक उपमान १ है :

कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवाँ इभेन।

(ऋ० ४।४।१)

**मृग (मृगाः) :**

मृगवाचक उपमान १ है :

एते अर्षन्त्यूर्मयो घृतस्य मृगा इव क्षिपणोरीषमाणाः॥

(ऋ० ४।५८।६)

**गौर (गौरः—भैंस की तरह का पशु-विशेष)**

गौरवाचक उपमान १ है :

तस्माद्भिया वरुण दूरमायं गौरो न क्षेप्नोरविजे ज्यायाः॥

(ऋ० १०।५१।६)

**पशु-अंगवाची उपमान**

**चर्म (चर्म) :**

चर्मवाचक उपमान २ हैं :

दविध्वतो रश्मयः सूर्यस्य चर्मेवावाधुस्तमो अप्स्वन्तः ॥

(ऋ० ४।१३।४)

वि चर्मणीव धिषणे अवर्तयद्वैश्वानरो विश्वमधत्त वृष्ण्यम् ॥

(ऋ० ६।८।३)

**ऊन (ऊर्ण) :**

ऊनवाचक उपमान १ है :

ऊर्णम्रदा वि प्रथस्वाभ्यर्का अनूषत । भवा नः शुभ्रः सातये ॥

(ऋ० ५।५।४)

**लोम (शर्धासि) :**

लोमवाचक उपमान १ है :

अहं हुवान आर्क्षे श्रुतर्वणि मदच्युति ।

शर्धांसीव स्तुकाविनां मृक्षा शीर्षा चतुर्णाम् ॥

(ऋ० ८।७४।१३)

**गोपद (गोः पदम्) :**

गोपदवाचक उपमान १ है :

पदं न गोरपगूळ्हं विविद्वानग्निर्मह्यं प्रेदुवोचन्मनीषाम् ॥

(ऋ० ४।५।३)

**खुर (शफ) :**

खुरवाचक उपमान १ है :

तदग्ने चक्षुः प्रतिधेहि रेभे शफारुजं येन पश्यसि यातुधानम् ॥

(ऋ० १०।८७।१२)

**पक्षीवाचक उपमान :**

**पक्षी :**

पक्षीवाचक उपमान ४ हैं। वि, वयः, पतत्रिणः—ये तीन पक्षीवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**वि :**

चित्र ध्रजतिररतिर्यो अक्तोर्वेर्न द्रुषद्वा रघुपत्मजंहाः ॥

(ऋ० ६।३।५)

तं वो वि न द्रुषदं देवमन्ध स इन्दुं प्रोथन्तं प्रवपन्तमर्णवम् ॥

(ऋ० १०।११५।३)

**वयः :**

मां चत्वार आशवः शविष्ठस्य द्रवित्नवः ।
सुरथासो अभि प्रयो वक्षन्वयो न तुग्र्यम् ॥

(ऋ० ८।७४।१४)

**पतत्रिणः :**

अभिव्रजन्नक्षितं पाजसा रजः स्थातुश्चरथं भयते पतत्रिणः ॥

(ऋ० १।५८।५)

**ह्वार (ह्वारः—पक्षीविशेष) :**

ह्वारवाचक उपमान १ है :

वियदस्थाद् यजतो वातचोदितो ह्वारो न वक्वा जरणा अनाकृतः ॥

(ऋ० १।१४१।७)

**हंस (हंसः) :**

हंसवाचक उपमान २ हैं :

श्वसित्यप्सु हंसो न सीदन् क्रत्वा चेतिष्ठो विशाममुषर्भुत् ॥

(ऋ० १।६५।९)

हंसा इव श्रेणिशो यतानाः शुक्रावसानाः स्वरवो न आगुः ॥

(ऋ० ३।८।९)

**श्येन (श्येनासः) :**

श्येनवाचक उपमान २ हैं :

ये ह्यग्ने ते सहमाना अयासस्त्वेषासो अग्ने अर्चयश्चरन्ति ।
श्येनासो न दुवसनासो अर्थं तुविष्वणसो मारुतं न शर्धः ॥

(ऋ० ४।६।१०)

नवं नु स्तोममग्नये दिवः श्येनाय जीजनम् ।
वस्वः कुविद्वनाति नः ॥

(ऋ० ७।१५।४)

**जन्तुवाचक उपमान :**

**सर्प (ह्वार्याणाम् पुत्रः) :**

सर्पवाचक उपमान १ है :

उत स्म दुर्गृभीयसे पुत्रो न ह्वार्याणाम् ॥

(ऋ० ५।९।४)

**तात्त्विक उपकरण :**

**धन (रयिः) :**

धनवाचक उपमान ८ हैं :

दधुष्ट्वा भृगवो मानुषेष्वारयिं न चारुं सुहवं जनेभ्यः ॥

(ऋ० १।५८।६)

द्विजन्मानं रयिमिव प्रशस्तं रातिं भरद् भृगवे मातरिश्वा ॥

(ऋ० १।६०।१)

रयिर्न चित्रा सूरो न संदृगायुर्न प्राणो नित्यो न सूनुः ॥

(ऋ० १।६६।१)

रयिर्न यः पितृवित्तो वयोधाः सुप्रणीतिश्चिकितुषो न शासुः ॥

(ऋ० १।७३।१)

त्वमग्ने सहसा सहन्तमः शुष्मिन्तमो जायसे देवतातये रयिर्न देवतातये ॥

(ऋ० १।१२७।६)

विश्वश्रुष्टिः सखीयते रयिरिव श्रवस्यते ॥

(ऋ० १।१२८।१)

अस्मे रयिं न स्वर्थं दमूनसं भगं दक्षं न पपृचासि धर्णसिम् ॥

(ऋ० १।१४१।११)

स्पार्हा यस्य श्रियो दृशे रयिर्वीरवतो यथा ॥

(ऋ० ७।१५।५)

**नगर आदि से सम्बद्ध उपमान :**

**नगर (आयसीभिः पूर्भिः) :**

नगरवाचक उपमान ३ हैं :

अग्ने गुणन्तमंहस उरुष्योर्जोनपात् पूर्भिरायसीभिः ॥

(ऋ० १।५८।८)

तेभिर्नो अग्ने अमितैर्महोभिः शतं पूर्भिरायसीभिर्नि पाहि ॥

(ऋ० ७।३।७)

अधा मही न आयस्य ना धृष्टो नृपीतये । पूर्भवा शतभुजिः ॥

(ऋ० ७।१५।१४)

**गृह :**

गृहवाचक उपमान ५ हैं । ओकः, सद्म, वीलुशर्म, पितुमती संसत्, पितुमान् क्षयः—ये पाँच गृहवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं ।

**ओकः :**

दाधार क्षेममोको न रण्वो यवो न पक्वो जेता जनानाम् ॥

(ऋ० १।६६।३)

**सद्म :**

चित्तिरपां दमे विश्वायुः सद्मेव धीराः संमाय चक्रुः ॥

(ऋ० १।६७।१०)

**बीलुशर्म :**

आदस्यायुर्ग्रभणवद्बीलुशर्म न सूनवे ॥ (ऋ० १।१२७।५)

**पितुमती संसत् :**

रोहिदश्वो वपुष्यो विभावा सदा रण्वः पितुमतीव संसत् ॥

(ऋ० ४।१।८)

**पितुमान् क्षयः :**

यो विश्वतः प्रत्यङ्ङसि दर्शतो रण्वः सन्दृष्टौ पितुमाँ इव क्षयः ॥

(ऋ० १।१४४।७)

**गाय का बाड़ा (व्रजम्) :**

व्रजवाचक उपमान १ है :

यं त्वा जनासो अभिसञ्चरन्ति गाव उष्णमिव व्रजं यविष्ठ ॥

(ऋ० १०।४।२)

**घेरा (वृजम्) :**

घेरावाचक उपमान १ है :

रायः सूनो सहसो वावसाना अति ससेम वृजनं नांहः ॥

(ऋ० ६।११।६)

**स्तम्भ :**

स्तम्भवाचक उपमान ३ हैं। स्थूणा, रोधः, मेता—ये तीन स्तम्भवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**स्थूणा :**

वैश्वानर नाभिरसि क्षितीनां स्थूणेव जनाँ उपमिद्ययन्थ ॥

(ऋ० १।५९।१)

**रोधः :**

अनूनेन बृहता वक्षथेनोपस्तभायदुपमिन्न रोधः ॥

(ऋ० ४।५।१)

**मेता :**

ऊर्ध्वं भानुं सवितेवाश्रेन्मेतेव धूमं स्तभायदुपद्याम् ॥

(ऋ० ४।६।२)

**मार्ग :**

मार्गवाचक उपमान २ हैं। पंथाम्, वृता—दो मार्गवाचक पद उपमान के रूप प्रयुक्त हुए हैं :

**पंथाम् :**

अधस्मास्य हर्षतो हृषीवतो विश्वे जुषन्त पन्थां नरः शुभे न पन्थाम् ॥

(ऋ० १।१२७।६)

**वृता :**

वृतेव यन्तं बहुभिर्वसव्यैस्त्वे रयिं जागृवांसो अनुग्मन् ।।

(ऋ० ६।१।३)

**पदचिह्न (पदैः) :**

पदचिह्नवाचक उपमान १ है :

इमं विधन्तो अपां सधस्थे पशुं न नष्टं पदैरनुग्मन् ।।

(ऋ० १०।४६।२)

**वाहन से सम्बद्ध उपमान :**

**रथः :**

रथवाचक उपमान १८ हैं। रथः, यामन्—दो रथवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**रथः :**

रथो न विक्ष्वृञ्जसान आयुषु व्यानुषग्वार्या देवऋण्वति ।।

(ऋ० १।५८।३)

चित्रो यदभ्राट् छ्वेतो न विक्षु रथो न रुक्मी त्वेषः समत्सु ।।

(ऋ० १।६६।६)

इमं स्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव सं महेमा मनीषया ।।

(ऋ० १।९४।१)

रथो न यातः शिक्वभिः कृतो द्यामङ्गेभिररुषेभिरीयते ।।

(ऋ० १।१४१।८)

रथमिव वेद्यं शुक्रशोचिषमग्निं मित्रं न क्षितिषु प्रशंस्यम् ।।

(ऋ० २।२।३)

वाजयन्निव नू रथान् योगाँ अग्नेरुपस्तुहि ।।

(ऋ० २।८।१)

द्विता होतारं मनुषश्च वाघतो धिया रथं न कुलिशः समृण्वति ।।

(ऋ० ३।२।१)

रथं न चित्रं वपुषाय दर्शतं मनुर्हितं सदमित् राय ईमहे ।।

(ऋ० ३।२।१५)

रथो न सस्निरभि वक्षि वाजमग्ने त्वं रोदसी नः सुमेके ।।

(ऋ० ३।१५।५)

एतं ते स्तोमं तुविजात विप्रो रथं न धीरः स्वपा अतक्षम् ।।

(ऋ० ५।२।११)

तव त्ये अग्ने अर्चयो भ्राजन्तो यन्ति धृष्णुया ।
परिज्मानो न विद्युतः स्वानो रथो न वाजयुः ।।

(ऋ० ५।१०।५)

रथैरिव प्र भरे वाजयद्भिः प्रदक्षिणिन्मरुतां स्तोममृध्याम् ॥

(ऋ० ५।६०।१)

वैश्वानरं रथ्यमध्वराणां यज्ञस्य केतुं जनयन्त देवाः ॥

(ऋ० ६।७।२)

प्रशंसमानो अतिथिर्न मित्रियोऽग्नी रथो न वेद्यः ॥

(ऋ० ८।१९।८)

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम् ।
अग्निं रथं न वेद्यम् ॥

(ऋ० ८।८४।१)

इयं ते अग्ने नव्यसी मनीषा युक्ष्वा रथं न शुचयद्भिरङ्गैः ॥

(ऋ० १०।४।६)

रथो न योरभीवृतो घृणीवाञ्चेतति त्मना ॥

(ऋ० १०।१७६।३)

यामन् :

चित्रो न यामन्त्श्विनोरनिवृतः परिवृणक्त्यश्मनस्तृणा दहन् ॥

(ऋ० ३।२९।६)

पुरानी गाड़ी (वृद्धमतसम्) :

पुरानी गाड़ीवाचक उपमान १ है :

यथा चिद् वृद्धमतसमग्ने संजूर्वसि क्षमि ।
एवा दह मित्रमहो यो अस्मध्रुग्दुर्मन्मा कश्चनेनति ॥

(ऋ० ८।६०।७)

नौका (नावः) :

नौकावाचक उपमान ५ हैं :

द्विषो नो विश्वतो मुखाति नावेव पारय ॥

(ऋ० १।९७।७)

स नः सिन्धुमिव नावयातिपर्षा स्वस्तये ॥

(ऋ० १।९७।८)

स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥

(ऋ० १।९९।१)

विश्वानि नो दुर्गहा जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिपर्षि ॥

(ऋ० ५।४।९)

स नो विश्वा अति द्विषः पर्षन्नावेव सुक्रतुः ॥

(ऋ० ५।२५।९)

**रथनेमि (नेमिः) :**

रथनेमिवाचक उपमान ४ हैं :

यत् सीमनु क्रतुना विश्वथा विभुररान्न नेमिः परिभूरजायथाः ॥

(ऋ० १।१४१।९)

परि विश्वानि काव्या नेमिश्चक्रमिवाभवत् ॥

(ऋ० २।५।३)

अग्ने नेमिररॉं इव देवाँस्त्वं परिभूरसि ॥

(ऋ० ५।१३।६)

तं नेमिमृभवो यथा नमस्व सहूतिभिः । नेदीयो यजमद्गिरः ॥

(ऋ० ८।७५।५)

**पताका (केतवः) :**

पताकावाचक उपमान १ है :

एते त्ये वृथगग्नय इद्धासः समदृक्षत । उषसामिव केतवः ॥

(ऋ० ८।४३।५)

**लगाम (रश्मीन्) :**

लगाम-वाचक उपमान १ है :

रश्मींरिव यो यमति जन्मनी उभे देवानां शंसमृत आ च सुक्रतुः ॥

(ऋ० १।१४१।११)

**शस्त्रवाचक उपमान :**

**तलवार :**

तलवार-वाचक उपमान ४ हैं । स्वधितिः और असिः—दो तलवार-वाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**स्वधिति :**

विशां कविं विश्पतिं मानुषीरिषः सं सीमकृण्वन्त्स्वधितिं न तेजसे ॥

(ऋ० ३।२।१०)

शुचिः ष्म यस्मा अत्रिवत् प्र स्वधितीव रीयते ॥

(ऋ० ५।७।८)

निर्यत्पूतेव स्वधितिः शुचिर्गात्स्वया कृपा तन्वा रोचमानः ॥

(ऋ० ७।३।९)

**असिः :**

अक्रीलन् क्रीलन् हरिरत्तवेऽदन्विपर्वशश्चकर्तगामिवासिः ॥

(ऋ० १०।७९।६)

**बाण :**

बाणवाचक उपमान ६ हैं । अस्तुः, क्षिप्रा, उग्र, अथर्यः, धनोः प्रवत :—ये ५ बाणवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**अस्तुः :**

सेनैव सृष्टामं दधात्यस्तुर्न विद्युत् त्वेषप्रतीका ॥

(ऋ० १।६६।७)

आदस्य वातो अनुवाति शोचिरस्तुर्न शर्यामसनामनुद्यून् ॥

(ऋ० १।१४८।४)

**क्षिप्रा :**

स विप्रश्चर्षणीनां शवसा मानुषाणाम् । अतिक्षिप्रेव विध्यति ॥

(ऋ० ४।८।८)

**उग्रः :**

य उग्र इव शर्यहा तिग्मशृङ्गो न वंसगः ॥

(ऋ० ६।१६।३९)

**अथर्यः :**

द्विर्यं पञ्च जीजनन् त्संवसानाः स्वसारो अग्निं मानुषीषु विक्षु ।
उषर्बुधमथर्यो न दन्तं शुक्रं स्वासं परशुं न तिग्मम् ॥

(ऋ० ४।६।८)

**धनोः प्रवतः :**

धनोरधि प्रवत आ स ऋण्वत्यभिव्रजद्भिर्वयुना नवाधित ॥

(ऋ० १।१४४।५)

**परशु :**

परशुवाचक उपमान ४ हैं। परशुः और अयसः धाराम्—ये दो परशुवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**परशुः :**

स हि पुरु चिदोजसा विरुक्मता दीद्यानो भवति द्रुहंतरः परशुर्न द्रुहंतरः ॥

(ऋ० १।१२७।३)

द्विर्यं पञ्च जीजनन् त्संवसानाः स्वसारो अग्निं मानुषीषु विक्षु ।
उषर्बुधमथर्यो न दन्तं शुक्रं स्वासं परशुं न तिग्मम् ॥

(ऋ० ४।६।८)

विजेहमानः परशुर्न जिह्वां द्रविर्न द्रावयति दारु धक्षत् ॥

(ऋ० ६।३।४)

**अयसः धाराम् :**

स इदस्तेव प्रतिधादसिर्ष्याञ्छशीत तेजोऽयसो न धाराम् ॥

(ऋ० ६।३।५)

**कवच (वर्म) :**

कवचवाचक उपमान २ हैं :

त्वमग्ने प्रयतदक्षिणं नरं वर्मेव स्यूतं परिपासि विश्वतः ॥

(ऋ० १।३१।१५)

अवास्या शिशुमतीरदीदेर्वर्मेवयुत्सु परिजर्मुराणः ॥

(ऋ० १।१४०।१०)

**गदा (घना) :**

गदावाचक उपमान १ है :

घनेव विष्वग्विजह्यराव्णस्तपुर्जम्भ यो अस्मध्रुक् ॥

(ऋ० १।३६।१६)

**अस्त्र (सेना) :**

अस्त्रवाचक उपमान ३ हैं :

सेनेव सृष्टामं दधात्यस्तुर्न विद्युत् त्वेषप्रतीका ॥

(ऋ० १।६६।७)

न यो वराय मरुतामिव स्वनः सेनेव सृष्टा दिव्या यथाशनिः ॥

(ऋ० १।१४३।५)

सेनेव सृष्टा प्रसितिष्ट एति यवं न दस्म जुह्वा विवेक्षि ॥

(ऋ० ७।३।४)

**पात्रवाचक उपमान :**

**स्रुक् एवं चम्वी (स्रुची, चम्वी) :**

स्रुक् और चम्वी वाचक उपमान एक-एक हैं :

अहाव्यग्ने हविरास्ये ते स्रुचीव घृतं चम्वीव सोमः ॥

(ऋ० १०।९१।१५)

**पीसनेवाला प्रस्तर (ग्रावा) :**

पीसनेवाला पत्थरवाचक उपमान २ हैं :

आ शृण्वते अदृपिताय मन्म नृचक्षसे सुमृडीकाय वेधः ।
देवाय शस्तिममृताय शंस ग्रावेव सोता मधुषुद् यमीडे ॥

(ऋ० ४।३।३)

तव द्युमन्तो अर्चयो ग्रावेवोच्यते बृहत् ॥

(ऋ० ५।२५।८)

**घड़ा (उदधिम्) :**

घड़ा-वाचक उपमान १ है :

ताविद्दुःशंसं मर्त्यं दुर्विद्वांसं रक्षस्विनम् ।
आभोगं हन्मना हतमुदर्थि हन्मना हतम् ।।

(ऋ० ७।९४।१२)

**द्यौकनी (क्ष्मातरी) :**

द्यौकनीवाचक उपमान १ है :

अधस्म यस्यार्चयः सम्यक् संयन्ति धूमिनः ।
यदीमह त्रितो दिव्युपक्ष्मातेव धमति शिशीते क्ष्मातरी यथा ।।

(ऋ० ५।९।५)

**अलंकारवाचक उपमान :**

**आभूषण :**

आभूषणवाचक उपमान ४ हैं। रुक्मः, भूषन्—ये दो आभूषणवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**रुक्मः :**

तव स्वादिष्ठाग्ने संदृष्टिरिदा चिदह्न इदा चिदक्तोः ।
श्रिये रुक्मो न रोचते उपाके ।।

(ऋ० ४।१०।५)

घृतं न पूतं तनूररेपाः शुचि हिरण्यम् ।
तत् ते रुक्मो न रोचत स्वधावः ।।

(ऋ० ४।१०।६)

सुसंदृक्ते स्वनीक प्रतीकं वियद्रुक्मो न रोचस उपाके ।।

(ऋ० ७।३।६)

**भूषन् :**

भूषन्न योऽधि बभ्रूषु नम्नते वृषेव पत्नीरभ्येति रोरुवत् ।।

(ऋ० १।१४०।६)

**कंकण (खादिनम्) :**

कंकणवाचक १ उपमान है :

आ यं हस्ते न खादिनं शिशुं जातं न बिभ्रति ।।

(ऋ० ६।१६।४०)

**वस्त्र (वस्त्रेण) :**

वस्त्रवाचक उपमान १ है :

वस्त्रेणेव वासया मन्मना शुचिं ज्योतीरथं शुक्रवर्णं तमोहनम् ।।

(ऋ० १।१४०।१)

**चित्र (अमतिः) :**

चित्रवाचक उपमान १ है :

पुरु प्रशस्तो अमतिर्न सत्य आत्मेव शेवो दिधिषाय्यो भूत् ।।

(ऋ० १।७३।२)

**भोज्य पदार्थ से सम्बद्ध उपमान :**

**घृत (घृतम्) :**

घृतवाचक उपमान ८ हैं :

वैश्वानराय धिषणामृतावृधे घृतं न पूतमग्नये जनामसि ।।

(ऋ० ३।२।१)

शुचि घृतं न तप्तमध्न्यायाः स्पार्हा देवस्य मंहनेव धेनोः ।।

(ऋ० ४।१।६)

घृतं न पूतं तनूररेपाः शुचि हिरण्यम् ।।

(ऋ० ४।१०।६)

घृतं न यज्ञ आस्ये सुपूतं गिरं भरे वृषभाय प्रतीचीम् ।।

(ऋ० ५।१२।१)

एवेन्द्राग्निभ्यामहावि हव्यं शूष्यं घृतं न पूतमद्रिभिः ।।

(ऋ० ५।८६।६)

स्तोमं यमस्मै ममतेव शूषं घृतं न शुचिमतयः पवन्ते ।।

(ऋ० ६।१०।२)

अग्ने मन्मानि तुभ्यं कं न घृतं न जुह्व आसनि ।।

(ऋ० ८।३९।३)

यदत्युपजिह्विका यद्वभ्रो अति सर्पति । सर्वं तदस्तु ते घृतम् ।।

(ऋ० ८।१०२।२१)

**सोम :**

सोमवाचक उपमान ५ हैं । सोमः, मधोः — दो सोमवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**सोमः :**

सोमो न वेधा ऋतप्रजातः पशुर्न शिश्वा विभुर्दूरेभाः ।।

(ऋ० १।६५।१०)

यस्य भा परुषाः शतमुद्यर्षयन्त्युक्षणः ।
अश्वमेधस्य दानाः सोमा इव त्याशिरः ।।

(ऋ० ५।२७।५)

वैश्वानराय मतिर्नव्यसी शुचिः सोम इव पवते चारुरग्नये ।

(ऋ० ६।८।१)

अस्याजरासो दमामरित्रा अर्चद्धूमासो अग्नयः पावकाः ।
श्वितीचयः श्वात्रासो भुरण्यवो वनर्षदो वायवो न सोमाः ।।

(ऋ० १०।४६।७)

**मधोः :**

मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्रस्तोमा यन्त्यग्नये ।

(ऋ० ८।१०३।६)

**जौ (यवः) :**

जौवाचक उपमान ३ हैं :

दाधार क्षेममोको न रण्वो यवो न पक्वो जेता जनानाम् ।।

(ऋ० १।६६।३)

तासामध्वर्युरागतौ यवो वृष्टीव मोदते ।।

(ऋ० २।५।६)

सेनेव सृष्टा प्रसितिष्ट एति यवं न दस्म जुह्वा विवेक्षि ।।

(ऋ० ७।३।४)

**अन्न :**

अन्नवाचक उपमान २ हैं। धासिम् और ससम्—२ अन्नवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**धासिम् :**

वेदिषदे प्रियधामाय सुद्युते धासिमिव प्रभरायोनिमग्नये ।।

(ऋ० १।१४०।१)

**सस् :**

ससं न पक्वमविदच्छुनन्तं रिरिह्वांसं रिपं उपस्थे अन्तः ।।

(ऋ० १०।७९।३)

**शहद (मध्वा) :**

शहदवाचक उपमान २ हैं :

आ श्वैत्रेयस्य जन्तवो द्युमद् वर्धन्त कृष्टयः ।
निष्कग्रीवो बृहदुक्थ एना मध्वा न वाजयुः ।।

(ऋ० ५।१९।३)

वेपिष्ठो अङ्गिरसां यद्ध विप्रो मधुच्छन्दो भनति रेभ इष्टौ ।।

(ऋ० ६।११।३)

**दूध :**

दूधवाचक उपमान २ हैं। दुग्धम् और ऊधः—ये दो दूधवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**दुग्धम् :**

प्रियं दुग्धं न काम्यमजामि जाम्योः सचा ।

(ऋ० ५।१९।४)

ऊध :

वेधा अदृप्तो अग्निर्विजानन्नूधर्न गोनां स्वाद्या पितूनाम् ॥

(ऋ० १।६६।३)

भोजन (भोज्या) :

भोजनवाचक उपमान १ है :

कृत्वा यदस्य तविषीषु पृञ्चतेऽग्ने रवेण मरुतां न

भोज्येषिराय न भोज्या ॥

(ऋ० १।१२८।५)

हवि (हविः) :

हविवाचक उपमान १ है :

प्राग्नये विश्वशुचे धियन्धेऽसुरघ्ने मन्म धीति भरध्वम् ।

भरे हविर्न बर्हिषि प्रीणानो वैश्वानराय यतये मतीनाम् ॥

(ऋ० ७।१३।१)

सामाजिक उपमान :

सामाजिक प्राणियों से सम्बद्ध उपमान सामाजिक उपमान कहलाते हैं। ये संख्या में कुल २२७ हैं। इनमें समाज के विविध वर्ग के व्यक्तियों से सादृश्य स्थापित किया गया है; जैसे—

ऋषि आदि से सम्बद्ध उपमान :

मनुः :

मनुवाचक उपमान १५ हैं। मनुष्वत्, मनुषः, मनुः—ये तीन मनुवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

मनुष्वत् :

मनुष्वदग्ने अङ्गिरस्वदङ्गिरो ययातिवत् सदने पूर्ववच्छुचे।

अच्छ याह्या वहा दैव्यं जनमासादय बर्हिषि यक्षि च प्रियम् ॥

(ऋ० १।३१।१७)

मनुष्वद् देव धीमहि प्रचेतसं जीरं दूतममर्त्यम् ॥

(ऋ० १।४४।११)

आ यस्मिन्त्सप्त रश्मयस्तता यज्ञस्य नेतरि।

मनुष्वद् दैव्यमष्टमं पोता विश्वं तदिन्वति ॥

(ऋ० २।५।२)

यथायजो होत्रमग्ने पृथिव्या यथा दिवो जातवेदश्चिकित्वान्।

एवानेन हविषा यक्षि देवान् मनुष्वद् यज्ञं प्रतिरेयमद्य ॥

(ऋ० ३।१७।२)

मनुष्वद् त्वा निधीमहि मनुष्वत् समिधीमहि ।
अग्ने मनुष्वदङ्गिरो देवान् देवयते यज ।।

(ऋ० ५।२१।१)

ईलेत्यं वो असुरं सुदक्षमन्तर्दूतं रोदसी सत्यवाचम् ।
मनुष्वदग्निं मनुना समिद्धं समध्वराय सदमिन्महेम ।।

(ऋ० ७।२।३)

मनुष्वदग्न इह यक्षि देवान्भवा नो दूतो अभि शस्तिपावा ।।

(ऋ० ७।११।३)

उत त्वा भृगुवच्छुचे मनुष्वदग्न आहुतः ।।

(ऋ० ८।४३।१३)

यं त्वा जनास इन्धते मनुष्वदङ्गिरस्तम ।।

(ऋ० ८।४३।२७)

मनुष्वद् यज्ञं सुधिता हवींषीला देवी घृतपदी जुषन्त ।।

(ऋ० १०।७०।८)

आ नो यज्ञं भारती तूयमेत्विला मनुष्वदिह चेतयन्ती ।।

(ऋ० १०।११०।८)

मनुषः :

आ नो बर्ही रिशादसो वरुणो मित्रो अर्यमा ।
सीदन्तु मनुषो यथा ।।

(ऋ० १।२६।४)

यथा होतर्मनुषो देवताता यज्ञेभिः सूनो सहसो यजासि ।
एवा नो अद्य समना समाना नुशन्नग्न उशतो यक्षि देवान् ।।

(ऋ० ६।४।१)

मनुः :

ज्ञेया भागं सहसानो वरेण त्वा दूतासो मनुवद् वदेम ।।

(ऋ० २।१०।६)

यत्ते मनुर्यदनीकं सुमित्रः समीधे अग्ने तदिदं नवीयः ।।

(ऋ० १०।६९।३)

अङ्गिरा (अङ्गिरस्वत्) :

अङ्गिरावाचक उपमान ५ हैं :

मनुष्वदग्ने अङ्गिरस्वदङ्गिरो ययातिवत् सदने पूर्ववच्छुचे ।
अच्छ याह्या वहा दैव्यं जनमासादय बर्हिषि यक्षि च प्रियम् ।।

(ऋ० १।३१।१७)

अङ्गिरस्वन्महिव्रत प्रस्कण्वस्य श्रुधी हवम् ॥

(ऋ० १।४५।३)

तमु त्वा वाजसातममङ्गिरस्वद् हवामहे ।

(ऋ० १।७८।३)

एवेन्द्राग्निभ्यां पितृवन्नवीयो मन्धातृवदङ्गिरस्वदवाचि ॥

(ऋ० ८।४०।१२)

अङ्गिरस्वद् हवामहे ॥

(ऋ० ८।४३।१३)

**अत्रि (अत्रिवत्) :**

अत्रिवाचक उपमान ४ हैं :

प्रियमेधवदत्रिवज्जातवेदो विरूपवत् ।

अङ्गिरस्वन्महिव्रत प्रस्कण्वस्य श्रुधी हवम् ॥

(ऋ० १।४५।३)

अग्ने अत्रिवन्नमसा गृणानोस्माकं बोध्यविता तनूनाम् ॥

(ऋ० ५।४।९)

शुचिः ष्म यस्मा अत्रिवत् प्र स्वधितीव रीयते ॥

(ऋ० ५।७।८)

प्र विश्वसामन्नत्रिवदर्चा पावक शोचिषे ॥

(ऋ० ५।२२।१)

**नभाक (नभाकवत्) :**

नभाकवाचक उपमान २ हैं :

अभ्यर्चे नभाकवदिन्द्राग्नी यजसा गिरा ॥

(ऋ० ८।४०।४)

प्र ब्रह्माणि नभाकवदिन्द्राग्निभ्यामिरज्यत ॥

(ऋ० ८।४०।५)

**भृगु :**

भृगुवाचक उपमान २ हैं। भृगवाणम्, भृगुवद्—दो भृगुवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**भृगवाणम् :**

आशुं दूतं विवस्वतो विश्वा यश्चर्षणीरभि ।
आ जभ्रुः केतुमायवो भृगवाणं विशे विशे ॥

(ऋ० ४।७।४)

**भृगुवत् :**

उत त्वा भृगुवच्छुचे मनुष्वदग्न आहुत ।।

(ऋ० ८।४३।१३)

**अथर्वा (अथर्ववत्) :**

अथर्ववाचक उपमान २ हैं :

इममु त्यमथर्ववदग्निं मन्थन्ति वेधसः ।।

(ऋ० ६।१५।१७)

अथर्ववज्ज्योतिषा दैव्येन सत्यं धूर्वन्तमचितं न्योष ।।

(ऋ० १०।८७।१२)

**दिवोदास (दिवोदासाय) :**

दिवोदासवाचक उपमान १ है :

त्वमिमा वार्या पुरु दिवोदासाय सुन्वते । भरद्वाजाय दाशुषे ।।

(ऋ० ६।१६।५)

**व्यश्व (व्यश्ववत्) :**

व्यश्ववाचक उपमान १ है :

आभिर्विधेमाग्नये ज्येष्ठाभिर्व्यश्ववत् ।
मंहिष्ठाभिर्मतिभिः शुक्र शोचिषे ।।

(ऋ० ८।२३।२३)

**स्थूरयूप (स्थूरयूपवत्) :**

स्थूरयूपवाचक उपमान १ है :

नूतमर्चे विहायसे स्तोमेभिः स्थूरयूपवत् ।।

(ऋ० ८।२३।२४)

**मन्धाता (मन्धातृवत्) :**

मन्धातृवाचक उपमान १ है :

एवेन्द्राग्निभ्यां पितृवन्नवीयो मन्धातृवदङ्गिरस्वद्वाचि ।

(ऋ० ८।४०।१२)

**और्वभृगु (और्वभृगुवत्) :**

और्वभृगुवाचक उपमान १ है :

और्वभृगुवच्छुचिमप्नवानवदाहुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ।

(ऋ० ८।१०२।४)

**अप्नवान् (अप्नवानवत्) :**

अप्नवानवाचक उपमान १ है :

और्वभृगुवच्छुचिमप्नवानवदाहुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ।।

(ऋ० ८।१०२।४)

**ययाति (ययातिवत्) :**

ययातिवाचक उपमान १ है :

मनुष्वदग्ने अङ्गिरस्वदङ्गिरो ययातिवत् सदने पूर्ववच्छुचे ।
अच्छ याह्या वहा दैव्यं जनमासादय बर्हिषि यक्षि च प्रियम् ॥

(ऋ० १।३१।१७)

**प्रियमेध (प्रियमेधवत्) :**

प्रियमेधवाचक उपमान १ है :

प्रियमेधवदत्रिवज्जातवेदो विरूपवत् ।
अगङ्गिरस्वन्महिव्रत प्रस्कण्वस्य श्रुधी हवम् ॥

(ऋ० १।४५।३)

**विरूप (विरूपवत्) :**

विरूपवाचक उपमान १ है :

प्रियमेधवदत्रिवज् जातवेदो विरूपवत् ।
अङ्गिरस्वन्महिव्रत प्रस्कण्वस्य श्रुधी हवम् ॥

(ऋ० १।४५।३)

**गृत्समद (गृत्समदासः) :**

गृत्समदवाचक उपमान १ है :

त्वया यथा गृत्समदासो अग्ने गुहावन्वन्त उपरांअभिष्युः ।
सुवीरासो अभिमातिषाहः स्यत् सूरिभ्यो गृणते तद्वयोधाः ॥

(ऋ० २।४।९)

**रेभ (रेभः) :**

रेभवाचक उपमान १ है :

स ईं रेभो न प्रतिवस्त उस्राः शोचिषाररपीति मित्रमहाः ॥

(ऋ० ६।३।६)

**ममता (ममतेव) :**

ममतावाचक उपमान १ है :

स्तोमं यमस्मै ममतेव शूषं घृतं न शुचिमतयः पवन्ते ॥

(ऋ० ६।१०।२)

**दीर्घतमा औचथ्य —(भावतः) :**

दीर्घतमावाचक उपमान १ है :

घृतवन्तमुपयासि मधुमन्तं तनूनपात् ।
यज्ञं विप्रस्य भावतः शशमानस्य दाशुषः ॥

(ऋ० १।१४२।२)

**अध्वर्यु :**

अध्वर्युवाचक उपमान ३ हैं। अध्वरीयसि और सुक्रतूयसे—ये दो अध्वर्यु-वाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**अध्वरीयसि :**

तव प्रशास्त्रं त्वमध्वरीयसि ब्रह्मा चासि गृहपतिश्चनोदये ॥

(ऋ० १०।९१।१०)

तस्य होता भवसि यासि दूत्यमुपब्रूषे यजस्याध्वरीयसि ॥

(ऋ० १०।९१।११)

**सुक्रतूयसे :**

अग्ने घृतस्नुस्त्विर्ऋतानि दीद्यद्वर्तिर्यज्ञं परियन्त्सुक्रतूयसे ॥

(ऋ० १०।१२२।६)

**होता (होता) :**

होतावाचक उपमान १ है :

स्योनशीरतिथिर्न प्रीणानो होतेव सद्म विधतोवितारीत् ॥

(ऋ० १।७३।१)

**स्तोता (ऋषूणां रेभः) :**

स्तोतृवाचक उपमान १ है :

अग्ने रेभो न जरत ऋषूणां धृषिर्होत ऋषूणाम् ।

(ऋ० १।१२७।१०)

**ऋषि (ऋषिः) :**

ऋषिवाचक उपमान १ है :

ऋषिर्न स्तुभ्वा विक्षु प्रशस्तो वाजी न प्रीतो वयो दधाति ॥

(ऋ० १।६६।४)

**ब्राह्मण :**

ब्राह्मणवाचक उपमान ४ हैं। विप्रम्, वेधसे—ये दो ब्राह्मणवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं :

**विप्रं :**

अग्निं होतारं मन्ये दास्वन्तं वसुं सूनुं सहसो जातवेदसं विप्रं न ॥

जातवेदसम् ॥

(ऋ० १।१२७।१)

विप्रं न द्युक्षवचसं सुवृक्तिभिर्हव्यवाहमरतिं देवमृञ्जसे ॥

(ऋ० ६।१५।४)

धीरो ह्यस्यद्मसद्विप्रो न जागृविः सदा । अग्ने दीदयसि द्यवि ॥

(ऋ० ८।४४।२९)

**वेधसे :**

प्र होत्रे पूर्व्यं वचोऽग्नये भरता बृहत् ।
विपां ज्योतींषि बिभ्रते न वेधसे ॥

(ऋ० ३।१०।५)

**सज्जन (ज्ञानी) :**

ज्ञानीवाचक उपमान ५ हैं। विदे, विद्वान्, साधुः, मेधिराः, कविम्—ये ५ ज्ञानीवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**विदे :**

हलहा चिदस्मा अनुदुर्यथा विदे तेजिष्ठाभिररणिभिर्दाष्ट्य-
वसेऽग्नये दाष्ट्यवसे ॥

(ऋ० १।१२७।४)

**विद्वान् :**

यथा विद्वाँ अरं करद् विश्वेभ्यो यजतेभ्यः ।
अयमग्ने त्वे अपि यं यज्ञं चक्रमा वयम् ॥

(ऋ० २।५।८)

**साधुः :**

साधुर्न गृध्नुरस्तेव शूरो यातेव भीमस्त्वेषः समत्सु ॥

(ऋ० १।७०।११)

**मेधिराः :**

एवा वामह्व ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ॥

(ऋ० ८।३८।९)

**कविम् :**

कविमिव प्रचेतसं यं देवासो अध द्विता ।
नि मर्त्येष्वादधुः ॥

(ऋ० ८।८४।२)

**राजवर्ग से सम्बद्ध उपमान—**

**राजा :**

राजावाचक उपमान ६ हैं। राजा एवं विशपतिः—ये दो राजावाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**राजा :**

जामिः सिन्धूनां भ्रातेव स्वस्रामिभ्यान्न राजा वनान्यत्ति ॥

(ऋ० १।६५।७)

वनेषु जायुर्मर्तेषु मित्रो वृणीते श्रुष्टिं राजेवाजुर्यम् ॥

(ऋ० १।६७।१)

देवो न यः पृथिवीं विश्वधाया उपक्षेति हितमित्रो न राजा ॥

(ऋ० १।७३।३)

सत्वं न ऊर्जसन ऊर्जं धा राजेव जेरवृके क्षेष्यन्तः ॥

(ऋ० ६।४।४)

वैश्वानरो जायमानो न राजावार्तिरज्ज्योतिषाग्निः तमांसि ॥

(ऋ० ६।९।१)

**विश्पतिः :**

स मानुषे वृजने शंतमोहितोग्निर्यज्ञेषुजेन्यो न विश्पतिः प्रियो-
यज्ञेषु विश्पतिः ॥

(ऋ० १।१२८।७)

**रक्षक :**

रक्षकवाचक उपमान २ हैं। क्षेमः, अविता—२ रक्षकवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**क्षेमः :**

क्षेमो न साधुः क्रतुर्न भद्रो भुवत् स्वाधीर्होता हव्यवाट् ॥

(ऋ० १।६७।२)

**अविता :**

विश्वासु विश्वावितेव हव्यो भुवद् वस्तुर्ऋषूणाम् ॥

(ऋ० ८।७१।१५)

**प्रजा :**

प्रजावाचक उपमान २ हैं। विशाम्, सत्वाः—ये दो प्रजावाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**विशाम् :**

अद्री चिदस्मा अन्तर्दुरोषे विशां न विश्वो अमृतः स्वाधीः ॥

(ऋ० १।७०।४)

**सत्वाः :**

शुचिभ्राजा उषसो नवेदा यशस्वतीरपस्युवो न सत्वाः ॥

(ऋ० १।७९।१)

**वीर :**

वीरवाचक उपमान ९ हैं। शूरः, नग्रः, तूर्वन्, योधः, युयुधयः, रथ्यः—ये ६ वीरवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**शूरः :**

आदस्य ते कृष्णासो दक्षिसूरयः शूरस्येव त्वेषथादीषतेवयः ।।

(ऋ० १।१४१।८)

शूरस्येव प्रसितिः क्षातिरग्नेर्दुर्वर्तुर्भीमोदयते वनानि ।।

(ऋ० ६।६।५)

शूर इव धृष्णुश्च्यवनः सुमित्रः प्र नु वोचंवाध्प्रश्वस्य नाम ।।

(ऋ० १०।६९।५)

शूर इव धृष्णुश्च्यवनो जनानां त्वमग्ने पृतनायूँरभिष्याः ।।

(ऋ० १०।६९।६)

**उग्र :**

महि स्तोतृभ्यो मघवन्त्सुवीर्यं मथीरुग्रो न शवसा ।।

(ऋ० १।१२७।११)

**तूर्वन् :**

तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नूरण आ यो घृणे न ततृषाणो अजरः ।।

(ऋ० ६।१५।५)

**योधः :**

अग्निर्जम्भैस्तिगितैरत्तिभर्वति योधो न शत्रून्त्सवना न्यृञ्जते ।।

(ऋ० १।१४३।५)

**युयुधयः :**

आ रण्वासो युयुधयो न सत्वनं त्रितं नशन्त प्रशिषन्त इष्टये ।।

(ऋ० १०।११५।४)

**रथ्यः :**

आ ते यतन्ते रथ्यो यथा पृथक्शर्धांस्यग्ने अजराणि धक्षतः ।।

(ऋ० १०।९१।७)

**अश्वारोही (याता) :**

अश्वारोहीवाचक उपमान १ है—

साधुर्न गृध्नुरस्तेव शूरो यातेव भीमस्त्वेषः समत्सु ।।

(ऋ० १।७०।११)

**धनुषधारी :**

धनुषधारी वीरवाचक उपमान ३ हैं। अस्ता, धन्वासहा—ये दो धनुषधारी वीरवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**अस्ता :**

साधुर्न गृध्नुरस्तेव शूरो यातेव भीमस्त्वेषः समत्सु ॥

(ऋ० १।७०।११)

स इदस्तेव प्रतिधादसिष्यञ्छिशीत तेजोऽयसो न धाराम् ॥

(ऋ० ६।३।५)

**धन्वासहा :**

निष्षहमाणो यमते नायते धन्वासहा नायते ॥

(ऋ० १।१२७।३)

**सेना (सेना) :**

सेनावाचक उपमान १ है—

यदुद्वतो निवतो यासिवप्सत्पृथगेषि प्रगर्धिनीव सेना ॥

(ऋ० १०।१४२।४)

**दूत :**

दूतवाचक उपमान ४ हैं। दूतः, श्रुष्टीवानः—ये दो दूतवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**दूतः :**

आदीं राज्ञे न सहीयसे सचा सन्नादूत्यं भृगवाणो विवाय ॥

(ऋ० १।७१।४)

अन्तर्ह्यग्न ईयसे विद्वान् जन्मोभया कवे। दूतो जन्येव मित्र्यः ॥

(ऋ० २।६।७)

यथा दूतो बभूथ हव्यवाहनः ॥

(ऋ० ८।२३।६)

**श्रुष्टीवानः :**

अध स्मा ते परिचरन्त्यजर श्रुष्टीवानो नाजर ॥

(ऋ० १।१२७।९)

**शत्रु :**

शत्रुवाचक उपमान २ हैं। अरातीयतः, द्वेषोयुतः—ये दो शत्रुवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**अरातीयतः :**

जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहाति वेदः ॥

(ऋ० १।९९।१)

**द्वेषोयुतः :**

तवाहमग्न ऊतिभिर्मित्रस्य च प्रशस्तिभिः।
द्वेषोयुतो न दुरिता तुर्याम मर्त्यानाम् ॥

(ऋ० ५।९।६)

**परिवार से सम्बद्ध उपमान—**

**माता (माता) :**

मातृवाचक उपमान २ हैं—

मातेव यद्भरसे पप्रथानो जनं जनं धायसे चक्षसे च ॥

(ऋ० ५।१५।४)

तं त्वाजनन्त मातरः कविं देवासो अङ्गिरः ॥

(ऋ० ८।१०२।१७)

**पिता (पिता) :**

पितृवाचक उपमान ७ हैं—

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव ॥

(ऋ० १।१।९)

आ हिष्मा सूनवे पितापिर्यजत्यापये ॥

(ऋ० १।२६।३)

वि त्वा नरः पुरुत्रा सपर्यन् पितुर्न जिव्रेर्वि वेदोभरन्त ॥

(ऋ० १।७०।१०)

जोहूत्रो अग्निः प्रथमः पितेवेल्स्यदे मनुषा यत् समिद्धः ॥

(ऋ० २।१०।१)

पितुर्न पुत्रः सुभृतो दुरोण आ देवाँ एतु प्र णो हविः ॥

(ऋ० ८।१९।२७)

एवेन्द्राग्निभ्यां पितृवन्नवीयोमन्धातृवदङ्गिरस्वदवाचि ॥

(ऋ० ८।४०।१२)

पितेव पुत्रमबिभरुपस्थे त्वामग्ने वध्र्यश्वः सपर्यन् ॥

(ऋ० १०।६९।१०)

**माता-पिता (पितरा) :**

मातृ-पितृवाचक उपमान १ है—

भवा नो अग्ने सुमना उपेतौ सखेव सख्ये पितरेव साधुः ॥

(ऋ० ३।१८।१)

**भाई (भ्राता) :**

भ्रातृवाचक उपमान १ है—

आभिः सिन्धूनां भ्रातेव स्वस्रामिभ्यान्न राजा वनान्यत्ति ॥

(ऋ० १।६५।७)

**स्त्री :**

स्त्रीवाचक उपमान १४ हैं। नारी, जाया, जनयः, योषा, युवतयः, स्मयमानाभिः शिवाभिः, सिञ्चतीः, जोषयेते—ये ८ स्त्रीवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**नारी :**

पुरः सदः शर्मसदो न वीरा अनवद्या पतिजुष्टेव नारी ॥

(ऋ० १।७३।३)

**जाया :**

दुरोक शोचिः क्रतुर्न नित्यो जायेव योनावरं विश्वस्मै ॥

(ऋ० १।६६।५)

अयं योनिश्चकृमा यं वयं ते जायेव पत्य उशती सुवासाः ॥

(ऋ० ४।३।२)

भूया अन्तरा हृद्यस्य निस्पृशे जायेव पत्य उशती सुवासाः ॥

(ऋ० १०।९१।१३)

**जनयः :**

उप प्र जिन्वन्नुशतीरुशन्तं पतिं न नित्यं जनयः सनीलाः।
स्वसारः श्यावीमरुषीमजुषञ्चित्रमुच्छन्तीमुषसं न गावः॥

(ऋ० १।७१।१)

अभ्रातरो न योषणो व्यन्तः पतिरिपो न जनयो दुरेवाः।
पापासः सन्तो अनृता असत्या इदं पदमजनता गभीरम् ॥

(ऋ० ४।५।५)

व्यचस्वतीरुर्विया विश्रयन्तां पतिभ्यो न जनयः शुम्भमानाः ॥

(ऋ० १०।११०।५)

**योषा :**

अभ्रातरो न योषणो व्यन्तः पतिरिपो न जनयो दुरेवाः।
पापासः सन्तो अनृता असत्या इदं पदमजनता गभीरम् ॥

(ऋ० ४।५।५)

अभिप्रवन्त समनेव योषाः कल्याण्यः स्मयमानासो अग्निम् ।
घृतस्य धाराः समिधो न सन्तता जुषाणो हर्यति जातवेदाः ॥

(ऋ० ४।५८।८)

आ सुष्वयन्ती यजते उपाके उषासा नक्ता सदतां नि योनौ ।
दिव्ये योषणे बृहती सुरुक्मे अधि श्रियं शुक्रपिशं दधाने ॥

(ऋ० १०।११०।६)

**युवतयः :**

तमस्मेरा युवतयो युवानं मर्मृज्यमानाः परियन्त्यापः ॥

(ऋ० २।३५।४)

**स्मयमानाभिः—शिवाभिः :**

शिवाभिर्न स्मयमानाभिरागात् पतन्ति मिहः स्तनयन्त्यभ्रा ॥

(ऋ० ९।७९।२)

**सिञ्चतीः :**

त्वे धर्माण आसते जुहूभिः सिञ्चतीरिव ॥

(ऋ० १०।२१।३)

**जोषयेते :**

उभे भद्रे जोषयेते न मेने गावो न वाश्रा उपतस्थुरेवैः ॥

(ऋ० १।९५।६)

**कन्या—(कन्या) :**

कन्यावाचक उपमान १ है :

कन्या इव वहतुमेतवा अञ्ज्यञ्जाना अभिचाकशीमि ।
यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्य धारा अभि तत् पवन्ते ॥

(ऋ० ४।५८।९)

**पुत्र :**

पुत्रवाचक उपमान १५ हैं। पुत्रः, सूनुः, तनयम्, अपत्याय, पुमांसं-जातम्, स्वजेन्यम्, वीराः, ससृवांसम्, पितुः-वयः, महिषी—ये १० पुत्रावाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**पुत्रः :**

पितुर्न पुत्राः ऋतुं जुषन्त श्रोषन् ये अस्य शासं तुरासः ॥

(ऋ० १।६८।६)

पुत्रो न जातो रण्वो दुरोणे वाजी न प्रीतो विशो वितारीत् ॥

(ऋ० १।६९।५)

अव स्पृधि पितरं योधि विद्वान् पुत्रोयस्ते सहसः सूनञ्जे ॥

(ऋ० ५।३।९)

आ हि द्यावापृथिवी अग्न उभे सदा पुत्रो न मातरा ततन्थ ॥

(ऋ० १०।१।७)

**सूनुः :**

बृहती इव सूनवे रोदसी गिरो होता मनुष्यो न दक्षः ॥

(ऋ० १।५९।४)

रथिर्न चित्रा सूरो न संदृगायुर्न प्राणो नित्यो न सूनुः ॥

(ऋ० १।६६।१)

रण्वः पुरीव जूर्यः सूनुर्न त्रययाय्यः ॥

(ऋ० ६।२।७)

**तनयम् :**

जन्मेष नित्यं तनयं जुषस्व स्तोमं मे अग्ने तन्वा सुजात ॥

(ऋ० ३।१५।२)

**अपत्याय :**

त्वं भुवना जनयन्नभिक्रन्नपत्याय जातवदो दशस्यन् ॥

(ऋ० ७।५।७)

**पुमांसं जातम् :**

दश स्वसारो अग्रुवः समीचीः पुमांसं जातमभिसंरभन्ते ॥

(ऋ० ३।२९।१३)

**स्वजेन्यम् :**

अवस्य यस्य देवणे स्वेदं पथिषु जुह्वति ।
अमीमह स्वजेन्यं भूमा पृष्ठेव रुरुहुः ॥

(ऋ० ५।७।५)

**वीराः :**

पुरः सदः शर्मसदो न वीरा अनवद्या पतिजुष्टेव नारी ॥

(ऋ० १।७३।३)

**सधृवांसं :**

सधृवांसमिव त्मनाग्निमित्था तिरोहितम् ।
ऐनं नयन्मातरिश्वा परावतो देवेभ्यो मथितं परि ॥

(ऋ० ३।९।५)

**पितुः-वयः :**

अतिथिं मानुषाणां पितुर्न यस्यासया ।
अमी च विश्वे अमृतास आ वयो हव्या देवेष्वा वयः ॥

(ऋ० १।२२७।८)

**महिषो :**

महिषीव त्वत् रयिस्त्वद् वाजा उदीरते ॥

(ऋ० ५।२५।७)

**वृद्ध (जर्यः) :**

वृद्धवाचक उपमान १ है :

रण्वः पुरीव जूर्यः सूनुर्न त्वयाय्यः ॥

(ऋ० ६।२।७)

**पूर्वजपुरुष (पूर्ववत्) :**

पूर्वजपुरुषवाचक उपमान २ हैं :

मनुष्वदग्ने अङ्गिरस्वदङ्गिरो ययातिवत्सदने पूर्ववच्छुचे ।
अच्छ याह्या वहा दैव्यं जनमासादय बर्हिषि यक्षि च प्रियम् ॥

(ऋ० १।३१।१७)

**पुराणवद् :**

अपि वृश्चपुराणवद्वततेरिव गुष्पितमोजोदासस्य दम्भय ॥

(ऋ० ८।४०।६)

**युवक (मर्य) :**

युवकवाचक उपमान २ हैं :

अग्निं विश्वायुवेपसं मर्यं न वाजिनं हितम् । सप्तिं न वाजयामसि ॥

(ऋ० ८।४३।२५)

याभिः सोमो मोदते हर्षते च कल्याणीभिर्युवतिभिर्न मर्यः ॥

(ऋ० १०।३०।५)

**शिशु :**

शिशुवाचक उपमान ११ हैं । शिशुः, वत्सासः, पाकाय, कुमारः—ये ४ शिशु-वाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**शिशुः :**

कृष्णप्रुतौ वेविजे अस्य सक्षिता उभा तरति शिशुग् ॥

(ऋ० १।१४०।३)

पुरुप्रैषस्तनुरियंज्ञसाधनोऽच्छिद्रोतिः शिशुरादत्त संरभः ॥

(ऋ० १।१४५।३)

उत स्म यं शिशुं यथा नवं जनिष्टारणी ॥

(ऋ० ५।९।३)

त्वां विश्वे अमृत जायमानं शिशुं न देवा अभिसंनवन्ते ॥

(ऋ० ६।७।४)

आ यं हस्ते न खादिनं शिशुं जातं न बिभ्रति ॥

(ऋ० ६।१६।४०)

चित्रः शिशुः परि तमांस्यक्तून्प्रमातृभ्यो अधिकनिक्रदद्गाः ॥

(ऋ० १०।११।२)

शिशुं न त्वा जेन्यं वर्धयन्ती माता बिभर्ति सचनस्यमाना ॥

(ऋ० १०।४।३)

ऋतायिनी मायिनी संदधाते मित्वा शिशुं जज्ञतुर्वर्धयन्ती ॥

(ऋ० १०।५।३)

**वत्सासः :**

ते जानत स्वमोक्यं सं वत्सासो न मातृभिः मिथो नसन्त जामिभिः ॥

(ऋ० ८।७२।१४)

**पाकाय :**

तद् भद्रं तव दंसना पाकाय चिच्छदयति ॥

(ऋ० ३।९।७)

**कुमारः :**

प्र मातुः प्रतरं गुह्यमिच्छन कुमारी न वीरुधः सर्पदुर्वीः ॥

(ऋ० १०।७९।३)

**मित्र :**

मित्रवाचक उपमान १३ हैं। मित्रम्, सखा, आपिः, साची—ये ४ मित्रवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

दधुष्ट्वा भृगवो मानुषेष्वा रयिं न चारुं सुहवं जनेभ्यः।
होतारमग्ने अतिथिं वरेण्यं मित्रं न शेवं दिव्याय जन्मने ॥

(ऋ० १।५८।६)

धृत प्रतीकं व ऋतस्य धूर्षदमग्निं मित्रं न समिधान ऋञ्जते ॥

(ऋ० १।१४३।७)

रथमिव वेद्यं शुक्रशोचिषमग्निं मित्रं न क्षितिषु प्रशंस्यम् ॥

(ऋ० २।२।३)

मित्रं न यं सुधितं भृगवो दधुर्वनस्पतावीड्यमूर्ध्वशोचिषम् ॥

(ऋ० ६।१५।२)

प्र प्रवयममृतं जातवेदसं प्रियं मित्रं न शंसिषम् ॥

(ऋ० ६।४८।१)

यज्ञेभिरद्भुतक्रतुं यं कृपा सूदयन्त इत्। मित्रं न जने सुधितमृतावनि ॥

(ऋ० ८।२३।८)

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम् ॥

(ऋ० ८।८४।१)

**सखा :**

आ हि ष्मा सूनवे पितापिर्यजत्यापये । सखा सख्ये वरेण्यः ॥
(ऋ० १।२६।३)

त्वं जामिर्जनानामग्ने मित्रो असि प्रियः । सखा सखिभ्य ईड्यः ॥
(ऋ० १।७५।४)

मवा नो अग्ने सुमना उपेतौ सखेव सख्ये पितरेव साधुः ॥
(ऋ० ३।१८।१)

स नो वस्व उपमास्यूर्जोनपान्माहिनस्य । सखेवसो जरितृभ्यः ॥
(ऋ० ८।७१।९)

**आपिः :**

आ हि ष्मा सूनवे पितापिर्यजत्यापये ॥
(ऋ० १।२६।३)

**साचीव :**

प्रवत्ते अग्नेजनिमा पितूयतः साचीव विश्वाभुवनान्यूञ्जसे ॥

**अतिथि (अतिथिः) :**

अतिथिवाचक उपमान २९ हैं :

दधुष्ट्वा भृगवो मानुषेष्वा रयिं न चारुं सुहवं जनेभ्यः ।
होतारमग्ने अतिथिं वरेण्यं मित्रं न शेवं दिव्याय जन्मने ॥
(ऋ० १।५८।६)

स्योनशीरतिथिर्न प्रीणानो होतेव सद्म विधतो वितारीत् ॥
(ऋ० १।७३।१)

अतिथिं मानुषाणां पितुर्न यस्यासया ।
अमी च विश्वे अमृतास आ वयो हव्या देवेष्वा वयः ॥
(ऋ० २।१२७।८)

यतो घृतक्षीरतिथिरजायत वह्निर्वेधा अजायत ॥
(ऋ० १।१२८।४)

होत्राभिरग्निर्मनुषः स्वध्वरो राजाविशामतिथिश्चारुरायवे ॥
(ऋ० २।२।८)

हुवे वः सुद्योत्मानं सुवृक्तिं विशामग्निमतिथिं सुप्रयसम् ॥
(ऋ० २।४।१)

हव्यवाळग्निरजरश्चनोहितो दूलभो विशामतिथिर्विभावसुः ॥
(ऋ० ३।२।२)

विश्वेषामदितिर्यज्ञियानां विश्वेषामतिथिर्मानुषाणाम् ॥
(ऋ० ४।१।२०)

यस्ते भरादन्नियते चिदन्नं निशिषन्मन्द्रमतिथिमुदीरव ॥

(ऋ० ४।२।७)

मार्जाल्यो मृज्यते स्वे दमूनाः कवि प्रशस्तो अतिथिः शिवो नः ॥

(ऋ० ५।१।८)

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोण इमं नो यज्ञमुपयाहि विद्वान् ॥

(ऋ० ५।४।५)

त्वामग्ने अतिथिं पूर्व्यं विशः शोचिष्केशं गृहपतिं निषेदिरे ॥

(ऋ० ५।८।२)

अधा हि विक्ष्वीड्योऽसि प्रियो नो अतिथिः ॥

(ऋ० ६।२।७)

कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयन्त देवाः ॥

(ऋ० ६।७।१)

इममूषु वो अतिथिमुषर्बुधंविश्वासां विशां पतिमृञ्जसे गिरा ॥

(ऋ० ६।१५।१)

द्युतानं वो अतिथिं स्वर्णरमग्निं होतारं मनुषः स्वध्वरम् ॥

(ऋ० ६।१५।४)

अग्निमग्निं वः समिधा दुवस्यत प्रियं प्रियं वो अतिथिं गृणीषणि ॥

(ऋ० ६।१५।६)

आ जातं जातवेदसि प्रियं शिशीतातिथिम् ॥

(ऋ० ६।१६।४२)

तमिद्दोषा तमुषसियविष्ठमग्निमत्यं न मर्जयन्त नरः ।
निशिशाना अतिथिमस्य योनौ दीदाय शोचिराहुतस्य वृष्णः ॥

(ऋ० ७।३।५)

अमियः पूरुं पृतनासु तस्थौ द्युतानो दैव्यो अतिथिः शुशोच ॥

(ऋ० ७।८।४)

अमूरः कविरदितिर्विवस्वान्त्सुसंसन्मित्रो अतिथिः शिवो नः ॥

(ऋ० ७।९।३)

प्रशंसमानो अतिथिर्न मित्रियोऽग्नी स्थो न वेद्यः ॥

(ऋ० ८।१९।८)

अतिथिं मानुषाणां सूनुं वनस्पतीनाम् । विप्रा अग्निमवसे प्रत्नमीलते ॥

(ऋ० ८।२३।२५)

समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् ॥

(ऋ० ८।४४।१)

इयं ते नव्यसी मतिरग्ने अधाय्यस्मदा ।
मन्द्र सुजात सुक्रतोऽमूर दस्मातिथे ॥
(ऋ० ८।७४।७)

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम् ॥
(ऋ० ८।८४।१)

मानो हृणीतामतिथिर्वसुरग्निः पुरु प्रशस्त एषः ॥
(ऋ० ८।१०३।१२)

प्रत्यर्धिं देवस्यदेवस्यमह्ना श्रियात्वग्निमतिथिं जनानाम् ॥
(ऋ० १०।१।५)

वसुं न चित्रमहसं गृणीषे वामं शेवमतिथिमद्विषेष्यम् ॥
(ऋ० १०।१२२।१)

**मनुष्य :**

मनुष्यवाचक उपमान ५ हैं। मनुष्यः, नरां, मर्तांय, क्षितिः, आयुम्—ये ५ मनुष्यवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**मनुष्यः :**

बृहती इव सूनवे रोदसी गिरो होता मनुष्यो न दक्षः ॥
(ऋ० १।५९।४)

**नरां :**

स यो वृषा नरां न रोदस्योः श्रवोभिरस्ति जीवपीत सर्गः ॥
(ऋ० १।१४९।२)

**मर्तांय :**

ता वृधन्तावनुद्यून्मर्तांय देवावदमा ॥
(ऋ० ५।८६।५)

**क्षितिः :**

रुशद् वसानः सुदृशीकरूपः क्षितिर्नरायां पुरुवारो अद्यौत् ॥
(ऋ० ४।५।१५)

**आयुं :**

आयुं न यं नमसा रातहव्या अञ्जन्ति सुप्रयसं पञ्चजनाः ॥
(ऋ० ६।११।४)

**सामाजिक स्तर के द्योतक उपमान :**

**धनवान् (रेवत्) :**

धनवान् व्यक्ति के वाचक उपमान ४ हैं :

स नो रेवत्समिधानः स्वस्तये संददस्वान्रयिमस्मासुदीदिहि ॥
(ऋ० २।२।६)

अग्न एषु क्षयेष्वा रेवन्नः शुक्रदीदिहि द्युमत्पावक दीदिहि ॥
(ऋ० ५।२३।४)

भरद्वाजे समिधानो यविष्ठ्य रेवन्नः शुक्र दीदिहि द्युमत्पावक दीदिहि ॥
(ऋ० ६।४८।७)

सरेवाँ इव विश्वपतिर्दैव्यः केतुः श्रृणोतु नः । उक्थैरग्निर्बृहद्भानुः ॥
(ऋ० १।२७।१२)

**दाता :**

दाता व्यक्तिवाचक उपमान ३ हैं। कियते गुरु-भारं, पशुषे, धेनोः-मंहना ये ३ दाता व्यक्तिवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**कियते गुरुं भारं :**

इदं मे अग्ने कियते पावकाभिनते गुरुं भारं न मन्म ।
बृहद् वधाथ धृषता गभीरं यह्वं पृष्ठं प्रयसा सप्त धातु ॥
(ऋ० ४।५।६)

**पशुषे :**

प्र वो महे सहसा सहस्वत उषर्बुधे पशुषे नाग्नये स्तोमोबभूत्वग्नये ॥
(ऋ० १।१२७।१०)

**धेनोः मंहना :**

शुचि घृतं न तप्तमघ्न्यायाः स्पार्हा देवस्य मंहनेव धेनोः ॥
(ऋ० ४।१।६)

**हितैषी पुरुष (जने शेवः) :**

हितैषी पुरुषवाचक उपमान १ है :
जने न शेव आहूर्यः सन् मध्ये निषत्तो रण्वो दुरोणे ॥
(ऋ० १।६९।४)

**एकपत्नीव्रत (एकाम्) :**

एकपत्नीव्रतवाचक उपमान १ है :
व्यङ्गैर्भिदिद्युतानः सधस्थ एकामिव रोदसी आ विवेश ॥
(ऋ० ३।७।४)

**चोर :**

चोरवाचक उपमान ४ हैं। तायुः और तस्करा—ये २ चोरवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**तायुः :**

पश्वा न तायुं गुहा चतन्तं नमो युजानं नमो वहन्तम् ॥
(ऋ० १।६५।१)

वाजो नु ते शवसस्पात्वन्तमुरुं दोघं धरुणं देव रायः ।
पदं न तायुर्गुहा दधानो महो राये चितयन्नत्रिमस्पः ॥
(ऋ० ५।१५।५)

सद्यो न स्पन्द्रो विषितो धवीयानृणो न तायु रतिधन्वा राट् ॥
(ऋ० ६।१२।५)

**तस्करा :**

तनूत्यजेव तस्करा वनर्गू रशनाभिर्दशभिरप्रधीताम् ।
इयं ते अग्ने नव्यसी मनीषा युक्ष्वा रथं न शुचयद्भिरद्भिः ॥
(ऋ० १०।४।६)

**पेशे से सम्बद्ध उपमान :**

**सारथि एवं रथिक :**

रथिक एवं सारथिवाचक उपमान ५ हैं। रथी, रथासः, सारथिः—ये ३ सारथिवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**रथी :**

परित्रिविष्ट्यध्वरं यात्यग्नी रथीरिव । आदेवेषु प्रयो दधत् ॥
(ऋ० ४।१५।२)

युक्ष्वा हि देवहूतमाँ अश्वाँ अग्ने रथीरिव ॥
(ऋ० ८।७५।१)

अग्नेः पूर्वे भ्रातरो अर्थमेतं रथीयाध्वानमन्वावरीयुः ॥
(ऋ० १०।५१।६)

**रथासः :**

प्रत्यस्य श्रेणयो ददृश्रएकं नियानं बहवो रथासः ।
बाहू यदग्ने अनुमर्मृजानोन्यद्डस्तानामन्वेषि भूमिम् ॥
(ऋ० १०।१४२।५)

**सारथिः :**

आदीं भगो न हव्यः समस्मदा वोळ्हुर्नरश्मीन्त्समयंस्तसारथिः ॥
(ऋ० १।१४४।३)

**पशुपालक :**

पशुपालक व्यक्ति के वाचक उपमान ४ हैं। पशुपा, गोपाः—ये २ पशुपालक-वाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**पशुपा :**

त्वं ह्यग्ने दिव्यस्य राजसित्वं पार्थिवस्य पशुपा इव त्मना ॥
(ऋ० १।१४४।६)

पर्यग्निः पशुपा न होता त्रिविष्ट्येति प्रदिव उराणः ।
(ऋ० ४।६।४)

प्र सप्तयः प्र सनिषन्त नो धियः पुरश्चरन्ति पशुपा इव त्मना ॥
(ऋ० १०।१४२।२)

**गोपाः :**

जातो यदग्ने भुवना व्यख्यः पशून्न गोपाः इर्यः परिज्मा ॥
(ऋ० ७।१३।३)

**अश्वपालक :**

अश्वपालकवाचक उपमान १ है—

चित्तिमचित्तिं चिनवद् विविद्वान् पृष्ठेव वीता वृजिना च मर्तान् ॥

(ऋ० ४।२।११)

**लोहार :**

लोहारवाचक उपमान २ हैं। ध्माता, अयःधमन्तः—ये २ लोहारवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**ध्माता :**

यदीमह त्रितो दिव्युपध्मातेव धमति शिशीते ध्मातरी यथा ॥

(ऋ० ५।९।५)

**अयःधमन्तः :**

सुकर्माणः सुरुचो देवयन्तोऽयो न देवा जनिमा धमन्तः ॥

(ऋ० ४।२।१७)

**बढ़ई (क्रन्ता) :**

बढ़ईवाचक उपमान १ है—

रथं न क्रन्तो अपसाभुरिजोर्ऋतं येमुः सुध्य आशुषाणाः ॥

(ऋ० ४।२।१४)

**शिकारी (पृथ्वीं प्रसितिं तक्ववीः) :**

शिकारीवाचक उपमान २ हैं—

कृणुष्वपाजः प्रसितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवाँ इभेन ॥

(ऋ० ४।४।१)

**तक्ववीः :**

सदर्शतश्रीरतिथिर्गृहे गृहे वने वने शिश्रिये तक्ववीरिव ॥

(ऋ० १०।९१।२)

**नापित (वप्ता) :**

नापितवाचक उपमान १ है—

यदा ते वातो अनुवाति शोचिर्वप्तेव श्मश्रु वपसि प्रभूम ।

(ऋ० १०।१४२।४)

**भारवाहक (भारभृत्) :**

भारवाहकवाचक उपमान १ है :

मानो अस्मिन्महाधने परावर्भारभृद्यथा ॥

. . . . . (ऋ० ८।७५।१२)

**प्यासा (तातृषाणः) :**

प्यासावाचक उपमान १ है :

आ यो वना तातृषाणो न भाति वार्षं पथा रथ्येव स्वानीत् ॥

(ऋ० २।४।६)

अवयववाची उपमान :

आँख (चक्षुषि) :

आँखवाचक उपमान १ है :

अग्निमच्छा देवयतां मनांसि चक्षुषीव सूर्ये संचरन्ति ।।

(ऋ० ४।१।४)

हनु (हनवो) :

हनुवाचक उपमान १ है :

तिग्मा अस्य हनवो न प्रति धृषे सुजाम्भः सहसो यहुः ॥

(ऋ० ८।६०।१३)

वक्षःस्थल (अप्सो) :

वक्षःस्थलवाचक उपमान १ है :

प्रतित्वा शक्सी बदद्गिरावप्सो न योधिषत् । यस्ते शत्रुत्वमाचके ।।

(ऋ० ८।४५।५)

गर्भ (गर्भः) :

गर्भवाचक उपमान १ है :

अरण्योर्निहितो जातवेदा गर्भ इव सुधितो गर्भिणीषु ।।

(ऋ० ३।२९।२)

भावात्मक उपमान —

भावात्मक उपमान १९ हैं इनमें मन, बुद्धि, आत्मा आदि भावात्मक पदार्थों से सादृश्य दिखाया गया है। जैसे—

आत्मा (आत्मा) :

आत्मावाचक उपमान १ है :

पुरु प्रशस्तो अमतिर्न सत्य आत्मेव शेवो विधिषाय्योभूत् ।।

(ऋ० १।७३।२)

मन (मनः) :

मनवाचक उपमान २ हैं :

मनो न योऽध्वनः सद्य एत्येकः सत्रा सूरोवस्व ईशे ।।

(ऋ० १।७१।९)

प्रदेवत्रा ब्रह्मणे गातुरेत्वपो अच्छा मनसो न प्रयुक्ति ।।

(ऋ० १०।३०।१)

बुद्धि (क्रतुः) :

बुद्धिवाचक उपमान ३ हैं :

दुरोकशोचिः क्रतुर्न नित्यो जायेवयोनावरं विश्वस्मै ।।

(ऋ० १।६६।५)

क्षेमो न साधुः क्रतुर्न भद्रो भुवत् स्वाधीर्होता हव्यवाट् ।।

(ऋ० १।६७।२)

अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदि स्पृशम् ।
ऋध्यामा त ओहैः ॥

(ऋ० ४।१०।१)

**आयु (आयुः) :**

आयुवाचक उपमान १ है :
रयिर्न चित्रा सूरो न संदृगायुर्न प्राणो नित्यो न सूनुः ॥

(ऋ० १।६६।१)

**वाणी (वाणीः) :**

वाणीवाचक उपमान १ है :
दूलहा चित्स प्र भेदति द्युम्ना वाणीरिव त्रितः ॥

(ऋ० ५।८६।१)

**ज्ञानी का उपदेश (चिकितुषः शासुः) :**

ज्ञानी का उपदेशवाचक उपमान १ है :
रयिर्न यः पितृवित्तो वयोधाः सुप्रणीतिश्चिकितुषो न शासुः ॥

(ऋ० १।७३।१)

**स्तुति (विषो) :**

स्तुतिवाचक उपमान १ है :
विषो न द्युम्ना नि युवे जनानां तव क्षत्राणि वर्धयन् ॥

(ऋ० ८।१९।३३)

**पाप (अंहः) :**

पापवाचक उपमान १ है :
ऊतीष बृहतो दिवो द्विषो अंहो न तरति ॥

(ऋ० ६।२।४)

**भय :**

भयवाचक उपमान १ है :
अयमग्निरुरुष्यत्यमृतादिव जन्मनः ।

(ऋ० १०।१७६।४)

**भोग (भुजि) :**

भोगवाचक उपमान १ है :
आसवं सवितुर्यथा भगस्येव भुजि हुवे । अग्निं समुद्रवाससं ॥

(ऋ० ८।१०२।६)

**पुष्टि (पुष्टिः) :**

धनाभिवृद्धि (पुष्टि) वाचक उपमान २ हैं :
पुष्टिर्न रण्वा क्षितिर्न पृथ्वी गिरिर्न भुज्म क्षोदो न शंभु ॥

(ऋ० १।६५।५)

अस्य रण्वा स्वस्येव पुष्टिः संवृष्टिरस्यहि यानस्य दक्षोः ॥

(ऋ० २।४।४)

**बृहती :**

विस्तारदाचक उपमान १ है :

बृहती इव सूनवे रोदसी गिरो होतामनुष्यो न दक्षः ॥

(ऋ० १।५९।४)

**यज्ञ :**

यज्ञवाचक उपमान ३ हैं। अध्वरा, धर्मः, मेधसातो—ये ३ यज्ञवाचक पद उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

**अध्वरा :**

प्राची अध्वरेव तस्थतुः सुमेके ऋतावरी ऋत जातस्य सत्ये ॥

(ऋ० ३।६।१०)

**धर्मः :**

धर्मो न वा जजठरोऽदब्धः शश्वतो दमः ॥

(ऋ० ५।१९।४)

**मेधसातो :**

सहस्रसां मेधसाताविव त्मनाग्निं धीमिः सपर्यत ॥

(ऋ० ८।१०३।३)

चतुर्थ अध्याय

# उपमा अलंकार के विभिन्न भेद

प्रथम अध्याय में हम देख चुके हैं कि उपमा अलंकार का क्रमशः विकास हुआ है। भरत मुनि ने उपमा के ५ भेदों का वर्णन किया था। पण्डितराज जगन्नाथ तक आते-आते उपमा के १६० भेद हो गये।

भारत मुनि से पूर्व यास्क ने अपने निरुक्त में १२ उपमा प्रतिपादक वाक्यांशों एवं इव, यथा, वत्, न, चित्, नु, आ और धा—इन ८ उपमावाचक शब्दों का प्रयोग किया है तथा—(१) अधिक प्रसिद्ध गुणवाले उपमान से छोटे उपमेय की तुलना को अधिकोपमा, (२) छोटे उपमान के साथ बड़े उपमेय की उपमा को हीनोपमा, (३) इव द्वारा द्रव्य के सादृश्य-बोधन को द्रव्योपमा, (४) यथा द्वारा क्रिया के सादृश्य बोधन को कर्मोपमा, (५) प्राणी से की गई तुलना को भूतोपमा (६) रूप के साथ को गई उपमा को रूपोपमा, (७) वर्ण के साथ की गई तुलना को वर्णोपमा (८) वति प्रत्यय द्वारा क्रिया से भिन्न सिद्ध पदार्थों की उपमा को सिद्धोपमा और वाचक आदि पदों के लोप होने पर लुप्तोपमा को माना है।

विश्व-वाङ्मय का प्राचीनतम ग्रन्थ होने के कारण ऋग्वेद के अग्नि-सूक्तों में उपमा-भेद अपने पूर्ण विकसित रूप में उपलब्ध नहीं होते, केवल कुछ ही उदाहरण मिलते हैं जिन्हें इन विकसित भेदों का पूर्वरूप कहा जा सकता है। प्राप्त उपमा-भेद संख्या में १९ हैं। पूर्णोपमा के प्रमुख ६ भेदों में से ३ भेद, लुप्तोपमा के, १६ भेदों में से १५ भेद तथा मालोपमा को मिलाकर कुल १९ उपमा-भेद उपलब्ध होते हैं। २४५ ऋचाओं में पूर्णोपमा, १०८ ऋचाओं में लुप्तोपमा तथा १३६ ऋचाओं में मालोपमा का प्रयोग हुआ है जिनका क्रमिक विवरण इस प्रकार है—"उपमान और उपमेय का उनमें भेद होने पर भी परस्पर साधारण धर्म से सम्बद्ध होना उपमा कहा जाता है।" इसके दो भेद हैं—पूर्णोपमा और लुप्तोपमा।

पूर्णोपमा—"जहाँ उपमान, उपमेय, साधारण धर्म और वाचक शब्द—उपमा के ये चारों अंग स्पष्टतया निर्दिष्ट रहा करते हैं वहाँ पूर्णोपमा होती है।" इसके ६ भेद हैं—(१) वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा (२) वाक्यगा आर्थी पूर्णोपमा (३) समासगा श्रौती पूर्णोपमा (४) समासगा आर्थी पूर्णोपमा (५) तद्धितगा श्रौती पूर्णोपमा (६) तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा (७) तद्धितगा श्रौती पूर्णोपमा (८) तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा।

उनमें से केवल प्रथम, तृतीय और षष्ठ भेद के उदाहरण मिलते हैं, जो निम्नलिखित हैं :—

(१) वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा :

जहाँ यथा, इव, वा आदि शब्दों के द्वारा श्रुतिमात्र से ही उपमानोपमेय भाव की प्रतीति होती है तथा उपमान, उपमेय, साधारण धर्म और वाचक शब्द उपमा के ये चारों अंग स्पष्टतया असमस्त पद द्वारा प्रतिपाद्य होते हैं वहाँ वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा होती है।

निम्नलिखित १६३ ऋचाओं में वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा का प्रयोग हुआ है, जैसे—

अश्वं न त्वा वारवन्तं वन्दध्या अग्निं नमोभिः ।
सम्राजन्तमध्वराणाम् ॥

(ऋ० १।२७।१)

अयालवाले सुन्दर अश्व के समान ज्वालाओं से प्रदीप्त अग्नि को नमस्कारों से सुपूजित करते हैं।

उपमान—वारवन्तं अश्वं, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म सम्राजन्तं, सादृश्य-वाचक—न है। यास्क के अनुसार यहाँ भूतोपमा और हीनोपमा है।

रथो न विक्ष्वृञ्जसान आयुषु व्यानुषग्वार्या देव ऋण्वति ॥

(ऋ० १।५८।३)

अग्निदेव रथ के समान आयुजनों में अग्रगामी होकर सब लोगों में क्रम से स्वीकार करने योग्य धन लाता है।

उपमान—रथः, उपमेय—देव, साधारण धर्म—विक्षु ऋञ्जसानः वार्या विऋण्वति, सादृश्यवाचक—न है। हीनोपमा है।

आ सूर्ये न रश्मयो ध्रुवासो वैश्वानरे दधिरेऽग्ना वसूनि ॥

(ऋ० १।५९।३)

जिस तरह सूर्य में स्थायी प्रकाश—किरणें रहती हैं उसी प्रकार वैश्वानर अग्नि में सभी धन रहते हैं।

उपमान—सूर्ये ध्रुवासः रश्मयः, उपमेय—वैश्वानरे अग्ना वसूनि, साधारण धर्म—आ दधिरे, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

तं त्वा वयं पतिमग्ने रयीणां प्रशंसामो मतिभिर्गोतमासः ।
आशुं न वाजंभरं मर्जयन्तः ॥

(ऋ० १।६०।५)

हे अग्ने अश्व के समान अन्नदाता तुम्हारी गोतम गोत्रोत्पन्न हम प्रशंसा करते हैं। उपमान—आशुं, उपमेय—अग्ने तं त्वा, साधारण धर्म—वाजंभरं, सादृश्य-वाचक—न है। भूतोपमा है।

श्वसित्यप्सु हंसो न सीदन् क्रत्वा चेतिष्ठो विशामुषर्भुत् ॥

(ऋ० १।६५।९)

उषःकाल में जागनेवाला, अपने कर्म से प्रजाओं को जगानेवाला (अग्नि) हंस के समान जल में बैठकर प्राण धारण करता है अर्थात्—गति करता है।

उपमान—हंसः, उपमेय—विशाम् चेतिष्ठः, साधारण धर्म—अप्सु सीदन् श्वसिति, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

तं वश्चराथा वयं वसत्यास्तं न गावो नक्षन्त इद्धम् ॥

(ऋ० १।६६।९)

जिस प्रकार सूर्यास्त होने पर गौयें घर को जाती हैं उसी प्रकार हम इस अग्नि को प्राप्त करते हैं।

उपमान—गावः अस्तं, उपमेय—वयंतं, साधारण धर्म—नक्षन्ते, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

उषो न जारो विभावोस्रः संज्ञातरूपश्चिकेतदस्मै ॥

(ऋ० १।६९।९)

उषा-प्रेमी सूर्य के समान प्रख्यात (अग्नि) इस मनुष्य को जाने।

उपमान—उषः जारः, उपमेय—संज्ञातरूपः, साधारण धर्म—विभावा, सादृश्य-वाचक—न है। अधिकोपमा है।

आदीं राज्ञे न सहीयसे सचा सन्ना दूत्यं भृगवाणो विवाय ॥

(ऋ० १।७१।४)

जैसे मित्र बना राजा दूसरे प्रबल राजा के पास दूत भेजता है उसी प्रकार भृगुओं ने इस (अग्नि) को दूत बनाया।

उपमान—सहीयसे राज्ञे दूत्यं, उपमेय—भृगवाणः, साधारण धर्म—दूत्यं आ विवाय, सादृश्य वाचक—न है।

अग्निं विश्वा अभि पृक्षः सचन्ते समुद्रं न स्रवतः सप्त यह्वीः ॥

(ऋ० १।७१।७)

जिस प्रसार सात महान् नदियाँ बहती हुई समुद्र को प्राप्त होती हैं उसी प्रकार सम्पूर्ण अन्न अग्नि को प्राप्त होते हैं।

उपमान—सप्त यह्वीः स्रवतः समुद्रं, उपमेय—विश्वा पृक्षः अग्निं, साधारण धर्म—अभिसचन्ते, सादृश्यवाचक—न है।

मनो न योऽध्वनः सद्य एत्येकः सता सूरो वस्व ईशे ॥

(ऋ० १।७१।९)

मन के समान शीघ्रगामी जो अकेले ही दिव्य मार्ग से शीघ्र गमन करता है। उपमान—मनः, उपमेय—यः, साधारण धर्म—सद्यएति, सादृश्यवाचक—न है।

नभो न रूपं जरिमा मिनाति पुरा तस्या अभिशस्तेरधीहि ॥

(ऋ० १।७१।१०)

जैसे मेघ सूर्य की किरणों को ढक लेता है उसी प्रकार रूप को बुढ़ापा नष्ट कर देता है।

उपमान—नभः, उपमेय—जरिमा, साधारण धर्म—रूपं मिनाति, सादृश्य-वाचक—न है। अधिकोपमा है।

अध क्षरन्ति सिन्धवो न सृष्टाः प्र नीचीरग्ने अरुषीरजानन् ॥

(ऋ० १।७२।१०)

जिस प्रकार प्रेरित हुई नदियाँ फैलती हैं उसी प्रकार अग्नि का तेज सभी दिशाओं में फैलता है।

उपमान—सृष्टाः सिन्धवः, उपमेय—अग्नेः, साधारण धर्म—अध क्षरन्ति, सादृश्यवाचक—न है

अग्निं होतारं मन्ये दास्वन्तं वसुं सूनुं सहसो जातवेदसं विप्रं न जातवेदसम्।

(ऋ० १।१२७।१)

सम्पूर्ण उत्पन्न हुए पदार्थों को जानने वाले अग्नि का वेदज्ञ ब्राह्मण के समान सम्मान करता हूँ।

उपमान—जातवेदसं विप्रं, उपमेय—अग्निं, साधारणधर्म—जातवेदसं, सादृश्य-वाचक—न है।

आदस्यायुर्ग्रमणवद् वीलु शर्म न सूनवे ॥

(ऋ० १।१२७।५)

जैसे पिता पुत्र के लिये सुखकर गृह देता है उसी प्रकार इस (अग्नि) के लिये हवि प्रदान करनी चाहिये। उपमान—सूनवे वीलु शर्म, उपमेय—अस्य आयुः, साधारण धर्म—ग्रमणवत्, सादृश्यवाचक—न है।

महि स्तोतृभ्यो मघवन्त्सुवीर्यं मघीरुग्री न शवसा ॥

(ऋ० १।१२७।११)

हे ऐश्वर्यवान् (अग्ने ! ) वीर पुरुष के समान अपने बल से शत्रुओं को नष्ट कर दो।

उपमान—उग्रः, उपमेय—मघवन्, साधारण धर्म—शवसा मघीः, सादृश्य-वाचक—न है।

स मानुषे वृजने शंतमो हितोऽग्निर्यज्ञेषु जेन्यो न विश्पतिः प्रियो यज्ञेषु विश्पतिः ॥

(ऋ० १।१२८।७)

वह अग्नि विजयी राजा की तरह यज्ञों में प्रजाओं का पालक और प्रिय है।

उपमान—जेन्यः विश्पतिः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—प्रियः विश्पतिः सादृश्यवाचक—न है।

वि यदस्थाद् यजतो वातचोदितो ह्वारो वक्वा जरणा अनाकृतः ॥

(ऋ० १।१४१।७)

वायु द्वारा परिचालित यजनीय (अग्नि) ह्वार पक्षी के समान बहुत शब्द करने वाला है।

उपमान—ह्वारः, उपमेय—वातचोदितः यजतः, साधारण धर्म—वक्वा, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

तं त्वा नु नव्यं सहसो युवन् वयं भगं न कारे महिरत्न धीमहि ॥

(ऋ० १।१४१।१०)

हम सूर्य के समान उस (अग्नि) की स्तुतिकाल में स्तोत्रों से उपासना करते हैं।

उपमान—भगं, उपमेय—तं, साधारण धर्म—कारे नु धीमहि, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

अमी च ये मघवानो वयं च मिहं न सूरो अतिनिष्टतन्युः ॥

(ऋ० १।१४१।१३)

बादलों की गर्जना के समान ये, हम और सम्पत्तिवान पुरुष जोर-जोर से स्तुति करते हैं।

उपमान—मिहं, उपमेय—अमी च ये वयं च मघवानः, साधारण धर्म—अतिनिष्टतन्युः, सादृश्यवाचक—न है।

य एको वस्वो वरुणो न राजति ॥

(ऋ० १।१४३।४)

जो (अग्नि) वरुण के समान सब धनों का स्वामी है।

उपमान—वरुणः, उपमेय—यः, साधारण धर्म—वस्वः राजति, सादृश्यवाचक—न है।

घृतातीकं व ऋतस्य धूर्षदमग्निं मित्रं न समिधान ऋञ्जते ॥

(ऋ० १।१४३।७)

तुम्हारे लिये यज्ञ के निर्वाहक और घी से प्रदीप्त अग्नि को मित्र समान प्रज्वलित करके विभूषित किया जाता है।

उपमान—मित्रं, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म—समिधान ऋञ्जते, सदृश्यवाचक—न है।

नित्ये चिन्नु यं सदने जगृभ्रे प्रशस्तिभिर्दधिरे यज्ञियासः।
प्रसूनयन्त गृभयन्त इष्टावश्वासो न रथ्यो रारहाणाः ॥

(ऋ० १।१४८।३)

रथ में जुते शीघ्रगामी अश्व की तरह जिस (अग्नि) को याजिकगण यज्ञ में सुन्दरता से बढ़ाते हैं।

उपमान—रारहाणाः रथ्यः अश्वासः, उपमेय—यं, साधारण धर्म—प्रसूनयन्त, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

स यो वृषा नरां न रोदस्योः श्रवोभिरस्ति जीवपीत सर्गः ॥

(ऋ० १।१४९।२)

मनुष्यों में बलवान् मनुष्य की तरह जो (अग्नि) द्युलोक एवं पृथ्वीलोक में अपने यश से विद्यमान है।

उपमान—वृषा नरां, उपमेय—यः, साधारण धर्म—श्रवोभिः अस्ति, सादृश्यवाचक—न है।

अग्निं देवासो मानुषीषु विक्षु प्रियं धुः क्षेष्यन्तो न मित्रम् ॥

(ऋ० २।४।३)

देवों ने सूर्य के समान हितकारी अग्नि को प्रजाओं में स्थापित किया है।

उपमान—मित्रं, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म—प्रियं क्षेष्यन्तः, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

शिशुं न जातमश्वरुरश्वा देवासो अग्निं जनिमन् वपुष्यन् ॥

(ऋ० ३।१।४)

जैसे घोड़ी नवजात शिशु की ओर दौड़ती है उसी प्रकार देवताओं ने अग्नि को उत्पन्न होते ही दीप्तिमान् किया।

उपमान—अश्वाः जातं शिशुं, उपमेय—देवासः जनिमन् अग्निम्, साधारण धर्म—वपुष्यन्, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

ऋत्वा दक्षस्य तरुषो विधर्मणि देवासो अग्निं जनयन्त चित्तिभिः।
रुरुवानं भानुना ज्योतिषा महामत्यं न वाजं सनिष्यन्नुप ब्रुवे ॥
(ऋ० ३।२।३)

अतिशय तेज से शोभित महान् अग्नि को अन्न से परिपूर्ण करने वाले अश्व के समान स्तुति करता हूँ।

उपमान—अत्यं, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म—वाजं सनिष्यन्, सादृश्य-वाचक—न है। भूतोपमा है।

सो अध्वराय परिणीयते कविरत्यो न वाजसातये चनोहितः ॥
(ऋ० ३।२।७)

अन्न से सम्पन्न वह ज्ञानी (अग्नि) हिंसारहित यज्ञ में अश्व के समान चारों ओर ले जाया जाता है।

उपमान—अत्यः, उपमेय—सः, साधारण धर्म—परिणीयते, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

विशां कविं विश्पतिं मानुषीरिषः सं सीमक्रण्वन्त्स्वधितिं न तेजसे ॥
(ऋ० ३।२।१०)

अन्न कामनायुक्त प्रजायें प्रजापालक (अग्नि) को तलवार के समान तीक्ष्ण ज्वालाओं से युक्त करती हैं।

उपमान—स्वधितिं, उपमेय—कविं विश्पतिं, साधारण धर्म—सं अक्रण्वन्, सादृश्यवाचक—न है।

प्र होत्रे पूर्व्यं वचोऽग्नये भरता बृहत्।
विपां ज्योतींषि बिभ्रते न वेधसे ॥
(ऋ० ३।१०।५)

पुरोहित के समान स्तुतियों के प्रकाश को धारण करने वाले अग्नि के लिए महान् प्राचीन स्तोत्र वाक्यों को कहो।

उपमान—वेधसे, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—होत्रे, सादृश्यवाचक—न है।

रथो न सरिनरमि वक्षि वाजमग्ने त्वं रोदसी नः सुभेके ॥
(ऋ० ३।१५।५)

हे अग्ने ! तुम रथ के समान देवों के निमित्त हव्य को ले जाओ।

उपमान—रथः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—वाजं वक्षि, सादृश्यवाचक-न है।

सहस्रिणं वाजमत्यं न सप्तिं ससवान्त्सन् स्तूयसे जातवेदः ॥
(ऋ० ३।२२।१)

हे जातवेद अग्ने ! तुम नाना रूपों से सम्पन्न वेगवान् अश्व की तरह हव्य रूप अन्न का सेवन करते हुए प्रशंसित होते हो।

उपमान सप्तिं अत्यं, उपमेय—जातवेदः, साधारण धर्म—वाजं ससवान् स्तूयसे, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

अश्वो न क्रन्दञ्जनिभिः समिध्यते वैश्वानरः कुशिकेभिर्युगे युगे ।।
(ऋ० ३।२६।३)

शब्द करता हुआ वैश्वानर अग्नि कुशिकों के द्वारा प्रतिदिन उसी प्रकार उत्पन्न किया जाता है जैसे घोड़ियों के द्वारा घोड़े ।

उपमान—जनिभिः अश्वः, उपमेय—कुशिकेभिः वैश्वानरः, साधारण धर्म—समिध्यते, सादृश्यवाचक—न है । भूतोपमा है ।

वृषो अग्निः समिध्यतेऽश्वो न देववाहनः ।।
(ऋ० ३।२७।१४)

अश्व के समान देवों को लाने वाला बलवान् अग्नि प्रज्वलित होता है।

उपमान—अश्वः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—देववाहनः, सादृश्यवाचक—न है । भूतोपमा है ।

यस्त्वा दोषा य उषसि प्रशंसात प्रियंवात्वा कृणवते हविष्मान् ।
अश्वो न स्वे दम आ हेम्यावान् तमंहसः पीपरो दाश्वांसम् ।।
(ऋ० ४।२।८)

स्वर्णरचित जीनवाले अश्व के समान श्रद्धा से हवि देने वाले को पाप रूप दरिद्रता से पार कर दो ।

उपमान—हेम्यावान् अश्वः, उपमेय—दाश्वांसम् तम्, साधारण धर्म—पीपरः, सादृश्यवाचक—न है । भूतोपमा है ।

अधा ह्यद् वयमग्ने त्वाया पड्भिर्हस्तेभिश्चकृमा तनूभिः ।
रथं न क्रन्तो अपसा भुरिजोर्ऋतं येमुः सुध्य आशुषाणाः ।।
(ऋ० ४।२।१४)

हे अग्ने ! यज्ञकर्ता बुद्धिमान् जन सत्यस्वरूप तुम्हें उसी प्रकार तैयार करते हैं जिस प्रकार शिल्पी रथ को ।

उपमान—क्रन्तः रथं, उपमेय—आशुषाणाः सुध्यः ऋतं, साधारण धर्म—येमुः, सादृश्यवाचक—न है ।

सुकर्माणः सुरुचो देवयन्तोऽयो न देवा जनिमा धमन्तः ।।
(ऋ० ४।२।१७)

शोभनकर्मा दीप्तियुक्त देवाभिलाषी दिव्य गुणयुक्त मनुष्य अपने जीवन को उसी प्रकार निर्मल करते हैं जिस प्रकार लोहार धौंकनी से लोहे को निर्मल करता है ।

उपमान—अयः, उपमेय—सुकर्माणः जनिमा, साधारण धर्म—धमन्तः, सादृश्यवाचक—न है ।

ऋतेन देवीरमृता अमृक्ता अर्णोभिरापो मधुमद्भिरग्ने ।
वाजी न सर्गेषु प्रस्तुभानः प्रसदमित् स्रवितवे दधन्युः ।।
(ऋ० ४।३।१२)

दिव्य नदियाँ युद्ध में जाने के लिए प्रस्तुत अश्व की तरह सत्य से प्रेरित हो कर सदैव बहने के लिये जाती हैं ।

उपमान—सर्गेषु प्रस्तुमानः वाजी, उपमेय—देवीः आपः, साधारण धर्म—दधन्युः, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

यो नो अरातिं समिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यत सं न शुष्कम् ॥
(ऋ० ४।४।४)

जो हमसे शत्रुता करता है उसे शुष्क घास के समान जला दो।

उपमान—शुष्कम् अतसं, उपमेय—अरातिं, साधारण धर्म—धक्षि, सादृश्यवाचक—न है।

पदं न गोरपगूलहं विविद्वानग्निर्मह्यं प्रेदुवोचन्मनीषाम् ॥
(ऋ० ४।५।३)

गो पद के समान छिपे हुए ज्ञानियों को महान ज्ञान को जानता हुआ अग्नि मेरे लिए उसका उपदेश करें।

उपमान—गोः पदं, उपमेय—मनीषां महि साम, साधारण धर्म—अपगूलहं, सादृश्यवाचक—न है।

इदं में अग्ने कियते पावकामिनते गुरुं भारं न मन्म।
बृहद् दधाथ धृषता गभीरं यह्वं पृष्ठं प्रयसा सप्त धातु ॥
(ऋ० ४।५।६)

हे पावक अग्ने! जैसे उदार मनुष्य थोड़ा माँगने वाले को भी बहुत अधिक दे देता है उसी प्रकार तुम मुझे बृहत् धन प्रदान करो।

उपमान—कियते गुरुं भारं, उपमेय—मे बृहत् मन्म, साधारण धर्म—दधाथ, सादृश्यवाचक—न है।

रुशद् वसानः सुदृशीवरूपः क्षितिर्न रायो पुरुवारो अद्यौत्।
(ऋ० ४।५।१५)

तेजस्वी रूपवाला वरणीय (अग्नि) उसी प्रकार प्रकाशित होता है जैसे मनुष्य ऐश्वर्य के कारण चमकता है।

उपमान—रायो क्षितिः, उपमेय—रुशद् वसानः सुदृशीवरूपः पुरुवारः, साधारण धर्म—अद्यौत्, सादृश्यवाचक—न है।

पर्यग्निः पशुपा न होता त्रिविष्ट्येति प्रदिव उरावः ॥
(ऋ० ४।६।४)

तेजस्वी होता अग्नि हव्य को विस्तृत करता हुआ पशुपालक की तरह तीन बार प्रदक्षिणा करता है।

उपमान—पशुपा, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—त्रिविष्टि परि एति, सादृश्यवाचक—न है।

द्रवन्त्यस्य वाजिनो न शोका भयन्ते विश्वा भुवना यद्भ्राट् ॥
(ऋ० ४।६।५)

इस (अग्नि) की किरणें अश्व के समान सब ओर दौड़ती हैं।

उपमान—वाजिनः, उपमेय—अस्य शोका, साधारण धर्म—द्रवन्ति, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

अधा मित्रो न सुधितः पावकोऽग्निर्दीदाय मानुषीषु विक्षु ॥
(ऋ० ४।६।७)

पावक अग्नि मानवी प्रजाओं के मध्य सूर्य के समान दीप्तिमान होता है।

उपमान—मित्रः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—दीदाय, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

प्रेत दिवो न स्तनयन्ति शुष्माः ॥
(ऋ० ४।१०।४)

(हे अग्ने !) तुम्हारी तेजस्वी ज्वालायें बादल के समान शब्द करती हैं।

उपमान—दिवः, उपमेय—ते शुष्माः, साधारण धर्म—प्र स्तनयन्ति, सादृश्यवाचक—न है।

तव स्वादिष्ठाग्ने संदृष्टिरिदा चिदह्न इदा चिदक्तोः
श्रिये रुक्मो न रोचत उपाके ॥
(ऋ० ४।१०।५)

हे अग्ने ! तुम्हारी परमप्रिय कान्ति चाहे दिन हो अथवा रात हो दोनों कालों में अलंकार के समान समीप ही शोभित होती है।

उपमान—रुक्मः, उपमेय—अग्ने तव स्वादिष्ठ संदृष्टिः, साधारण धर्म—उपाके रोचते, सादृश्यवाचक—न है।

उर्ध्वं भानुं सविता देवो अश्रेद् द्रप्सं दविध्वद् गविषो न सत्वा ॥
(ऋ० ४।१३।२)

जैसे गौ का इच्छुक वृषभ धूल को उड़ाता है उसी प्रकार तेजस्वी सूर्य अपनी किरणों को ऊपर की ओर फैलाता है।

उपमान—गविषः सत्वा द्रप्सं, उपमेय—देवः सविता भानुं, साधारण धर्म—दविध्वद् उर्ध्वं अश्रेत, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

कन्या इव वहतुमेतवा उ अञ्ज्यञ्जाना अभिचाकशीमि।
यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्य धारा अभि तत् पवन्ते ॥
(ऋ० ४।५८।९)

विवाह के लिये जाने वाली कन्यायें जिस प्रकार अलंकार आदि धारण करके अपना तेज प्रकट करती हैं उसी प्रकार घृत की धारायें बहती हैं।

उपमान—वहतुमेतवा कन्या, उपमेय—घृतस्य धारा, साधारण धर्म—अञ्जि-अञ्जानाः अभिपवन्ते, सादृश्यवाचक—न है।

एतं ते स्तोमं तुविजात विप्रो रथं न धीरः स्वपा अतक्षम् ॥
(ऋ० ५।२।११)

(हे अग्ने !) तुम्हारे लिए रथ के समान इस स्तोत्र को बनाया है।

उपमान—रथं, उपमेय—एतं स्तोमं, साधारण धर्म—अतक्षम्, सादृश्यवाचक—न है।

द्वेषोयुतो न दुरिता तुर्याम मर्त्यानाम् ॥
(ऋ० ५।६।६)

मानवी पापकर्मों को उसी प्रकार पार कर जाऊँ जैसे द्वेष करने वाले शत्रुओं से पार होता हूँ।

उपमान—द्वेषो युतः, उपमेय—मर्त्यानां दुरिता, साधारण धर्म—तुर्याम, सादृश्यवाचक—न है।

त्वे असुर्यमारुहत् क्राणा मित्रो न यज्ञियः ॥

(ऋ० ५।१०।२)

यज्ञ रूप अग्नि सूर्य के समान शीघ्र ही चारों ओर व्याप्त होता है।

उपमान—मित्रः, उपमेय—यज्ञियः, साधारण धर्म—क्राणा आरुहत्, सादृश्य-वाचक—न है। अधिकोपमा है।

घृतं न यज्ञ आस्ये सुपूतं गिरं मरे बृषभाय प्रतीचीम् ॥

(ऋ० ५।१२।१)

यज्ञ में अग्नि के मुख में डालने योग्य पवित्र घृत के समान सरल और माननीय स्तुति प्रस्तुत करता हूँ।

उपमान—सुपूतं घृतं, उपमेय—प्रतीचीम् गिरं, साधारण धर्म—प्रभरे, सादृश्यवाचक—न है।

स संवतो नव जातस्तुतुर्यात् सिंहं न क्रुद्धमभितः परिष्ठुः ॥

(ऋ० ५।१५।३)

वह नवजात (अग्नि) क्रोधित सिंह की तरह एकत्रित शत्रुओं को नष्ट करे।

उपमान—क्रुद्धम् सिंहं, उपमेय—सः नवजातः, साधारण धर्म—संवतोतुर्यात्, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

वाजो नु ते शवसस्पात्वन्तमुरुं दीर्घं धरुणं देव रायः।
पदं न तायुर्गुहा दधानो महो राये चितयन्नत्रिमस्यः ॥

(ऋ० ५।१५।५)

जैसे तस्कर गुहा के मध्य में छिपकर धन को धारण करता है उसी प्रकार देव (अग्नि) प्रचुर धनलाभ के लिये सन्मार्ग को प्रकाशित करता है।

उपमान—गुहापदं दधानः तायुः, उपमेय—महः राये चितयन् देवः, साधारण धर्म—अत्रिमस्यः, सादृश्यवाचक—न है। हीनोपमा है।

यं मित्रं न प्रशस्तिभिर्मर्तासोदधिरे पुरः ॥

(ऋ० ५।१६।१)

मनुष्यगण जिस (अग्नि) को सूर्य की तरह प्रकृष्ट स्तुतियों द्वारा सबसे आगे स्थापित करते हैं।

उपमान—मित्रं, उपमेय—यं, साधारण धर्म—पुरः दधिरे, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

वि हव्यमग्निरानुषग्भगो न वारमृण्वति ॥

(ऋ० ५।१६।२)

अग्नि सूर्य के समान श्रेष्ठ सम्पत्ति प्रदान करता है।

उपमान—भगः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—वारम् ऋण्वति, सादृश्य-वाचक—न है। अधिकोपमा है।

तमिद् यह्वं न रोदसी परिश्रवो बभूवतुः ॥

(ऋ० ५।१६।४)

जैसे महान् सूर्य के सहारे आकाश और पृथ्वी स्थित है उसी प्रकार सभी अन्न-धन उस (अग्नि) के आश्रय में स्थित हैं।

उपमान—यह्वं रोदसी, उपमेय—श्रवः तम् इत्, साधारण धर्म—परिबभूवतुः, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

दिवो न यस्य रेतसा बृहच्छोचन्त्यर्चयः ॥

(ऋ० ५।१७।३)

प्रकाशमान सूर्य की तरह जिसकी वृहत् ज्वालायें तेज से प्रकाशित होती हैं।

उपमान—दिवः, उपमेय—यस्य अर्चयः, साधारण धर्म—रेतसा बृहत् शोचन्ति, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

एवेन्द्राग्निभ्यामहावि हव्यं शूष्यं घृतं न पूतमद्रिभिः ॥

(ऋ० ५।८६।६)

बलवर्धक घृत के समान पत्थरों से कूटकर पवित्र किये गये हवि को इन्द्राग्नी के लिये समर्पित करता हूँ।

उपमान—शूष्यं घृतं, उपमेय—हव्यं, साधारण धर्म - पूतं, सादृश्यवाचक—न है।

त्वं हि क्षैतवद्यशोऽग्ने मित्रो न पत्यसे ॥

(ऋ० ६।२।१)

हे अग्ने ! तुम सूर्य के समान हविर्युक्त यजमान के घर जाते हो।

उपमान—मित्रः, उपमेय—अग्ने त्वं, साधारण धर्म—पत्यसे, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

ऊती ष बृहतो दिवो द्विषो अंहो न तरति ॥

(ऋ० ६।२।४)

वह (स्तुतिकर्ता मनुष्य) दीप्त रक्षा-साधनों के द्वारा अपने शत्रुओं को पाप के समान नष्ट कर देता है।

उपमान—अंहः, उपमेय—द्विषः, साधारण धर्म—तरति, सादृश्यवाचक—न है।

सूरो न हि द्युता त्वं कृपा पावक रोचसे ॥

(ऋ० ६।२।६)

. . . . . पावक अग्ने ! तुम सूर्य के समान अपनी कान्ति से प्रकाशित होते हो। . .

उपमान—सूरः, उपमेय—पावक त्वं, साधारण धर्म—द्युता कृपा रोचसे, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

सूरो न यस्य दृशरितरेषा भीमा यदेति शुचतस्त आ धीः ॥

(ऋ० ६।३।३)

सूर्य के समान जिसका दर्शन पापरहित है।

उपमान—सूरो, उपमेय —यस्य दृशतिः, साधारण धर्म—अरेपाः, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

स ई रेभो न प्रति वस्त उस्राः शोचिषा रारपीति मित्रमहाः।

(ऋ० ६।३।६)

वह (अग्नि) रेभ नामक ऋषि के समान अपनी प्रदीप्त ज्वालाओं को फैलाता है।

उपमान—रेभः, उपमेय—सः, साधारण धर्म—उस्राः प्रति-वस्ते, सादृश्य-वाचक—न है।

द्यावो न यस्य पनयन्त्यभ्वं भासांसि वस्ते सूर्यो न शुक्रः॥

(ऋ० ६।४।३)

जिस (अग्नि) की ज्वालायें तेजस्वी सूर्य किरणों के समान चमकती हैं।

उपमान—सूर्यः, उपमेय —यस्य भासांसि, साधारण धर्म—वस्ते, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

त्वां विश्वे अमृत जायमानं शिशुं न देवा अभि संनवन्ते॥

(ऋ० ६।७।४)

हे मरणधर्म रहित अग्ने! स्तोतागण अरणिमन्थन से उत्पन्न तुम्हें शिशु के समान स्तुति करते हुए प्राप्त करते हैं।

उपमान—जायमानं शिशुं, उपमेय—अमृत त्वां, साधारण धर्म—अभिसंनवन्ते, सादृश्यवाचक—न है।

वैश्वानरो जायमानो नराजावातिरज्ज्योतिषाग्निः तमांसि॥

(ऋ० ६।६।१)

वैश्वानर अग्नि वर्धमान राजा के समान अपने तेज से अंधकार को नष्ट करता है।

उपमान—जायमानः राजा, उपमेय—वैश्वानरः अग्निः, साधारण धर्म—ज्योतिषा तमांसि अवातिरक्, सादृश्यवाचक—न है।

आयुं न यं नभसा रातहव्या अञ्जन्ति सुप्रयसं पञ्चजनाः॥

(ऋ० ६।११।४)

मनुष्य के समान जिस (अग्नि) को पाँच यजमान हविरूप अन्न से संतुष्ट करते हैं।

उपमान—आयुं, उपमेय—यं, साधारण धर्म—नभसा अञ्जन्ति, सादृश्यवाचक—न है।

अध्यक्षि सद्मसदने पृथिव्या अश्रायि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः॥

(ऋ० ६।११।५)

जैसे सूर्य में प्रकाश-किरणें आश्रित रहती हैं उसी प्रकार यजमान का यज्ञ अग्नि के आश्रित रहता है।

उपमान—सूर्ये चक्षुः, उपमेय—यज्ञः, साधारण धर्म—अश्रायि, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

रायः सूनो सहसो वावसाना अति स्रसेम वृजनं नांहः ॥
(ऋ० ६।११।६)

हे बलपुत्र अग्ने ! हवि से तुम्हें आच्छादित करते हुए हम मेरा के समान पाप का अतिक्रमण करें।

उपमान—वृजनं, उपमेय—अंहः, साधारण धर्म—अतिस्रसेम, सादृश्यवाचक—न है।

अयं स सूनुः सहस ऋतावा दूरात्सूर्यो न शोचिषा ततान ॥
(ऋ० ६।१२।१)

सत्य स्वरूपवाला वह (अग्नि) सूर्य के समान दूर से ही द्यावापृथ्वी को प्रकाशित करने के लिये अपने तेज का विस्तार करता है।

उपमान—सूर्यः, उपमेय—सः, साधारण धर्म—शोचिषा ततान, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

आ यस्मिन्त्वे स्वपाके यजत्र यक्षद्राजन्सर्वतातेव नु द्यौः।
त्रिषधस्थस्ततरुषो न जंहो हव्या मघानि मानुषा यजध्यै ॥
(ऋ० ६।१२।२)

हे यष्टव्य तेजस्वी (अग्ने !) मनुष्य द्वारा प्रदत्त हवि को प्रदान करने के लिये तुम सूर्य के समान वेगवान् बनो।

उपमान—ततरुषः, उपमेय—यजत्र राजन्, साधारण धर्म—जंहः, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

सद्यो यः स्पन्द्रो विषितोधवीयानृणो न तायु रतिधन्वाराट् ॥
(ऋ० ६।१२।५)

जो स्पन्दनशील (अग्नि) शीघ्र भागनेवाले चोर के समान शीघ्र गमन करने वाला है। उपमान—ऋणो तायुः, उपमेय—यः स्पन्द्रः, साधारण धर्म—सद्यः धवीयान्, सादृश्यवाचक—न है। हीनोपमा है।

त्वद्विश्वा सुभग सौभगान्यग्ने वियन्ति वनिनो न वयाः।
श्रुष्टी रयिर्वाजो वृत्रतूर्ये दिवो वृष्टिरीड्यो रीतिरपाम् ॥
(ऋ० ६।१३।१)

जैसे वृक्ष से अनेक शाखायें निकलती हैं उसी प्रकार पशुसंपत्तिरूपी धन अग्नि से उत्पन्न होता है।

उपमान—वनिनः वयाः, उपमेय—त्वट् विश्वारयिः, साधारण धर्म—श्रुष्टी, सादृश्यवाचक—न है।

मित्रं न यं सुधितं भृगवो दधुर्वनस्पतावीड्यमूर्ध्वं शोचिषम् ॥
(ऋ० ६।१५।२)

जिस (अग्नि) को मित्र के समान भृगुओं ने घर में स्थापित किया है।
उपमान—मित्रं, उपमेय—यं, साधारण धर्म—दधुः, सादृश्यवाचक—न है।

प्र प्र वयममृतं जातवेदसं प्रियं मित्रं न शंसिषम् ॥

(ऋ० ६।४८।१)

हम सब मित्र के समान प्रिय जातवेद (अग्नि) की प्रशंसा करते हैं।
उपमान—मित्रं, उपमेय—जातवेदसं, साधारण धर्म—प्रियं, सादृश्यवाचक—न है।

प्र वो देवं चित्सहसानमग्निमश्वं नयवाजिनं हिषे नमोभिः ॥

(ऋ० ७।७।१)

अश्व के समान वेगवान् या बलवान अग्नि को स्तुति द्वारा प्रसन्न करते हैं।
उपमान—अश्वं, उपमेय—अग्निम् साधारण धर्म—वाजिनं, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

अर्वन्तो न काष्ठां नक्षमाणा इन्द्राग्नी जोहुवतो नमस्ते ॥

(ऋ० ७।९३।३)

(मेधावी जन) युद्ध में शीघ्रगन्ता अश्व के समान इन्द्राग्नी का पुनः-पुनः आह्वान करते हैं।
उपमान—अर्वन्तः, उपमेय—इन्द्राग्नी, साधारण धर्म—नक्षमाणा, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

यज्ञेभिरद्भुतक्रतुं यं कृपा सूदयन्त इत्।
मित्रं न जने सुधितमृतावनि ॥

(ऋ० ८।२३।८)

मित्र के समान हवि द्वारा संतुष्ट अग्नि को यजमानगण अपने सामर्थ्य से यज्ञ द्वारा प्राप्त करते हैं।
उपमान—मित्रं, उपमेय—य, साधारण धर्म—सुधितं, सादृश्यवाचक—न है।

अग्ने मन्मानि तुभ्यं कं घृतं न जुह्व आसनि ॥

(ऋ० ८।३९।३)

हे अग्ने। तुम्हारे मुख में सुखकर घृत के समान मननीय स्तोत्र आहुत करता हूँ।
उपमान—घृतं, उपमेय—मन्मानि, साधारण धर्म—कं, सादृश्यवाचक—न है।

स त्वमग्ने विभावसुः सृजन्त्सूर्यो न रश्मिभिः
शर्धन्तमांसि जिघ्नसे ॥

(ऋ०१।८।४३।३२)

हे अग्ने। तुम सूर्य के समान ज्वालाओं से बल प्राप्त कर अन्धकार को नष्ट करते हो।
उपमान—सूर्यः, उपमेय—अग्ने त्वम्, साधारण धर्म—तमांसि जिघ्नसे, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

धीरो ह्यस्यद्मसद्विप्रो न जागृविः सदा ।
अग्ने दीदयसि द्यवि ।।

(ऋ० ८।४४।२९)

हे अग्ने । तुम मेधावी ब्राह्मण के समान प्रजा के हित के लिए जागरणशील हो ।

उपमान—विप्रः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—सदा जागृविः, सादृश्यवाचक—न है ।

प्रति त्वा शवसी वदद्गिरावप्सो न योधिषत् ।
यस्ते शत्रुत्वमाचके ।।

(ऋ० ८।४५।५)

हे इन्द्राग्नी ! जो तुमसे शत्रुता करता है वह पर्वत से अपनी छाती टकराता है ।

उपमान—अप्सः, उपमेय—यः ते शत्रुत्वम् आचके, साधारण धर्म—योधिषत्, सादृश्यवाचक—न है ।

ते जानत स्वमोक्यं सं वत्सासो न मातृभिः ।
मिथो नसन्त जामिभिः ।।

(ऋ० ८।७२।१४)

जैसे बच्चे अपनी माँ के साथ जाते हैं उसी प्रकार गौयें परस्पर बन्धुओं के साथ मिलती हैं ।

उपमान—मातृभिः वत्सासः, उपमेय—जामिभिः ते, साधारण धर्म—मिथः सं न सन्त, सादृश्यवाचक—न है ।

यं जनासो हविष्मन्तो मित्रं न सर्पिरासुतिम् ।।

(ऋ० ८।७४।२)

हविर्युक्त यजमान सूर्य के समान जिस (अग्नि) के लिये घृत की आहुति देते हैं ।

उपमान—मित्रं, उपमेय—यं, साधारण धर्म—सर्पिरासुतिम्, सादृश्यवाचक—न है । अधिकोपमा है ।

मां चत्वार आशवः शविष्ठस्य द्रवित्नवः ।
सुरथासो अभिप्रयो वक्षन्वयो न तुग्र्यम् ।।

(ऋ० ८।७४।१४)

चारों अश्व पक्षी के समान वेग से अन्न को वहन करते हैं ।

उपमान—वयो, उपमेय—चत्वार आशवः, साधारण धर्म—तुग्र्यम् प्रयः अभिवक्षन्, सादृश्यवाचक—न है । भूतोपमा है ।

मा नः समस्य दूढ्यः परिद्वेषसो अंहतिः ।
ऊर्मिर्न नावमावधीत् ।।

(ऋ० ८।७५।६)

नौका को डुबानेवाली लहर के समान पाप-बुद्धि हिंसक हमारी हिंसा न करे।

उपमान—नावम् ऊर्मिः उपमेय—दूढ्यः परिद्वेषसः अंहतिः, साधारण धर्म—मा आ वधीत्, सादृश्यवाचक—न है।

अश्वं न गीर्भी रथ्यं सुदानवो मर्मृज्यन्ते देवयवः॥

(ऋ० ८।१०३।७)

(हे अग्ने।) शोभनदानकर्ता यजमान रथवाहक अश्व के समान तुम्हारी स्तुतियों से परिचर्या करते हैं।

उपमान—रथ्यं अश्वं, उपमेय—गीर्भीः, साधारण धर्म—मर्मृज्यन्ते, सादृश्य-वाचक—न है। भूतोपमा है।

आ हि द्यावापृथिवी अग्न उभे सदा पुत्रो न मातरा ततन्थ॥

(ऋ० १०।१।७)

हे अग्ने। जैसे पुत्र माता-पिता की सेवा करता है उसी प्रकार तुम द्यावा-पृथिवी का अपने तेज से विस्तार करते हो।

उपमान—माता पुत्रः, उपमेय—उभे द्यावापृथिवी अग्ने, साधारण धर्म—सदा आ ततन्थ, सादृश्यवाचक—न है।

स्वना न यस्य भामासः पवन्ते रोचमानस्य बृहतः सुदिवः॥

(ऋ० १०।३।५)

जिस (अग्नि) की प्रज्वलित किरणें शब्दायमान वायु के समान शब्द करती हुई गमन करती है।

उपमान—स्वना, उपमेय—रोचमानस्य यस्य भामासः, साधारण धर्म—पवन्ते, सादृश्यवाचक—न है।

कूचिज्जायते सनयासु नव्यो वने तस्थौ पलितो धूमकेतुः।
अस्नातापो वृषभो न प्रवेति सचेतसो यं प्रणयन्त मर्ताः॥

(ऋ० १०।४।५)

जैसे तृषात वृषभ प्यास बुझाने के लिये अरण्य-मध्य-स्थित जलाशय के समीप जाता है उसी प्रकार धूम-प्रज्ञान अग्नि अपनी तृषा-शान्ति के लिये जंगल की ओर बढ़ता है।

उपमान—वृषभः आपः, उपमेय—धूमकेतुः, साधारण धर्म—वने प्रवेति, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

तमुस्रामिन्द्रं न रेजमानमग्निं गीर्भिर्नमोभिराकृणुध्वम्॥

(ऋ० १०।६।५)

(हे यजमान गण!) तुम ज्वालाओं से प्रकाशित अग्नि की इन्द्र के समान स्तुति एवं हवि से स्तुति करो।

उपमान—इन्द्र, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म—नमोभिः गीर्भिः, आकृणु-ध्वम्, सादृश्यवाचक—न है।

सं यस्मिन्विश्वा वसूनि जग्मुर्वाजे नाश्वाः सप्तीवन्त एवैः ।।
(ऋ० १०।६।६)

संग्राम में जानेवाले सर्पणशील शीघ्रगन्ता अश्व के समान सभी धन जिस (अग्नि) की ओर गमन करते हैं।

उपमान—वाजे सप्तीवन्तः अश्वाः, उपमेय—यस्मिन् विश्वावसूनि, साधारण धर्म—सं जग्मु., सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

इमं विधन्तो अपां सधस्थे पशुं न नष्टं पदैरनुग्मन् ।।
(ऋ० १०।४६।२)

जैसे पद-चिह्नों के द्वारा खोये पशु का पता लगाया जाता है उसी प्रकार ऋषियों ने जल के मध्य में निगूढ़ अग्नि का पता लगाया।

उपमान—पदैः नष्टं पशुं, उपमेय—अपां सधस्थे विधन्तो इमं, साधारण धर्म—अनुग्मन्, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

अस्याजरासो दमामरित्रा अर्चद्धूमासो अग्नयः पावकः।
श्वितीचयः श्वात्रासो भुरण्यवो वनर्षदो वायवो न सोमाः ।।
(ऋ० १०।४६।७)

अग्नि सोमरस के समान गमनशील है।

उपमान—सोमाः, उपमेय—अग्नयः, साधारण धर्म—वायवः, सादृश्यवाचक—न है।

व्यचस्वतीरुर्विया वि श्रयन्तां पतिभ्यो न जनयः शुम्भमानाः।
देवीर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वा देवेभ्यो भवत सुप्रायणाः ।।
(ऋ० १०।११०।५)

हे द्वारदेवियो! जैसे शोभमान स्त्रियाँ विशेष रूप से पति के आश्रित होती हैं उसी प्रकार तुम विस्तृत रूप में आश्रित होओ।

उपमान—पतिभ्यः शुम्भमानाः जनयः, उपमेय—देवीर्द्वारः, साधारण धर्म—उर्विया वि श्रयन्तां, सादृश्यवाचक—न है।

पितुर्नः पुत्राः क्रतुं जुषन्त श्रोषन् ये अस्य शासं तुरासः ।।
(ऋ० १।६८।९)

पिता का आदेश माननेवाले पुत्र के समान जिन मनुष्यों ने इस (अग्नि) की आज्ञा को सुनकर कर्म प्रारम्भ किया।

उपमान—पितुः पुत्राः, उपमेय—ये अस्य, साधारण धर्म—शासं श्रोषन् क्रतुं जुषन्त, सादृश्यवाचक—न है।

वेधा अदृप्तो अग्निर्विजानन्नूधर्न गोनां स्वाद्मा पितूनाम् ।।
(ऋ० १।६९।३)

अग्नि गो-दुग्ध के समान अन्न को स्वादिष्ट बनाता है।

उपमान—गोनां ऊधः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—पितूनाम् स्वाद्मा, सादृश्यवाचक—न है।

वि त्वा नरः पुरुत्रा सर्पयन् पितुर्न जिव्रेर्विभेदो भरन्त ॥
(ऋ० १।७०।१०)

(हे अग्ने) जैसे पुत्र वृद्ध पिता से धन प्राप्त करता है उसी प्रकार मनुष्य तुमसे धन प्राप्त करते हैं।

उपमान—जिव्रेः पितुः, उपमेय—त्वा नरः, साधारण धर्म—वेदो भरन्त, सादृश्यवाचक—न है।

विश्वो विहाया अरतिर्वसुदधे हस्ते दक्षिणे तरणिर्न शिश्रथच्छ्रवस्यया न शिश्रथत् ॥
(ऋ० १।१२८।६)

विश्वव्यापी महान (अग्नि) सूर्य के समान दाहिने हाथ में यजमान को देने योग्य धन धारण करता है।

उपमान—तरणिः, उपमेय—विश्वः विहाया अरतिः अग्निः, साधारण धर्म—दक्षिणे हस्ते वसु दधे, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

त्वया ह्यग्ने वस्मो धृतव्रतो मित्रः शाशद्रे अर्यमा सुदानवः।
यत् सीमनु क्रतुना विश्वथाविभुररान्न नेमिः परिभूरजायथा ॥
(ऋ० १।१४१।९)

हे अग्ने। जैसे रथ का पहिया अरों को व्याप्त करके रहता है, उसी प्रकार तुम सर्वव्यापी और सबों के पराभवकारी होकर उत्पन्न हुए हो।

उपमान—अरान् नेमिः, उपमेय—अग्ने, साधारण धम—विश्वथा विभुः परिभूः अनुअजायथ, सादृश्यवाचक—न है।

मात्वक्षसो अत्यक्तुर्न सिन्धवोऽग्ने रेजन्ते असतन्तो अजराः ॥
(ऋ० १।१४३।३)

हे अग्ने ! नदी के समान तुम्हारी जरारहित ज्वालायें कम्पित होती हैं।

उपमान—अत्यक्तुः सिन्धवः, उपमेय—अग्ने अजराः मात्वक्षसः, साधारण धर्म—रेजन्ते, सादृश्यवाचक—न है।

नि यं दधुर्मनुष्यासु विक्षुस्वर्ण चित्रं वपुषे विभावम् ।
(ऋ० १।१४८।१)

सूर्य के समान विलक्षणता से युक्त, तेजस्वी जिस (अग्नि) को मानवी प्रजाओं में शरीर की पुष्टि के लिये स्थापित किया जाता है।

उपमान—स्वः, उपमेय—यम्, साधारण धर्म—चित्रं विभावम् मनुष्यासु विक्षु निदधुः, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

आदस्य वातो अनुवाति शोचिरस्तुर्न शर्यामसनामनुद्यून् ॥
(ऋ० १।१४८।४)

जैसे बाण-चालक के पास से बाण वेग से जाता है उसी प्रकार इस (अग्नि) की ज्वालायें प्रतिदिन वायु का अनुकरण करती हुई वेग से जाती हैं।

उपमान—अस्तुः असना शर्या, उपमेय—अस्य शोचिः, साधारण धर्म—अनुद्यून् वातः वाति, सादृश्यवाचक—न है।

स होता विश्वं परिभूत्वध्वरं तमु हव्यैर्मनुष ऋञ्जते गिरा।
हिरिशिप्रो वृधमानासु जर्मुरद् द्यौर्नस्तृभिश्चितयद् रोदसी अनु ॥
(ऋ० २।२।५)

जैसे नक्षत्रों से आकाश प्रकाशित होता है उसी प्रकार तेजस्वी ज्वालाओं वाला वह (अग्नि) अपने प्रकाश से द्यावापृथ्वी को प्रकाशित करता है।

उपमान—स्तृभिः द्यौः, उपमेय—सः हिरिशिप्रः रोदसी, साधारण धर्म—अनुचितयत्, सादृश्यवाचक—न है।

प्राची द्यावापृथिवी ब्रह्मणा कृशि स्वर्णशुक्रमुषसो विदिद्युतुः ॥
(ऋ० २।२।७)

(हे अग्ने !) सूर्य के समान प्रकाशमान उषायें तुम्हें प्रकाशित करती हैं।

उपमान—स्वः, उपमेय—शुक्रम् उषसः, साधारण धर्म—विदिद्युतुः, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

अस्माकं द्युम्नमधि पञ्चकृष्टिषूच्चा स्वर्णं शुशुचीत दुष्टरम् ॥
(ऋ० २।२।१०)

हमारी अनन्त और दूसरों के लिये अप्राप्य धनराशि सूर्य के समान पाँचों वर्णों में प्रकाशित हो।

उपमान—स्वः, उपमेय—अस्माकं उच्चा दुष्टरम्, द्युम्नं, साधारण धर्म—शुशुचीत, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

स यो व्यस्थादभि दक्षदुर्वीं पशुर्नैति स्वयुरगोपाः ॥
(ऋ० २।४।७)

वह (अग्नि) रक्षकहीन पशु के समान अपनी इच्छा से इधर-उधर जाता है।

उपमान—अगोपाः पशुः, उपमेय—सः, साधारण धर्म—स्वयुः एति, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

आ यः स्वर्णं भानुना चित्रो विभात्यर्चिषा। अञ्जानो अजरैरभि ॥
(ऋ० २।८।४)

तेजस्वी किरणोंवाले सूर्य के समान जो अपनी ज्वालाओं से प्रकाशित होता है।

उपमान—भानुना स्वः, उपमेय—यः स्व अर्चिषा, साधारण धर्म—आ विभाति, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

स जिन्वते जठरेषु प्रजज्ञिवान् वृषा चित्रेषु नानदन्न सिंहः ॥
(ऋ० ३।२।११)

वह (वैश्वानर अग्नि) सिंह के समान जंगलों में गर्जना करता है।

उपमान—सिंहः, उपमेय—सः, साधारण धर्म—चित्रेषु नानदत्, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

एभिर्नो अर्कैभवा नो अर्वाङ् स्वर्णज्योतिः।
अग्ने विश्वेभिः सुमना अनीकैः ॥
(ऋ० ४।१०।३)

हे अग्ने ! सूर्य के समान प्रकाश से युक्त तुम हमलोगों की ओर आओ।

उपमान—स्वः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—ज्योति।, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

त्वं त्या चिदच्युताग्ने पशुर्न यवसे।
धामा ह यत्ते अजर बना वृश्चन्ति शिक्वसः॥
(ऋ० ६।२।९)

हे अग्ने ! जैसे पशु घास को खा जाता है उसी प्रकार तुम्हारी अच्युत ज्वालायें वृक्षों को भस्म कर देती हैं।

उपमान—यवसे पशुः, उपमेय—अग्ने त्वं त्या अच्युता, साधारण धर्म—वना वृश्चन्ति, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

स नो विभावा चक्षणिर्न वस्तोरग्निर्वन्दारु वेद्यश्चनो धात्॥
(ऋ० ६।४।२)

अग्नि दिन के प्रकाशक सूर्य के समान विशेष रूप से दीप्यमान है।

उपमान—वस्तोः चक्षणिः, उपमेय—सः अग्नि, साधारण धर्म—विभावा वेद्यः वन्दारु चनः धात्, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

स्वर्ण वस्तोस्यसामरोचि यज्ञं तन्वाना उशिजो न मन्म।
अग्निर्जन्मानि देव आ विविद्वान्द्रवद्दूतो देवयावा वनिष्ठः॥
(ऋ० ७।१०।२)

अग्नि दिन के प्रकाशक सूर्य के समान दीप्त होता है।

उपमान—स्वः, उपमेय—अग्नि, साधारण धर्म—अरोचि, सादृश्यवाचक—न है। अधिकोपमा है।

प्राग्नये विश्वशुचे धियंधेऽसुरघ्ने मन्मधीति भरध्वम्।
भरे हविर्न बर्हिषि प्रीणानो वैश्वानराय यतये मतीनाम्॥
(ऋ० ७।१३।१)

वैश्वानर अग्नि के लिए हवि के समान मननीय स्तोत्र प्रस्तुत करो।

उपमान—हविः, उपमेय—मन्म, साधारण धर्म—प्रभरध्वम्, सादृश्यवाचक—न है।

जातो यदग्ने भुवना व्यख्यः पशून्न गोपा हर्यः परिज्मा।
(ऋ० ७।१३।३)

हे अग्ने ! जैसे गोपालक पशुओं को देखता है उसी प्रकार तुम सभी जीवों को रक्षा के लिए देखते हो।

उपमान—गोपाः पशून्, उपमेय—अग्ने भुवना, साधारण धर्म—व्यख्यः, सादृश्यवाचक—न है। भूतोपमा है।

पितुर्न पुत्रः सुभृतो दुरोण आ देवाँ एतु प्रणो हविः॥
(ऋ० ८।१९।२७)

जैसे पिता के पास पुत्र जाता है उसी प्रकार अग्नि यज्ञ में अर्पित हमारी हवि को देवों तक पहुँचाये।

उपमान—पितुः पुत्रः, उपमेय—सुभृतः नः हविः देवान्, साधारण धर्म—आ प्र एतु, सादृश्यवाचक—न है।

मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्यग्नये ॥

(ऋ० ८।१०३।६)

इस (अग्नि) के लिये मदकारी सोम के समान स्तोत्र प्रदान किये जाते हैं।

उपमान—मधोः, उपमेय—अस्मै अग्नये प्रथमानि स्तोमा, साधारण धर्म—प्रयन्ति, सादृश्यवाचक—न है।

यामिः सोमो मोदते हर्षते च कल्याणीभिर्युवतिभिर्न मर्यः ॥

(ऋ० १०।३०।५)

जैसे नवयुवती स्त्रियों के साथ युवा पुरुष आनन्दित होता है उसी प्रकार सोम जल के साथ मुदित और हर्षित होता है।

उपमान—कल्याणीभिः युवतिभिः मर्यः, उपमेय—सोमः यामिः, साधारण धर्म—मोदते हर्षते च, सादृश्यवाचक—न है।

इव—

निम्नलिखित २३ ऋचाओं में उपमावाचक इव शब्द का प्रयोग हुआ है अतः यास्क के अनुसार यहाँ द्रव्योपमा है।

स रेवाँ इव विश्पतिर्दैव्यः केतुः शृणोति नः।

उक्थैरग्निर्बृहद्भानुः ॥

(ऋ० १।२७।१२)

वह तेजस्वी अग्नि धनवानों के समान स्तोत्रों के साथ हमारी प्रार्थना को सुने।

उपमान—रेवाँ, उपमेय—सः अग्निः, साधारण धर्म—उक्थैः नः शृणोतु, सादृश्यवाचक—इव है।

अयं जायत मनुषो धरीमणि होता यजिष्ठ उशिजामनुव्रतमग्निः स्वमनुव्रतम्।

विश्वश्रुष्टिः सखीयते रयिरिव श्रवस्यते ॥

(ऋ० १।१२८।१)

अग्नि धन की कामना करने वाले के लिये धन के समुद्र के समान है।

उपमान—रयिः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—विश्वश्रुष्टिः, सादृश्यवाचक—इव है।

त्वं ह्यग्ने दिव्यस्य राजसि त्वं पार्थिवस्य पशुपा इव त्मना ॥

(ऋ० १।१४४।६)

हे अग्ने! तुम पशुपालक के समान अपने सामर्थ्य से द्यावापृथिवी पर शोभित होते हो।

उपमान—पशुपा, उपमेय—अग्ने त्वं, साधारण धर्म—त्मना राजसि, सादृश्यवाचक—इव है।

यो विश्वतः प्रत्यङ्ङसि दर्शतो रण्वः संदृष्टो पितुमाँ इव क्षयः ॥

(ऋ० १।१४४।७)

जो (अग्नि) यथेष्ट अन्नशाली गृह की तरह नेत्रों को आनन्द देने वाला और सबका आश्रय-स्थल है।

उपमान—पितुमान् क्षय; उपमेय—यः, साधारण धर्म—संदृष्टो रण्वः, सादृश्यवाचक—इव है।

विद्वां अस्य व्रता ध्रुवा वया इवानुरोहते।

(ऋ० २।५।४)

इस (अग्नि) के अटल नियमों को जानने वाला वृक्षों की शाखाओं के समान प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त करता है।

उपमान—वया, उपमेय—अस्य ध्रुवा व्रता विद्वां, साधारण धर्म—अनुरोहते, सादृश्यवाचक—इव है।

विश्वा उत त्वया वयं धारा उदन्या इव।
अति गाहेमहि द्विषः॥

(ऋ० २।७।३)

जल की धारा के समान हम सम्पूर्ण द्वेष करने वाले शत्रुओं का अतिक्रमण करें।

उपमान—उदन्या धारा, उपमेय—विश्वा द्विषः, साधारण धर्म—अतिगाहेमहि, सादृश्यवाचक—इव है।

अस्मै तिस्रो अव्यथ्याय नारीर्देवाय देवीर्दिधिषन्त्यन्नम्।
कृता इवोप हि प्रसर्से अप्सु स पीयूषं धयति पूर्वसूनाम्॥

(ऋ० २।३५।५)

तीन देवियाँ जलप्रवाह के समान आगे चलती हैं।

उपमान—अप्सुकृताः, उपमेय—तिस्रः देवीः, साधारण धर्म—उप प्रसर्से, सादृश्यवाचक—इव है।

हंसा इव श्रेणिशोयतानाः शुक्रावसानाः स्वरवो न आगुः।

(ऋ० ३।८।६)

यूप हंस के समान पंक्तिबद्ध दिखाई देते हैं।

उपमान—हंसाः, उपमेय—स्वरवः, साधारण धर्म—श्रेणिशः यतानाः नः आगुः, सादृश्यवाचक—इव है।

अग्निर्नेता भग इव क्षितीनां दैवीनां देव ऋतुपा ऋतावा

(ऋ० ३।२०।४)

ऋतुओं की पालना करने वाले सूर्य के समान अग्नि मनुष्यों और देवों का नेता है। उपमान—ऋतुपा भगः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—क्षितीनां दैवीनां नेता, सादृश्यवाचक—इव है। अधिकोपमा है।

अरण्योर्निहितो जातवेदा गर्भ इव सुधितो गर्भिणीषु॥

(ऋ० ३।२९।२)

जातवेद अग्नि गर्भिणी स्त्रियों में गर्भ के समान अरणियों में निहित है।

उपमान—गर्भिणीषु गर्भः, उपमेय—जातवेदा, साधारण धर्म—अरण्योर्निहितः, सादृश्यवाचक—इव है।

अग्ने नेमिरराँ इव दैवांस्त्वं परिभूरसि ॥

(ऋ० ५।१३।६)

हे अग्ने ! जैसे रथनेमि अरों से व्याप्त रहती है उसी प्रकार तुम देवों को चारों ओर से व्याप्त कर रहते हो।

उपमान—नेमिः अरान्, उपमेय—अग्ने त्वं देवान्, साधारण धर्म—परिभूरसि, सादृश्यवाचक—इव है।

यस्य भा परुषाः शतमुद्धर्षयन्त्युक्षणः।
अश्वमेधस्य दानाः सोमा इव त्र्याशिरः ॥

(ऋ ५।२७।५)

वे वृषभ दही, सत्तू और दूध इन तीनों पदार्थों से मिश्रित सोम के समान मुझे आनन्द देनेवाले हों।

उपमान—त्र्याशिरः सोमाः, उपमेय—शतं उक्षणः, साधारण धर्म—मा उद्धर्षयन्ति, सादृश्यवाचक—इव है।

तस्येदु विश्वा भुवनाधिमूर्धनि वया इव रुरुहुः सप्त विस्रुहः ॥

(ऋ० ६।७।६)

उस (वैश्वानर अग्नि) के तेज से शाखा के समान सर्पणशील नदियाँ उत्पन्न होती हैं।

उपमान—वया, उपमेय—सप्तविस्रुहः, साधारण धर्म—रुरुहुः, सादृश्यवाचक—इव है।

वैश्वानराय मतिर्नव्यसी शुचिः सोम इव पवते चारुरग्नये ॥

(ऋ० ६।८।१)

वैश्वानर अग्नि के लिये शोभनीय स्तुति सोमरस के समान उपस्थित होती है।

उपमान—सोम, उपमेय—चारुः मतिः, साधारण धर्म—पवते, सादृश्यवाचक—इव है।

ओकिवांसा सुते सचाँ अश्वा सप्ती इवादने ॥

(ऋ० ६।५९।३)

भक्षणीय घास में सर्पणशील अश्व के समान अभिषुत सोम में (इन्द्राग्नी के साथ) समवेत होते हैं।

उपमान—आदने सप्ती अश्वाः, उपमेय—सुते, साधारण धर्म—सचा ओकिवांसा, सादृश्यवाचक—इव है। भूतोपमा है।

विश्वेत्सधीभिः सुभगो जनाँ अति द्युम्नैरुद्न इव तारिषत् ॥

(ऋ० ८।१९।१४)

वह शोभनकर्मा (मनुष्य) तेजयुक्त यश द्वारा जल के समान सबसे आगे बढ़ जाता है।

उपमान—उदन, उपमेय—द्युम्नैः सः सुभगः, साधारण धर्म—अतितारिषत्, सादृश्यवाचक—इव है।

यदो घृतेभिराहुते वाशीमग्निर्भरत उच्चावच।
असुर इव निर्णिजम् ॥

(ऋ० ८।१९।२३)

अग्नि प्रकाश को बिखेरनेवाले सूर्य के समान अपने रूप को ऊपर के लोकों में फैलाता है।

उपमान—असुरः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—निर्णिजम् सादृश्यवाचक—इव है। अधिकोपमा है।

अग्ने तव त्ये अजेरन्धानासो बृहद्भाः। अश्वा इव वृषणः तविषीयवः ॥

(ऋ० ८।२३।११)

हे अग्ने! तुम्हारी रश्मियाँ वीर्यवान अश्व के समान बल-सम्पन्न होती हैं।

उपमान—अश्वाः, उपमेय—अग्ने तव त्ये बृहद्भाः, साधारण धर्म—तविषीयवः, सादृश्यवाचक—इव है। भूतोपमा है।

आरोका इव धेवह तिग्मा अग्ने तव त्विषः।
दद्भिर्वनानि वप्सति ॥

(ऋ० ८।४३।३)

हे अग्ने! तुम्हारी तीक्ष्ण ज्वालायें तेजस्वी पशु के समान दाँतों से जंगलों को खा जाती हैं।

उपमान—आरोका, उपमेय—अग्ने तव तिग्मा त्विषः, साधारण धर्म—दद्भिः वनानि वप्सति, सादृश्यवाचक—इव है। भूतोपमा है।

उत त्वाग्ने मम स्तुतो वाश्राय प्रति हर्यते। गोष्ठं गाव इवाशत ॥

(ऋ० ८।४३।१७)

हे अग्ने! मुझ आङ्गिरस की स्तुतियाँ शब्द करते हुए बछड़े की ओर जानेवाली गायों के समान तुम्हारे प्रति जायें।

उपमान—वाश्राय गोष्ठं गावः, उपमेय—मम स्तुतः त्वा, साधारण धर्म—आशत, सादृश्यवाचक—इव है। भूतोपमा है।

पदं देवस्य मीळ्हुषोऽनाधृष्टाभिरूतिभिः।
भद्रा सूर्य इवोषदृक् ॥

(ऋ० ८।१०२।१५)

अग्निदेव की दृष्टि सूर्य के समान कल्याणकारिणी है।

उपमान—सूर्य, उपमेय—देवस्य उषदृक्, साधारण धर्म—भद्रा, सादृश्यवाचक—इव है। अधिकोपमा है।

घृतेनाहुत उर्विया विपप्रथे सूर्य इव रोचते सर्पिरासुतिः ॥

(ऋ० १०।६९।२)

घृत से आहुत (अग्नि) पृथ्वी पर सूर्य के समान प्रकाशित होता है।

उपमान—सूर्य, उपमेय—घृतेनाहुतः, साधारण धर्म—रोचते, सादृश्यवाचक—इव है। अश्रिकोपमा है।

शूर इव धृष्णुश्च्यवनो जनानां त्वमग्ने पृतनायूँरभिष्याः ॥

(ऋ० १०।६९।६)

हे अग्ने ! तुम धर्षणशील शत्रु को नष्ट करनेवाले वीर पुरुष के समान संग्राम के इच्छुक मनुष्यों को परास्त करो।

उपमान—धृष्णुः जनानां च्यवनः शूरः, उपमेय—अग्ने त्वम्, साधारण धर्म—पृतनायून् अभिष्याः, सादृश्यवाचक—इव है।

यथा—

निम्नलिखित १६ ऋचाओं में उपमावाचक यथा पद का प्रयोग हुआ है। यास्क के अनुसार यथा द्वारा क्रिया का सादृश्यबोध होने के कारण इन ऋचाओं में कर्मोपमा है।

आ नो बर्ही रिशादसो वरुणो मित्रो अर्यमा।
सीदन्तु मनुषो यथा ॥

(ऋ० १।२६।४)

शत्रुनाशक वरुण, मित्र और अर्यमा हमारे आसन पर उसी प्रकार बैठें जैसे मनु के यज्ञ में बैठे थे।

उपमान—मनुष्यः, उपमेय—वरुणः, मित्रः, अर्यमा, साधारण धर्म—नः बर्ही आ सीदन्तु, सादृश्यवाचक—यथा है।

यथा विप्रस्य मनुषो हविर्भिर्देवाँ अयजः कविभिः कविः सन्।
एवा होतः सत्यतर त्वमग्ने मन्द्रया जुह्वा यजस्व ॥

(ऋ० १।७६।५)

हे अग्ने। तुम मेधावियों के साथ मेधावी बनकर ज्ञानी मनुष्य की हवि द्वारा देवों के समान पूजित होओ।

उपमान—देवान्, उपमेय—अग्ने त्वम्, साधारण धर्म—विप्रस्य मनुषः हविर्भिः अजयः, सादृश्यवाचक—यथा है।

त्वया यथा गृत्समदासो अग्ने गुहावन्वन्त उपरां अभिष्युः।
सुवीरासो अभिमातिषाहः स्मत् सूरिभ्यो गृणते तद् वयो धाः ॥

(ऋ० २।४।९)

हे अग्ने ! जैसे गृत्समद आदि ऋषियों ने तुम्हारी कृपा से शत्रुओं को पराजित कर उत्कृष्ट स्थान प्राप्त किया था उसी प्रकार हम स्तुतिकर्ताओं को भी प्रदान करो।

उपमान—गृत्समदासः सुवीरासः अभिमातिषाहः उपरान् अभि स्युः, उपमेय—सूरिभ्यः गृणते स्मत्, साधारण धर्म—तद वयो धाः, सादृश्यवाचक—यथा है।

यथा विद्वाँ अरं करद्विश्वेभ्यो यजतेभ्यः।
अयमग्ने त्वे अपि यं यज्ञं चकृमा वयम् ॥

(ऋ० २।५।८)

हे अग्ने ! जिस प्रकार विद्वान् सब देवों की तृप्ति भली-भाँति करता है उसी प्रकार हमारा यज्ञ तुम्हारी तृप्ति के लिये हो ।

उपमान—विश्वेभ्यो यजतेभ्यः विद्वान्, उपमेय—वयं यं यज्ञं चकृमा अयम् त्वे, साधारण धर्म—अरं करद्, सादृश्यवाचक—यथा है ।

आ मन्दमाने उषसा उपाके उत स्मयेते तन्वा विरूपे ।
यथा नो मित्रो वस्मो जुजोषदिन्द्रो मरुत्वाँ उत वा महोभिः ॥
(ऋ० ३।४।६)

मित्र, वरुण और मरुत् गणों से युक्त इन्द्र के समान उषा और रात्रि अपने तेज से हमें तेजस्वी करें ।

उपमान—मित्रो वरुणो जुजोषदिन्द्रो मरुत्वाँ, उपमेय—उषसा, साधारण धर्म—महोभिः तन्वा स्मयेते, सादृश्यवाचक—यथा है ।

यथा ह त्यद् वसवो गौर्यं चित् पदि षिताममुञ्चता यजत्राः ।
एवो ष्व स्मन्मुञ्चता व्यंहः प्रतार्यग्ने प्रतरं न आयुः ॥
(ऋ० ४।१२।६)

हे अग्ने ! जिस प्रकार तुमने बँधे पैर वाली गौ को विमुक्त किया था उसी प्रकार हमें पाप से मुक्त करो ।

उपमान—पदि सितां त्यत् गौर्यं चित्, उपमेय—एवो अस्मत् अंहः, साधारण धर्म—सु विमुञ्चत्, सादृश्यवाचक—यथा है । भूतोपमा है ।

उत स्म यं शिशुं यथा नवं जनिष्टारणी ॥
(ऋ० ५।९।३)

जिस (अग्नि) को दो अरणियाँ नवजात शिशु के समान उत्पन्न करती हैं ।

उपमान—नवं शिशुं, उपमेय—यं, साधारण धर्म—जनिष्ट, सादृश्यवाचक—यथा है ।

यथा होतर्मनुषो देवताता यज्ञेभिः सूनो सहसो यजासि ।
एवा नो अद्य समना समानानुशन्नग्न उशतो यक्षि देवान् ॥
(ऋ० ६।४।१)

हे अग्ने ! जिस प्रकार मनु के देवताता नामक यज्ञ में तुमने हवि द्वारा देवताओं का यजन किया था उसी प्रकार आज हमारे इस यज्ञ में देवों का यजन करो ।

उपमान—मनुषः देवताता यज्ञेभिः यजासि, उपमेय—अग्ने एवा नो अद्य, साधारण धर्म—यक्षि, सादृश्यवाचक—यथा है ।

यथा वः स्वाहाग्नये दाशेम परीळाभिर्घृतवद्भिश्च हव्यैः ।
तेभिर्नो अग्ने अमितैर्महोभिः शतं पूर्भिरायसीभिर्नि पाहि ॥
(ऋ० ७।३।७)

हे अग्ने ! तुम अपने प्रसिद्ध अपरिमित तेज से असंख्य लोहे के दृढ़ किले वाले नगर के समान हमारी रक्षा करो ।

उपमान—शतम् आयसीभिः पूर्भिः. उपमेय—अग्ने तेभिः अमितैः महोभिः नः, साधारण धर्म—निपाहि, सादृश्यवाचक—यथा है ।

स्पार्हा यस्य श्रियो दृशे रयिर्वीरवतो यथा ।
अग्ने यज्ञस्य शोचतः ।।

(ऋ० ७।१५।५)

यज्ञ के अग्र भाग में दीप्यमान जिस (अग्नि) का तेज पुत्रवान् मनुष्य के समान दर्शक के लिए स्पृहणीय है ।

उपमान—वीरवतः रयिः, उपमेय—यज्ञस्य अग्ने शोचतः यस्य श्रियः, साधारण धर्म—स्पार्हा, सादृश्यवाचक—यथा है ।

अग्ने याहि सुशस्तिभिर्हव्या जुह्वान आनुषक् ।
यथा दूतो बभूथ हव्यवाहनः ।।

(ऋ० ८।२३।६)

हे अग्ने ! तुम दूत के समान हवि को ले जाने वाले हो ।

उपमान—दूतः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—हव्यवाहनः बभूथ, सादृश्यवाचक—यथा है ।

यथा चिद् वृद्धमतसमग्ने संजूर्वसि क्षमि ।
एवा दह मितमहो यो अस्मध्रुग्दुर्मन्मा कश्च वेनति ।।

(ऋ० ८।६०।७)

हे अग्ने ! पृथ्वी पर स्थित पुरानी गाड़ी के समान जो हमसे द्वेष करता है उसे नष्ट कर दो ।

उपमान—वृद्धमतसं, उपमेय—अग्ने यः अस्मध्रुक, साधारण धर्म—दह, सादृश्यवाचक—यथा है ।

तं नेमिमृभवो यथा नभस्व सहूतिभिः ।
नेदीयो यज्ञमङ्गिरः ।।

(ऋ० ८।७५।५)

हे अग्ने ! ऋभु द्वारा रथनेमि के लाने के समान आहूत इन (देवताओं) को यज्ञ में लाओ ।

उपमान—ऋभवः नेमिं, उपमेय—अङ्गिरः तं, साधारण धर्म—यज्ञम् आ नेदीयः, सादृश्यवाचक—यथा है ।

यथायज ऋतुभिर्देव देवानेवा यजस्व तन्वं सुजात ।।

(ऋ० १०।७।६)

हे शोभनजन्मा अग्निदेव ! जैसे विशिष्ट समय में देवों का तुमने यजन किया था उसी प्रकार तुम अपना भी यजन करो ।

उपमान—देवान् अयजः, उपमेय—देव तन्वं, साधारण धर्म—यजस्व, सादृश्यवाचक—यथा है ।

विश्वं स वेद वरुणोयथा धिया स यज्ञियो यजतु यज्ञियाँ ऋतून् ।

(ऋ० १०।११।१)

वह (सन्नि) अपनी अनुरूप प्रज्ञा से वरुण के समान सब कुछ जानता है।

उपमान—वरुणः, उपमेय—सः, साधारण धर्म—धिया विश्वं वेद, सादृश्यवाचक—यथा है।

आ ते यतन्ते रथ्यो यथा पृथक्शर्धांस्यग्ने अजराणि धक्षतः ॥

(ऋ० १०।९।७)

हे अग्ने ! तुम्हारा जरा रहित तेज रथी वीर के समान पृथक्-पृथक् प्रकट होता है।

उपमान—रथ्यः, उपमेय—अग्ने ते अजराणि शर्धांसि, साधारण धर्म—पृथक् आ यतन्ते, सादृश्यवाचक—यथा है।

**चित्—**

३ ऋचाओं में उपमावाचक चित् शब्द का प्रयोग हुआ है—

यच्चिद्धि शश्वता तना देवं देवं यजामहे ॥
त्वे इद्धूयते हविः ॥

(ऋ० १।२६।६)

जिस प्रकार शाश्वत काल से हम प्रत्येक देव का यजन करते आये हैं उसी प्रकार तुम्हें हवि दी जाती है।

उपमान—देवं देवं यजामहे, उपमेय—त्वे, साधारण धर्म—हविः हूयते, सादृश्यवाचक—चित् है।

तद् भद्रं तव दंसना पाकाय चिच्छदयति ॥

(ऋ० ३।९।७)

(अग्ने !) तुम्हारा वह कल्याणकारी कर्म बालक के समान अज्ञ को भी पूजा करने के लिए प्रेरित करता है।

उपमान—पाकाय, उपमेय—तव तद् भद्रं दंसना, साधारण धर्म—छदयति, सादृश्यवाचक—चित् है।

मित्रश्चिद्धिष्मा जुहुराणो देवाञ्छ्लोको न यातामपि वाजो अस्ति ॥

(ऋ० १०।१२।५)

सूर्य के समान देवों तक हमारी स्तुति-सम्पन्न वाणी पहुँचे।

उपमान—मित्रः, उपमेय—देवान्, साधारण धर्म—नः श्लोकः यातां, सादृश्यवाचक—चित् है।

**आ—**

२ ऋचाओं में उपमावाचक आ पद का प्रयोग हुआ है।

विभक्तासि चित्रभानो सिन्धोरूर्मा उपाक आ ॥

(ऋ० १।२७।६)

विलक्षण तेजस्वी (अग्नि) देव सिन्धु की लहर के समान धन का विभाजन करता है।

उपमान—सिन्धोः उपाके ऊर्मा, उपमेय—चित्रभानो, साधारण धर्म—विभक्तासि, सादृश्यवाचक—आ है।

धनोरधि प्रवत आ स ऋण्वत्यभि व्रजद्भिर्वयुना नवाधित ॥

(ऋ० १।१४४।५)

जैसे धनुष से बाण निकलता है उसी प्रकार वह (अग्नि) प्रकट होता है।

उपमान—धनोः प्रवतः, उपमेय—सः, साधारण धर्म—ऋण्वति, सादृश्यवाचक—आ है।

उपमान, उपमेय, साधारण धर्म और वाचक शब्द उपमा के इन चार अंगों के विद्यमान रहने पर जहाँ "इवेन समासो विभक्त्यलोपश्च" इस वार्तिक के अनुसार वाचक पद इव के साथ सुप्सुप् समास और विभक्ति का अलोप होता है वहाँ समासगा श्रौती पूर्णोपमा होती है। यास्क के अनुसार इव पद के द्वारा द्रव्य का सादृश्यबोधन होने से द्रव्योपमा होती है।

निम्नलिखित ६९ ऋचाओं में समासगा श्रौती पूर्णोपमा और द्रव्योपमा का प्रयोग हुआ है—

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव ॥

(ऋ० १।१।९)

(हे प्रसिद्ध अग्ने !) तुम हमारे लिये, पुत्र के लिए पिता के समान सुख से प्राप्त होने योग्य होओ।

उपमान—पिता सूनवे, उपमेय—स नः, साधारण धर्म—सूपायनो भव, सादृश्यवाचक—इव है। पितेव में समास है।

त्वमग्ने प्रयतदक्षिणं नरं वर्मेव स्यूतं परिपासि विश्वतः ॥

(ऋ० १।३१।१५)

हे अग्ने ! तुम प्रयत्नशील दाता मनुष्य को सिले हुए कवच के समान सब ओर से सुरक्षित रखते हो।

उपमान—स्यूतं वर्म, उपमेय—अग्ने त्वं प्रायत दक्षिणं नरं, साधारण धर्म—विश्वतः परिपासि, सादृश्यवाचक—इव है। वर्मेव में समास है।

घनेव विष्वग्वि जह्यराव्णस् तपुर्जम्भ यो अस्मध्रुक् ॥

(ऋ० १।३६।१६)

अपनी उष्णता से रोग-बीजों के नाशक हे अग्ने ! गदा से नष्ट करने के समान कंजूसों को चारों ओर से विनष्ट कर दो।

उपमान—घना, उपमेय—तपुर्जम्भ, साधारण धर्म—अराव्णः विष्वक् विजहि, सादृश्यवाचक—इव है। घनेव में समास है।

सिन्धोरिव प्रस्वनितास ऊर्मयोऽग्नेर्भ्राजन्ते अर्चयः ॥

(ऋ० १।४४।१२)

प्रचण्ड ध्वनि करनेवाली समुद्र की लहर के समान अग्नि की ज्वालायें प्रदीप्त होती हैं।

उपमान—सिन्धोः ऊर्मयः, उपमेय—अग्नेः अर्चयः, साधारण धर्म—प्रस्वनितासः भ्राजन्ते, सादृश्यवाचक—इव है। सिन्धोरिव में समास है।

वैश्वानर नाभिरसि क्षितीनां स्थूणेव जनाँ उपमिद्ययन्थ ॥

(ऋ० १।५९।१)

हे वैश्वानर अग्ने! समीपस्थ स्तम्भ के समान तुम सब जनों के आधार हो।

उपमान—उपमित् स्थूणा, उपमेय—वैश्वानर जनाँ, साधारण धर्म—ययन्थ, सादृश्यवाचक—इव है। स्थूणेव में समास है।

बहिनं यशसं विदथस्य केतुं सुप्राव्यं दूतं सद्यो अर्थम्।
द्विजन्मानं रयिमिव प्रशस्तं रातिं भरद् भृगवे मातरिश्वा ॥

(ऋ० १।६०।१)

धन की तरह श्रेष्ठ हविर्वाहक अग्नि को मातरिश्वावायु ने भृगु के लिए मित्र बनाया।

उपमान—रयिम्, उपमेय—वह्निं, साधारण धर्म—प्रशस्तं, सादृश्यवाचक—इव है। रयिमिव में समास है।

चित्तिरपां दमे विश्वायुः सद्मेव धीराः संभाय चक्रुः ॥

(ऋ० १।६७।१०)

ज्ञानी पुरुष गृह के समान ज्ञानदाता अग्नि की पूजा करके अपना कार्य करते हैं।

उपमान—सद्म, उपमेय—चित्तिरपां दमे विश्वायुः, साधारण धर्म—संभाय चक्रुः, सादृश्यवाचक—इव है। सद्मेव में समास है।

यानाये मर्तान्त्सुषूदो अग्ने ते स्याम मघवानो वयं च।
छायेव विश्वं भुवनं सिसक्ष्यापप्रिवान् रोदसी अन्तरिक्षम् ॥

(ऋ० १।७३।८)

हे अग्ने। तुम सम्पूर्ण विश्व को छाया की तरह शरण देते हो।

उपमान—छाया, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—विश्वं भुवनं सिसक्ष्या, सादृश्यवाचक—इव है। छायेव में समास है।

इमं स्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव सं महेमा मनीषया ॥

(ऋ० १।९४।१)

पूजनीय धनोत्पादक जातवेद (अग्नि) के लिये रथ के समान स्तोत्र अर्पित करते हैं।

उपमान—रथम्, उपमेय—जातवेदसे इमं स्तोमं, साधारण धर्म—सं महेम, सादृश्यवाचक—इव है। रथमिव में समास है।

द्विषो नो विश्वतोमुखाति नावेव पारय ।।

(ऋ० १।९७।७)

हे विश्वतोमुख अग्ने ! नौका से समुद्र पार होने के समान सब शत्रुओं से हमें पार ले जाओ।

उपमान—नावा, उपमेय—विश्वतोमुख द्विषः नः, साधारण धर्म—अति-पारय, सादृश्यवाचक—इव है। नावेव में समास है।

स नः सिन्धुमिव नावयाति पर्षा स्वस्तये ।।

(ऋ० १।९७।८)

वह (अग्नि) नौका से समुद्र पार जाने के समान हमारे कल्याण के लिये हमें सब शत्रुओं से पार ले जाये।

उपमान—नावया सिन्धुम्, उपमेय—स नः स्वस्तये, साधारण धर्म—अतिपर्षा, सादृश्यवाचक—इव है। सिन्धुमिव में समास है।

परिज्मानमिव द्यां होतारं चर्षणीनाम्।
शोचिष्केशं वृषणं यमिमा विशः प्रावन्तु जूतये विशः ।

(ऋ० १।१२७।२)

द्युलोक में सर्वत्र गमन करनेवाले सूर्य के समान जिसको प्रजायें तृप्त करती हैं।

उपमान—द्यां परिज्मानम्, उपमेय—यं शोचिष्केशं, साधारण धर्म—इमाः विशः प्रावन्तु, सादृश्यवाचक—इव है। परिज्मानमिव में समास है। अधिकोपमा है।

अस्माकमग्ने मघवत्सु दीदिह्यध श्वसीवान् वृषभो दमूनाः।
अवास्या शिशुमतीरदीदेर्वर्मेव युत्सु परिजर्भुराणः ।।

(ऋ० १।१४०।१०)

हे अग्ने। तुम युद्धभूमि में रक्षा करनेवाले कवच के समान शत्रु से हमारी रक्षा करते हुए दीप्त होओ।

उपमान—युत्सु वर्म, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—परिजर्भुराणः अदीदेः, सादृश्यवाचक—इव है। वर्मेव में समास है।

आदिद्धोतारं वृणते दिविष्टिषु भगमिव पपृचानासं ऋञ्जते ।।

(ऋ० १।१४।६)

हवनकर्ता मनुष्य सूर्य के समान होता अग्नि को प्रसन्न करते हैं।

उपमान—भगम्, उपमेय—होतारं, साधारण धर्म—ऋञ्जते, सादृश्य-वाचक—इव है। भगमिव में समास है। अधिकोपमा है।

पुरु त्वा दाश्वान् वोचेऽरिरग्ने तव स्विदा।
तोदस्येव शरण आ महस्य ॥

(ऋ० १।१५०।१)

हे अग्ने! जैसे महान् सूर्य की शरण में सब जीव आते हैं उसी प्रकार तुम्हारे शत्रु भी तुम्हारी शरण में आ जाते हैं।

उपमान—महस्य तोदस्य, उपमेय—अग्ने तव, साधारण धर्म—शरणे अरि। स्वित् आ, सादृश्यवाचक—इव है। तोदस्येव में समास है। अधिकोपमा है।

परि विश्वानि काव्या नेमिश्चक्रमिवाभवत् ॥

(ऋ० २।५।३)

जिस प्रकार धुरी के चारों ओर चक्र होता है उसी प्रकार सारी स्तुतियाँ (अग्नि के) चारों ओर घूमती हैं।

उपमान—नेमिः चक्रम्, उपमेय—विश्वानि काव्या, साधारण धर्म—परि-अभवत्, सादृश्यवाचक—इव है। चक्रमिव में समास है।

तासामध्वर्युरागतौ यवो वृष्टीव मोदते ॥

(ऋ० २।५।६)

(अग्नि को प्राप्त कर) अध्वर्यु उसी प्रकार प्रसन्न होता है जैसे वर्षा को प्राप्त कर जौ।

उपमान—वृष्टिः यवः, उपमेय—अध्वर्युः, साधारणधर्म—मोदते, सादृश्य-वाचक—इव है। वृष्टीव में समास है।

अन्तर्ह्यग्न ईयसे विद्वान् जन्मोभया कवे।
दूतो जन्येव मित्र्यः ॥

(ऋ० २।६।७)

हे अग्ने। तुम दूत के समान मनुष्यों का हित करनेवाले हो।

उपमान—दूतः जन्यः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—मित्र्यः, सादृश्यवाचक इव है। जन्येव में समास है।

वाजयन्निव नू रथान् योगाँ अग्नेरुप स्तुहि ॥

(ऋ० २।८।१)

(हे स्तोतागण!) धन देनेवाले जुते हुए रथ के समान अग्नि की स्तुति करो।

उपमान—वाजयन् योगान् रथान्, उपमेय—अग्नेः, साधारण धर्म—उपस्तुहि, सादृश्यवाचक—इव है। वाजयन्निव में समास है।

जोहूत्रो अग्निः प्रथमः पितेवेलस्पदे मनुषा यत् समिद्धः ॥

(ऋ० २।१०।१)

अग्नि पिता के समान सबका पालक है।

उपमान—पिता, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—जोहूत्रः, सादृश्यवाचक—इव है। पितेव में समास है।

स होता यस्य रोदसी चिदुर्वी यज्ञंयज्ञमभिवृधे गृणीतः।
प्राची अध्वरेव तस्थतुः सुमेके ऋतावरी ऋतजातस्य सत्ये ॥

(ऋ० ३।६।१०)

सत्य स्वरूप द्यावापृथ्वी यज्ञ के समान सत्य द्वारा प्रकट इस अग्नि के अनुकूल होकर रहती है।

उपमान—अध्वरा, उपमेय—ऋतावरी रोदसी, साधारण धर्म—ऋतजातस्य प्राची तस्थतुः, सादृश्यवाचक—इव है। अध्वरेव में समास है।

व्यंगेभिर्दिद्युतानः सधस्थ एकामिव रोदसी आ विवेश ॥

(ऋ० ३।७।४)

जिस प्रकार युवा पुरुष एक पत्नी के निकट जाता है उसी प्रकार तेजस्वी अग्नि द्यावा-पृथ्वी में व्याप्त होता है।

उपमान—एकाम्, उपमेय—अंगेभिः दिद्युतानः रोदसी, साधारण धर्म—आ विवेश, सादृश्यवाचक—इव है। एकामिव में समास है।

अन्वीमविन्दन् निचिरासो अद्रुहोऽप्सु सिंहमिव श्रितम् ॥

(ऋ० ३।९।४)

द्रोह न करनेवाले अमर देवों ने गुफा में छिपे सिंह के समान जल में छिपे इस (अग्नि) को खोजकर प्राप्त किया।

उपमान—सिंहम्, उपमेय—अप्सु श्रितम् ईं, साधारण धर्म—अनु अविन्दन्, सादृश्यवाचक—इव है। सिंहमिव में समास है। भूतोपमा है।

ससृवांसमिव त्मनाग्निभित्था तिरोहितम्।
. . . . . ऐनं नयन्मातरिश्वा परावतो देवेभ्यो मथितं परि ॥ . . . . .

(ऋ० ३।९।५)

स्वेच्छाचारी पुत्र के समान जल में छिपे इस अग्नि को मातरिश्वा वायु ने देवताओं के लिये प्रकट किया।

उपमान—ससृवांसम्, उपमेय—अग्निम्, साधारण धर्म—आनयत, सादृश्यवाचक—इव है। ससृवांसमिव में समास है।

जन्मेव नित्यं तनयं जुषस्व स्तोमं मे अग्ने तन्वा सुजात

(ऋ० ३।१५।२)

हे अग्ने ! तुम मेरे स्तोत्र को नित्य उसी प्रकार सुनो जिस प्रकार पिता पुत्र की बात सुनता है।

उपमान—तनयं जन्म, उपमेय—अग्ने मे स्तोमं, साधारण धर्म—नित्यं जुषस्व, सादृश्यवाचक—इव है। जन्मेव में समास है।

अमित्रायुधो मरुतामिव प्रयाः प्रथमजा ब्रह्मणो विश्वभिद् विदुः ॥

(ऋ० ३।२९।१५)

मरुतों के सैन्य अभियान के समान शत्रुओं के साथ युद्ध करनेवाले कुशिक गोत्रोत्पन्न ऋषिगण विश्व को जानते हैं।

उपमान—मरुताम् प्रयाः, उपमेय—अमित्रायुधः ब्रह्मणः, साधारण धर्म—आयुधः विश्वं विदुः, सादृश्यवाचक—इव है। मरुतामिव में समास है।

चित्तिमचित्तिं चिनवद्वि विद्वान् पृष्ठेव वीता वृजिना च मर्तान् ॥

(ऋ० ४।२।११)

जैसे अश्वपालक उत्तम और अनुत्तम पीठ वाले अश्व को अलग-अलग कर देता है उसी प्रकार ज्ञानवान् अग्नि मनुष्यों के पाप-पुण्य को पृथक्-पृथक् कर देता है।

उपमान—वीता वृजिना पृष्ठा, उपमेय—विद्वान् मर्तान् चित्तिं च अचित्तिं, साधारण धर्म—चिनवत्, सादृश्यवाचक—इव है। पृष्ठेव में समास है। भूतोपमा है।

आ यूथेव क्षुमति पश्वो अख्यद् देवानां यज्जनिमान्त्युग्र ॥

(ऋ० ४।२।१८)

जिस प्रकार धनी मनुष्य के गृह में पशुओं के समूह की प्रशंसा होती है उसी प्रकार जो देवों के समीप उनके जन्मों की प्रशंसा करते हैं उन मनुष्यों की प्रजा समर्थ होती है।

उपमान—क्षुमति पश्वः यूथ, उपमेय—यत् देवानां अन्ति जनिम, साधारण धर्म—आ अख्यत, सादृश्यवाचक—इव है। यूथेव में समास है। भूतोपमा है।

अयं योनिश्चकृमा यं वयं ते जायेव पत्य उशती सुवासाः।

(ऋ० ४।३।२)

(हे अग्ने !) पति की कामना करती हुई, सुन्दर वस्त्रों से सुशोभित स्त्री जिस प्रकार अपने समीप पति के लिये स्थान प्रस्तुत करती है उसी प्रकार हम तुम्हारे लिये स्थान तैयार करते हैं।

उपमान—पत्य उशती सुवासाः जाया, उपमेय—वयं ते, साधारण धर्म—यं चकृम अयं योनिः, सादृश्यवाचक—इव है। जायेव में समास है।

आ शृण्वते अदृपिताय मन्म नृचक्षसे सुमृलीकाय वेधः ।
देवाय शस्तिममृताय शंस ग्रावेव सोता मधुषुद्यमीले ॥

(ऋ० ४।३।३)

(हे ज्ञानी मनुष्य) जैसे सोम निचोड़नेवाला व्यक्ति सोम निचोड़नेवाले पत्थर की स्तुति करता है उसी प्रकार तुम भी दिव्यगुणयुक्त अमर (अग्नि) के लिये स्तोत्र और स्तुति वचनों का पाठ करो।

उपमान—सोता मधुषुद् ग्राबा ईले, उपमेय—वेधः देवाय अमृताय, साधारण धर्म—शस्तिम् शंस, सादृश्यवाचक—इव है। ग्रावेव में समास है।

यदुस्रियाणामप वारिव व्रन्पाति प्रियं रुपो अग्रं पदं वेः ॥

(ऋ० ४।५।८)

(दोग्धा) गौ के दूध को जल के समान दूहते हैं।

उपमान—वार, उपमेय—उस्रियाणाम् यद्, साधारण धर्म—अपव्रन्, सादृश्य-वाचक इव है। वारिव में समास है।

ऋतावानं विचेतसं पश्यन्तो द्यामिव स्तृभिः ।
विश्वेषामध्वराणां हस्कर्तारं दमे दमे ॥

(ऋ० ४।७।३)

नक्षत्रों से प्रकाशमान आकाश की तरह मायारहित, ज्ञानसम्पन्न (अग्नि) सम्पूर्ण यज्ञों को प्रकाशित करता है।

उपमान—स्तृभिः द्याम, उपमेय—ऋतावानं विचेतसं—विश्वेषामध्वराणां, साधारण धर्म—हस्कर्तारं पश्यन्तः, सादृश्यवाचक—इव है। द्यामिव में समास है।

स विप्रश्चर्षणीनां शवसा मानुषाणाम् ।
अति क्षिप्रेव विध्यति ॥

(ऋ० ४।८।८)

वह मेधावी (अग्नि) मनुष्यों के कष्टों को गतिशील बाण के समान तेजी से नष्ट कर देता है।

उपमान—क्षिप्रा, उपमेय—सः विप्रः, साधारण धर्म—शवसा अति विध्यति, सादृश्यवाचक—इव है। क्षिप्रेव में समास है।

दविध्वतो रश्मयः सूर्यस्य चर्मेवावाधुस्तमो अप्स्वन्तः ॥

(ऋ० ४।१३।४)

कम्पनयुक्त सूर्य की किरणें अन्तरिक्ष में स्थित अन्धकार को चर्म के समान हटा देती हैं।

उपमान—चर्म, उपमेय—तमः, साधारण धर्म—अवाधुः, सादृश्यवाचक—इव है। चर्मेव में समास है। हीनोपमा है।

परि त्रिविष्ट्यध्वरं यात्यग्नी रथीरिव ॥

(ऋ० ४।१५।२)

अग्नि रथी के समान यज्ञ के चारों ओर घूमता है।

उपमान—रथी, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—त्रिविष्टि परि याति, सादृश्यवाचक—इव है। रथीरिव में समास है।

अभि प्रवन्त समनेव योषाः कल्याण्यः स्मयमानासो अग्निम्।
घृतस्य धाराः समिधो नसन्तता जुषाणो हर्यति जातवेदाः ॥

(ऋ० ४।५८।८)

जिस प्रकार समान मनवाली, हितकारिणी, हँसती हुई स्त्रियाँ अपने पतियों के पास जाती हैं उसी प्रकार ये घृत की धारायें अग्नि की ओर जाती हैं।

उपमान—समना कल्याण्यः स्मयमानासः योषाः, उपमेय—घृतस्य धाराः अग्निम्, साधारण धर्म—अभि प्रवन्त, सादृश्यवाचक—इव है। समनेव में समास है।

अग्निमच्छा देवयतां मनांसि चक्षूंषीव सूर्ये सं चरन्ति ॥

(ऋ० ५।१।४)

जिस प्रकार मनुष्यों की आँखें सूर्योदय की प्रतीक्षा करती हैं उसी प्रकार उपासकों का मन अग्नि के चारों ओर घूमता है।

उपमान—सूर्ये चक्षूंषि, उपमेय—देवयतां मनांसि अग्निम्, साधारण धर्म—अच्छा संचरन्ति, सादृश्यवाचक—इव है। चक्षूंषीव में समास है।

गविष्ठिरो नमसा स्तोममग्नौ दिवीव रुक्ममुरुव्यञ्चमश्रेत् ॥

(ऋ० ५।१।२)

गौ का दान करनेवाले उपासक द्युलोक में तेजस्वी एवं गतिशील सूर्य की स्थापना के समान अग्नि में नमनपूर्वक स्तोत्र को स्थापित करते हैं।

उपमान—दिवि रुक्मं उरुव्यञ्च, उपमेय—अग्नौ नमसा स्तोमं, साधारण धर्म—अश्रेत, सादृश्यवाचक—इव है। दिवीव में समास है। अधिकोपमा है।

अव स्म यस्य वेषणे स्वेदं पथिषु जुह्वति।
अभीमह स्वजेन्यं भूमा पृष्ठेव रुरुहुः ॥

(ऋ० ५।७।५)

जैसे पुत्र पिता की पीठ पर चढ़ता है उसी प्रकार घृत की आहुति इस (अग्नि) में डाली जाती है।

उपमान—स्वजेन्यं भूम पृष्ठा, उपमेय—यस्य वेषणे स्वेदं, साधारण धर्म—अग्नि रुरुहुः, सादृश्यवाचक—इव है। पृष्ठेव में समास है।

त्वां गिरः सिन्धुमिवावनीर्महीरा पृणन्ति शवसा वर्धयन्ति च ॥

(ऋ० ५।११।५)

(हे अग्ने !) बड़ी नदियाँ जैसे समुद्र को परिपूर्ण करती हैं उसी प्रकार ये स्तुतियाँ तुम्हें पूर्ण करती हैं।

उपमान—मही: अवनी: सिन्धुम्, उयमेय—गिर: त्वां, साधारण धर्म—पृणन्ति, सादृश्यवाचक—इव है। सिन्धुमिव में समास है।

मातेव यद् भरसे पप्रथानो जनं जनं धायसे चक्षसे च ॥

(ऋ० ५।१५।४)

(हे अग्ने !) सर्वत्र प्रख्यात तुम माता के समान प्रत्येक जन का पोषण करते हो।

उपमान--माता, उपमेय—पप्रधान:, साधारण धर्म—जनं जनं यद् भरसे, सादृश्यवाचक—इव है। मातेव में समास है।

स नो विश्वा अति द्विष: पर्षन्नावेव सुक्रतु: ॥

(ऋ० ५।२५।९)

शोभनकर्मा वह (अग्नि) नौका द्वारा समुद्र पार होने के समान सब शत्रुओं से हमें पार ले जाये।

उपमान—नावा, उपमेय—सुक्रतु: स: विश्वा द्विष:, साधारण धर्म—अतिपर्षद्, सादृश्यवाचक—इव है। नावेव में समास है।

इन्द्राग्नी शतदाव्न्यश्वमेधे सुवीर्यम्।
क्षत्रं धारयतं बृहद् दिवि सूर्यमिवाजरम् ॥

(ऋ० ५।२७।६)

इन्द्राग्नी द्युलोक में कभी क्षीण न होनेवाले सूर्य के समान रक्षक एवं श्रेष्ठ बल को धारण करते हैं।

उपमान—दिवि अजरम् सूर्यम्, उपमेय—इन्द्राग्नी, साधारण धर्म—बृहत् सुवीर्यम् धारयतं, सादृश्यवाचक—इव है। सूर्यमिव में समास है।

दृलहा चित्स प्र भेदति द्युम्ना वाणीरिव क्षित: ॥

(ऋ० ५।८६।१)

ज्ञानी जिस प्रकार वाणी का मर्म समझ लेता है उसी प्रकार वह (अग्नि) दृढ़ एवं तेजस्वी शत्रु-सेना को छिन्न-भिन्न कर देता है।

उपमान—क्षित: वाणी:, उपमेय-- स: दृलहा द्युम्ना चित्, साधारण धर्म—भेदति, सादृश्यवाचक—इव है। वाणीरिव में समास है।

वृतेव यन्तं बहुभिर्वसव्यैस्त्वे रयिं जागृवांसो अनुग्मन् ॥

(ऋ० ६।१।३)

दोनों लोकों के मध्य जानेवाले मार्ग के समान वसुओं के श्रेष्ठ मार्ग से गमन करनेवाले दीप्तिमान् (अग्नि) का धन के इच्छुक यजमान अनुगमन करते हैं।

उपमान—वृता, उपमेय—बहुभि: वसव्यै:, साधारण धर्म—यन्तं, सादृश्यवाचक—इव है। वृतेव में समास है।

स त्वं न ऊर्जसन ऊर्जं धा राजेव जेरवृके क्षेष्यन्त: ॥

(ऋ० ७।४।४)

हे ऊर्जस्वी अन्न के दाता (अग्ने !) वह तुम राजा के समान हमारे शत्रुओं को जीतो।

उपमान—राजा, उपमेय—सः त्वं, साधारण धर्म—जेः, सादृश्यवाचक—इव है। राजेव में समास है।

क्षामेव विश्वा भुवनानि यस्मिन्त्सं सौभगानि दधिरे पावके ॥

(ऋ० ६।५।२)

जिस प्रकार पृथ्वी सम्पूर्ण प्राणियों को धारण करती है उसी प्रकार शोधक अग्नि सम्पूर्ण धन को धारण करता है।

उपमान—विश्वा भुवनानि क्षामा, उपमेय—यस्मिन् पावके सौभगानि, साधारण धर्म—संदधिरे, सादृश्यवाचक—इव है। क्षामेव में समास है।

व्यस्तभ्नाद्रोदसी मित्रो अद्भुतोऽन्तर्वावदक्रुणोज्ज्योतिषा तमः।
वि चर्मणीव धिषणे अवर्तयद्वैश्वानरो विश्वमधत्त वृष्ण्यम् ॥

(ऋ० ६।८।३)

वैश्वानर अग्नि ने चमड़े के समान द्यावापृथ्वी को विस्तृत किया है।

उपमान—चर्मणि, उपमेय—रोदसी, साधारण धर्म—अवर्तयत्, सादृश्यवाचक—इव है। चर्मणीव में समास है। हीनोपमा है।

उत योषणे दिव्ये मही न उषासानक्ता सुदुघेव धेनुः।
बर्हिषदा पुरुहूते मघोनी आ यज्ञिये सुविताय ॥

कामनाओं को पूर्ण करनेवाली गौ के समान अहोरात्रि हमारे लिये कल्याणकारी आश्रय प्रदान करे।

उपमान—सुदुघा धेनुः, उपमेय—उषासानक्ता, साधारण धर्म—सुविताय श्रयेताम्, सादृश्यवाचक—इव है। सुदुघेव में समास है। भूतोपमा है।

निर्यत्पूतेव स्वधितिः शुचिर्गात्स्वया कृपा तन्वा रोचमानः ॥

(ऋ० ७।३।९)

पवित्र अग्नि तलवार के समान प्रकाशमान तीक्ष्ण ज्वालाओं से युक्त होकर काष्ठ से आविर्भूत होता है।

उपमान—पूता स्वधितिः, उपमेय—शुचिः त्वया तन्वा कृपा, साधारण धर्म—रोचमानः निर्यत्, सादृश्यवाचक—इव है। पूतेव में समास है।

इमं वामस्य मन्मन इन्द्राग्नी पूर्व्यस्तुतिः।
अभ्राद् वृष्टिरिवाजनि ॥

(ऋ० ७।९४।१)

स्तोता (वसिष्ठ) से यह स्तुति मेघ से वर्षा के समान प्रादुर्भूत हुई है।

उपमान—अभ्रात् वृष्टिः, उपमेय—अस्य मन्मनः इयं पूर्व्यस्तुतिः, साधारण धर्म—अजनि, सादृश्यवाचक—इव है। वृष्टिरिव में समास है।

स मुदा काव्या पुरु विश्वं पुष्यति ॥

(ऋ० ८।३९।७)

जैसे पृथ्वी संसार को धारण करके पुष्ट करती है उसी प्रकार वह (अग्नि) प्रसन्नतापूर्वक सभी कार्यों को धारण कर पुष्ट करे।

उपमान—विश्वं भूम, उममेय—स: पुरु काव्या, साधारण धर्म—पुष्यति, सादृश्यवाचक—इव है। भूमेव में समास है।

येन दृलहा समत्स्वावीलु चित्साहिषीमह्यग्निर्वनेव वात इन्नभन्तान्मयके समे ।।

(ऋ० ८।४०।१)

जिस प्रकार अग्नि हवा के सहारे वृक्षों को भस्म कर देता है उसी प्रकार इस धन के द्वारा हम स्थिर शत्रु को पराजित करें।

उममान—अग्नि: वात इत् वना, उपमेय—येन समत्सु दृलहा चित् वीलु, साधारण धर्म—साहिषीमहि, सादृश्यवाचक—इव है। वनेव में समास है।

एते त्ये वृधगग्नय इद्धासः समदृक्षत। उषसामिव केतव: ।।

(ऋ ८।४३।५)

(हे अग्ने!) तुम्हारी ये प्रदीप्त ज्वालायें उषाकाल की सूचना देनेवाली पताका के समान हैं।

उपमान—उषसाम् केतव:, उपमेय—एते त्ये वृधक्—इद्धास: अन्य:, साधारण धर्म—समदृक्षत, सादृश्यवाचक—इव है। उषसामिव में समास है।

अग्ने घृतव्रताय ते समुद्रायेव सिन्धव: । गिरो वाश्रास ईरते ।।

(ऋ०८।४४।२५)

हे अग्ने! समुद्र की ओर जानेवाली नदियों के समान सुन्दर शब्दवाली स्तुतियाँ तुम्हारे लिये प्रेरित होती हैं।

उपमान—समुद्राय सिन्धव:, उपमेय—ते वाश्रास गिर:, साधारण धर्म—ईरते, सादृश्यवाचक—इव है। समुद्रायेव में समास है।

विश्वासु विश्वविते‍व हव्यो भुवद्वस्तुर्ऋषूणाम् ।।

(ऋ० ८।७१।१५)

प्रजारक्षक राजा के समान ऋषियों का रक्षक वासक अग्नि हव्य को ग्रहण करे।

उपमान—विश्वासु विक्ष् अविता, उपमेय—ऋषूणाम् अविता वस्तु:, साधारण धर्म—हव्यो भुवत्, सादृश्यवाचक—इव है। अवितेव में समास है।

यक्ष्वा हि देवहूतमाँ अश्वाँ अग्ने रथीरिव ।।

(ऋ० ८।७५।१)

हे अग्ने! सारथि के समान अभीष्ट प्राप्ति के लिये देवों का आह्वान करने वाले अश्वों को रथ (यज्ञ) में योजित करो।

उपमान—रथीं, उपमेय—अग्ने देव हूतमां, अश्वां, साधारण धर्म—युक्ष्वा, सादृश्यवाचक—इव है। रथीरिव में समास है।

कविमिव प्रचेतसं यं देवासो अधद्विता।
नि मर्त्येष्वादधुः॥

(ऋ० ८।८४।२)

प्रकृष्ट ज्ञानी पुरुष के समान इन्द्रादि देवों ने जिस (अग्नि) को मनुष्यों में गार्हपत्य और आहवनीय अथवा भूमि पर हवि आहरण और स्वर्ग में हवि प्रदान करने रूप दो कार्यों के लिये नियुक्त किया है।

उपमान—प्रचेतसं कविम्, उपमेय—देवासः यं मर्त्ये, साधारण धर्म—द्विता नि आ दधुः, सादृश्यवाचक—इव है। कविमिव में समास है।

सहस्रसां मेधसातावि व त्मनाग्निं धीभिः सपर्यत॥

(ऋ० ८।१०३।३)

हे मनुष्यो! मेधसाता यज्ञ के समान हजारों गायों एवं धन के दाता अग्नि की अपने कर्त्तव्यों द्वारा स्वयं ही परिचर्या करो।

उपमान—मेधसाता, उपमेय—सहस्रसां अग्निं, साधारण धर्म—धीभिः त्मना सपर्यत, सादृश्यवाचक—इव है। मेधसाताविव में समास है।

यं त्वा जनासो अभि संचरन्ति गाव उष्णमिव व्रजं यविष्ठ।

(ऋ० १०।४।२)

जैसे गौ शीतजनित दुःख को दूर करने के लिये उष्ण व्रज अर्थात् बाड़े का आश्रय लेती है उसी प्रकार यजमानगण तुम्हारी शरण में जाते हैं।

उपमान—गावः उष्णं व्रजं, उपमेय—यविष्ठ यं त्वा जनासः, साधारण धर्म—अभि संचरन्ति, सादृश्यवाचक—इव है। उष्णमिव में समास है।

द्युभिर्हितं मित्रमिव प्रयोगं प्रत्नमृत्विजमध्वरस्य जारम्।
बाहुभ्यामग्निमायवोऽजनन्त विक्षु होतारं न्यसादयन्त॥

(ऋ० १०।७।५)

सूर्य के समान तेजस्वी अग्नि को यजमान अपने हाथों से उत्पन्न करते हैं।

उपमान—मित्रम्, उपमेय—अग्निम्, साधारण धर्म—द्युभिर्हितं, सादृश्य-वाचक—इव है। अधिकोपमा है।

सदासि रण्वो यवसेव पुष्यते होत्राभिरग्ने मनुषः स्वध्वरः॥

(ऋ० १०।११।५)

हे अग्ने! जिस प्रकार घास हस्ती, अश्व आदि चतुष्पदों को पुष्ट कर रमणीय बनाता है उसी प्रकार तुम सभी जीवों को पुष्ट कर रमणीय बनाते हो।

उपमान—यवस, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—सदा पुष्यते रण्वः, सादृश्य-वाचक—इव है। यवसेव में समास है।

त्वे धर्माण आ सते जुहूभिः सिञ्चतीरिव ॥

(ऋ० १०।२१।३)

(हे अग्ने !) यज्ञकर्त्ता ऋत्विक्गण सम्पूर्ण आहुति युक्त होमपात्रों से जल सींचती हुई नारी के समान तुम्हारी उपासना करते हैं।

उपमान—सिञ्चतीः, उपमेय—धर्माणः, साधारण धर्म—जुहुभिः त्वे आसते, सादृश्यवाचक—इव है। सिञ्चतीरिव में समास है।

अक्रन्ददग्निः स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद्वीरुधः समञ्जन् ॥

(ऋ० १०।४५।४)

दावाग्नि गर्जना करते हुए बादल के समान महान शब्द करता है।

उपमान—स्तनयन् द्यौः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—अक्रन्दत्, सादृश्य-वाचक—इव है। स्तनयन्निव में समास है।

त्वे धेनुः सुदुघा जातवेदोऽसश्चतेव समना सबर्धुक्।

(ऋ० १०।६९।८)

हे जातयज्ञ ! कहीं भी एक जगह संयुक्त न होनेवाले सूर्य से संगत अमृत का दोहन करने वाली गौ के समान तुम्हारी गौ सरलता से दुही जाती है।

उपमान—असश्चता समान सबर्धुक, उपमेय—जातवेदः त्वे धेनुः, साधारण धर्म—सुदुघा, सादृश्यवाचक—इव है। असश्चतेव में समास है। भूतोपमा है।

पितेव पुत्रमभिरुरुक्षस्थे त्वामग्ने वध्र्यश्वः सपर्यन् ॥

(ऋ० १०।६९।१०)

हे अग्ने ! जैसे पिता पुत्र को गोद में उठाकर प्यार करता है उसी प्रकार वेदी में परिचर्या करते हुए वध्र्यश्व ने तुम्हें पुष्ट किया था।

उपमान—पिता पुत्रम्, उपमेय—अग्ने वध्र्यश्वः त्वाम्, साधारण धर्म—उपस्थे सपर्यन् अबिभः, सादृश्यवाचक—इव है। पितेव में समास है।

किं देवेषु त्यज एनश्चकर्थाग्ने पृच्छामि नु त्वामविद्वान्।
अक्रीलन् क्रीलन् हरिरत्तवेऽदन्वि पर्वशश्चकर्त गामिवासिः ॥

(ऋ० १०।७९।६)

हे अग्ने ! जैसे तलवार गाय को टुकड़े-टुकड़े कर डालती है उसी प्रकार तुम भक्षणीय काष्ठादि की प्रत्येक संन्धि को अलग-अलग कर डालते हो।

उपमान—असिः गाम्, उपमेय—अग्ने अत्तवे अदन्, साधारण धर्म—पर्वशः विचकर्म, सादृश्यवाचक—इव है। गामिव में समास है। भूतोपमा है।

स दर्शतश्रीरतिथिर्गृहे गृहे वने वने शिश्रिये तक्ववीरिव।
जनं जनं जन्यो नाति मन्यते विश आ क्षेति विश्यो विशं विशम् ॥
(ऋ० १०।९१।२)

दर्शनीय विभूतिवाला अग्नि सभी मनुष्यों को शिकारी के समान त्यागकर नहीं जाता।

उपमान—तक्ववीः, उपमेय—दर्शतश्रीः जन्यः सः, साधरण धर्म—जनं जनं नाति मन्यते, सादृश्यवाचक—इव है। तक्ववीरिव समास है।

अग्निं हिन्वन्तु नो धियः सप्तिमाशुमिवाजिषु ॥
(ऋ० १०।१५६।१)

युद्धभूमि में शीघ्रगामी सर्पणशील अश्व के समान अग्नि को हमारी स्तुतियाँ प्रेरित करें।

उपमान—आजिषु सप्तिम् आशुं, उपमेय—नः धियः अग्निम्, साधारण धर्म—हिन्वन्तु, सादृश्यवाचक—इव है। आशुमिव में समास है। भूतोपमा है।

**(३) तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा—**

उपमा के चारों अंगों के विद्यमान रहने पर जहाँ तुल्य, वत् आदि पदों के प्रयोग द्वारा साधर्म्य की प्रतीति आक्षेपगम्य होती है, शब्द-साम्य या साक्षाद् गम्य नहीं वहाँ तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा होती है, कारण यहाँ साधर्म्य शब्द-प्रतिपाद्य नहीं अपितु अर्थ-लभ्य होता है और "तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः" (अ० ५।१।११५) सूत्र से 'तुल्य" के (सामान्य सादृश्य रूप) अर्थ में विहित वति प्रत्यय का प्रयोग होता है।

यास्क ने वति प्रत्यय द्वारा क्रिया से भिन्न सिद्ध पदार्थों की उपमा को सिद्धोपमा कहा है।

निम्नलिखित १३ ऋचाओं में तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा और सिद्धोपमा का प्रयोग हुआ है—

नि त्वा यज्ञस्य साधनमग्ने होतारमृत्विजम्।
मनुष्वद् देव धीमहि प्रचेतसं जीरं दूतममर्त्यम् ॥
(ऋ० १।४४।११)

हे अग्ने! मनु के समान यज्ञ के साधन होता तुम्हें यहाँ स्थापित करते हैं।

उपमान—मनुष्, उपमेय—अग्ने होतारम्, साधारण धर्म—निधीमहि, सादृश्यवाचक—वत् है।

स नो रेवत्समिधानः स्वस्तये संददस्वान् रयिमस्मासु दीदिहि ॥
(ऋ० २।२।६)

हे अग्ने ! तुम हमारे कल्याण के लिये धनवान मनुष्य के समान ऐश्वर्य प्रदान करो।

उपमान—रै, उपमेय—अग्ने नः स्वस्तये, साधारण धर्म—रयिं अस्मासु दीदिहि, सादृश्यवाचक—वत् है।

मनुष्वद् दैव्यमष्टमं पोता विश्वं तदिन्विति ॥

(ऋ० २।५।२)

पावक वह (अग्नि) मनु के समान यज्ञ का आठवाँ स्थानीय होकर पूर्ण रूप से व्याप्त होता है।

उपमान—मनुष्, उपमेय—तत् पोता, साधरण धर्म—दैव्यम् अष्टमं विश्वं इन्वति, सादृश्यवाचक—वत् है।

ज्ञेया भागं सहसानो वरेण त्वा दूतासो मनुवद् वदेम ॥

(ऋ० २।१०।६)

( हे अग्ने ! ) तुम्हारा दूत होने पर हम मनु के समान स्तुति करते हैं।

उपमान—मनु, उपमेय—त्वा दूतासः, साधारण धर्म—वदेम, सादृश्यवाचक—वत् है।

अग्न एषु क्षयेष्वा रेवन्नः शुक्र दीदिहि द्युमत्पावक दीदिहि ॥

(ऋ० ५।२३।४)

हे अग्ने ! तुम हमारे घरों में ऐश्वर्यवान व्यक्ति के समान अन्न और यश से युक्त तेज को फैलाओ।

उपमान—रै, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—एषु क्षयेषु द्युमत् आ दीदिहि, सादृश्यवाचक—वत् है।

इममु त्यमथर्ववदग्निं मन्थन्ति वेधसः ॥

(ऋ० ६।१५।१७)

यज्ञकर्त्ता ऋत्विक्गण अथर्वा ऋषि के समान अग्नि का मन्थन करते हैं।

उपमान—अथर्व, उपमेय—वेधसः, साधारण धर्म—अग्निं मन्थन्ति, सादृश्यवाचक—वत् है।

बृहद्भिरग्ने अर्चिभिः शुक्रेण देव शोचिषा।
भरद्वाजे समिधानो यविष्ठ्य रेवन्नः शुक्र दीदिहि द्युमत्पावक दीदिहि ॥

(ऋ० ६।४८।७)

हे तेजस्वी अग्ने ! हमारे लिये धनवान के समान अन्न और यश से युक्त तेज सम्पन्न होकर प्रदीप्त होओ।

उपमान—रै, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—द्युमत् दीदिहि, सादृश्यवाचक वत् है।

ईलेन्यं वो असुरं सुदक्षमन्तर्दूतं रोदसी सत्यवाचम् ।
मनुष्वदग्निं मनुना समिद्धं समध्वराय सदमिन्महेम ॥

(ऋ० ७।२।३)

(हे अध्वर्यु !) तुम सब मनु के समान प्रजापति द्वारा प्रज्वलित अग्नि की सदैव पूजा करो।

उपमान—मनुष्, उपमेय—वः मनुना, साधारण धर्म—समिद्धं अग्निं संमहेम, सादृश्यवाचक—वत् है।

मनुष्वदग्न इह यक्षि देवान्भवा नो दूतो अभिशस्तिपावा ॥

(ऋ० ७।११।३)

हे दूत अग्ने ! मनु के समान इस यज्ञ में देवताओं का यजन करो।

उपमान—मनुष्, उपमेय—दूतो अग्ने, साधारण धर्म—इह देवान् यक्षि, सादृश्यवाचक—वत् है।

नूनमर्च विहायसे स्तोमेभिः स्थूरयूपवत् ।
ऋषे वैयश्व दम्यायाग्नये ॥

(ऋ० ८।२३।२४)

हे वैयश्व ! स्थूरयूप नामक ऋषि के समान स्तोमों से अग्नि की स्तुति करो।

उपमान—स्थूरयूप, उपमेय—वैयश्व, साधारण धर्म—स्तोमेभिः अग्नये अर्च, सादृश्यवाचक—वत् है।

यं त्वा जनास इन्धते मनुष्वदङ्गिरस्तम ।
अग्ने स बोधि मे वचः ॥

(ऋ० ८।४३।२७)

हे अग्ने ! मनुष्य तुम्हें मनु के समान प्रज्वलित करते हैं।

उपमान—मनुष्, उपमेय—अग्ने त्वा जनासः, साधारण धर्म—इन्धते, सादृश्य-वाचक—वत् है।

मनुष्वद्यज्ञं सुधिता हवींषीला देवी घृतपदी जुषन्त ।

(ऋ० १०।७०।८)

इला देवी मनु के यज्ञ के समान इस यज्ञ में हवि का सेवन करें।

उपमान—मनुष्, उपमेय—इला देवी, साधारण धर्म—यज्ञं सुधिता हवींषि जुषन्त, सादृश्यवाचक—वत् है।

आ नो यज्ञं भारती तूयमेत्विला मनुष्वदिह चेतयन्ती ॥

(ऋ० १०।११०।८)

जैसे करने योग्य कार्य को मनु जानता है उसी प्रकार जानती हुई इला देवी यहाँ आये।

(२) उपमानलुप्तोपमा—

जहाँ उपमा के चारों अंगों में से उपमान का शब्दशः कथन नहीं होता है वहाँ उपमानलुप्तोपमा होती है। इसके २ भेद हैं—वाक्यगा आर्थी उपमानलुप्तोपमा और और समासगा आर्थी उपमानलुप्तोपमा। काव्यप्रकाश में उपमानलुप्ता श्रौती उपमा को मान्यता नहीं मिली है; कारण इव आदि साधर्म्यवाचक पद उपमान में अन्वित होकर ही अपने अर्थ-सामर्थ्य का प्रतिपादन करते हैं। उपमान के लोप होने पर यह संभव नहीं हो सकता अतः श्रौती उपमानलुप्ता नहीं मानी गई है। किन्तु यहाँ वेद में उपमान के अभाव में भी उपमान के विशेषणों का प्रयोग कर न आदि सादृश्यवाचक पद का प्रयोग किया गया है अतः वाक्यगा उपमानलुप्ता को श्रौती मान सकते हैं।

(क) वाक्यगा श्रौती उपमानलुप्तोपमा –

एक ऋचा में—वाक्यगा श्रौती उपमानलुप्तोपमा का प्रयोग—

शिवाभिर्न स्मयमानाभिरागात्पतन्ति मिहः स्तनयन्त्यभ्रा ।।

(ऋ० १।७९।२)

हास्ययुक्त कल्याणकारिणी (स्त्रियों) के समान बिजली से युक्त मेघ आता है। उपमेय—अभ्रा स्तनयन्ति मिहः पतन्ति, साधारण धर्म—आगात्, सादृश्य-वाचक –न है। यहाँ उपमान के विशेषण शिवाभिः स्मयमानाभिः का उल्लेख है किन्तु उपमान रूप "स्त्री" का शब्दशः कथन नहीं है।

(ख) समासगा आर्थी उपमानलुप्तोपमा—

२ ऋचाओं में समासगा आर्थी उपमानलुप्तोपमा का प्रयोग हुआ है—

महिषीव त्वद्रयिस्त्वद्वाजा उदीरते ।।

(ऋ० ५।२५।७)

जिस प्रकार स्त्री से (पुत्र) उत्पन्न होता है उसी प्रकार (हे अग्ने !) तुमसे धन उत्पन्न होता है।

उपमेय—त्वत् रयिः, साधारण धर्म—उदीरते, सादृश्यवाचक—इव है। पुत्र रूप उपमान का लोप है। महिषीव में समास है। द्रव्योपमा है।

अयमग्निरुरुष्यत्यमृतादिव जन्मनः ।।

(ऋ० १०।१७६।४)

यह अग्नि देवताओं से होनेवाले (भय) के समान मनुष्य से होनेवाले (भय) से भी रक्षा करता है।

उपमेय—अयम् अग्निः जन्मनः, साधारण धर्म—उरुष्यति, सादृश्यवाचक—इव है। भय रूप उपमान का लोप है। अमृतादिव में समास है। द्रव्योपमा है।

(३) वाचकलुप्तोपमा—

यथा, इव, न आदि सादृश्यवाचक पदों का उपादान नहीं होने पर वाचकलुप्तोपमा होती है। इसके ६ भेद हैं—(१) समास में (२) कर्म कारक से विहित क्यच् में, (३) अधिकरण कारक से विहित क्यच् में, (४) कर्तृकारक से विहित क्यङ् में, (५) कर्मोपपद णमुल् प्रत्यय के विधान में और (६) कर्तृपपद प्रत्यय के प्रयोग में। छः में से केवल दो—(१) समासगा वाचकलुप्तोपमा और (२) कर्तृ कारक से विहित क्यङ् के प्रयोग में वाचकलुप्तोपमा के उदाहरण मिलते हैं।

इन दोनों के अतिरिक्त (१) वाक्यगा वाचकलुप्तोपमा और (२) वतुप् प्रत्ययान्त वाचकलुप्तोपमा के भी उदाहरण मिलते हैं—जिनका काव्यप्रकाश में उल्लेख नहीं किया गया है।

(क) वाक्यगा वाचकलुप्तोपमा—

उपमावाचक पद का शब्दशः कथन नहीं होने पर और उपमा के शेष तीनों अंगों के स्पष्टतया असमस्त पद द्वारा प्रतिपादन होने पर वाक्यगा वाचकलुप्तोपमा होती है। निम्नलिखित २२ ऋचाओं में इसका प्रयोग हुआ है—

अग्ने गृणन्तमंहस उरुष्योर्जो नपात्पूर्भिरायसीभिः॥

(ऋ० १।५८।८)

हे अग्ने! लोहे के दृढ़ किलों से युक्त नगर (के समान) स्तुतिकर्ता को पाप से रक्षा करो।

उपमान—आयसीभिः पूर्भिः, उपमेय—अग्ने गृणन्तं अंहसः, साधारण धर्म—उरुष्य है। वाचक पद का लोप है।

कृष्णप्रुतौ वेविजे अस्य सक्षिता उभा तरेते अभि मातरा शिशुम्।
प्राचाजिह्वं ध्वसयन्तं तृषुच्युतमा साच्यं कुपयं वर्धनं पितुः॥

(ऋ० १।१४०।३)

(अरणि रूप) दोनों मातायें शिशु के (समान) अन्धकारनाशक (अग्नि) को उत्पन्न करती हैं।

उपमान—शिशुम् उपमेय—उभा मातरा ध्वसयन्तं प्राचाजिह्वं, साधारण धर्म—अभितरेते है। वाचक पद का लोप है।

एवा नो अग्ने अमृतेषु पूर्व्य धीष्पीपाय बृहद्दिवेषु मानुषा।
दुहाना धेनुर्वृजनेषु कारवे त्मना शतिनं पुरुरूपमिषणि॥

(ऋ० २।२।९)

हे अग्ने! तुम पयस्विनी धेनु (के समान) यज्ञ में कर्म करनेवाले को स्वयं विविध प्रकार का धन देते हो।

उपमान—दुह्राना धेनुः, उपमेय—अग्ने त्मना, साधारण धर्म—पुरुरूपं शतिनं इषणि है। वाचक पद का लोप है। भूतोपमा है।

तमस्मेरा युवतयो युवानं मर्मृज्यमानाः परि यन्त्यापः ॥

(ऋ० २।३५।४)

(जिस प्रकार) अभिमान से रहित युवतियाँ तरुण पुरुष को अलंकृत करती हैं (उसी प्रकार) शुद्ध करनेवाला जल उस (अपां नपात् देव) के चारों ओर बहता है।

उपमान—अस्मेराः युवतयः युवानं, उपमेय—तं मर्मृज्यमानाः आपः, साधारण धर्म—परियन्ति है। वाचक पद का लोप है।

अजीजनन्नमृतं मर्त्यासोऽस्त्रेमाणं तरणिं वीलुजम्भम्।
दश स्वसारो अग्रुवः समीचीः पुमांसं जातमभि सं रभन्ते ॥

(ऋ० ३।२९।१३)

पुत्रोत्पत्ति (के समान) अग्नि को उत्पन्न कर भगिनी रूप अंगुलियाँ प्रसन्न होकर शब्द करती हैं।

उपमान—पुमांसं जातं, उपमेय—वीलुजम्भं, साधारण धर्म—अजीजनन् समीचीः अभि सरभन्ते, वाचक पद का लोप है।

यस्ते भरादन्नियते चिदन्नं निशिषन्मन्द्रमतिथिमुदीरत् ॥

(ऋ० ४।२।७)

(हे अग्ने!) जो अतिथि के (समान) तुम्हारा आदर करता है उसके घर में अचल सम्पत्ति हो।

उपमान—अतिथिम्, उपमेय—यः ते, साधारण धर्म—उदीरत्, वाचक पद का लोप है।

अग्निर्होता नो अध्वरे वाजी सन्परि णीयते ॥

(ऋ० ४।१५।१)

अग्नि हमारे यज्ञ में शीघ्रगामी अश्व (के समान) सब ओर ले जाया जाता है।

उपमान—वाजी, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—परिणीयते, वाचक पद का लोप है। भूतोपमा है।

अव स्पृधि पितरं योधि विद्वान् पुत्रो यस्ते सहसः सून ऊहे ॥

(ऋ० ५।३।९)

हे बलपुत्र अग्ने! (जैसे) पुत्र पिता की सेवा करता है (उसी प्रकार) जो विद्वान् तुम्हारी सेवा करता है उसे तुम संकटों से पार कर दो।

उपमान—पुत्रः पिता, उपमेय—यः विद्वान् ते, साधारण धर्म—ऊहे, वाचक पद का लोप है।

वातस्य पत्मन्नीलिता दैव्या होतारा मनुषः ।
इमं नो यज्ञमा गतम् ।।

(ऋ० ५।५।७)

हे दिव्य होता ! वायु की समान) गति से हमारे इस यज्ञ में आओ ।

उपमान—वातस्य, उपमेय—दैव्या होतारा, साधारण धर्म—आ गतम् वाचक पद का लोप है ।

तव त्ये अग्ने अर्चयो महि व्राधन्त वाजिनः ।।

(ऋ० ५।६।७)

हे अग्ने ! तुम्हारी वे किरणें आहुतियुक्त होकर अश्व के (समान) बहुत बढ़ती हैं ।

उपमान—वाजिनः, उपमेय—अग्ने तव त्ये अर्चयः, साधारण धर्म—महि व्राधन्त, वाचक पद का लोप है । भूतोपमा है ।

नवं नु स्तोममग्नये दिवः श्येनाय जीजनम् ।।

(ऋ० ७।१५।४)

श्येन पक्षी के (समान) शीघ्र गमनशील अग्नि के लिये नूतन स्तोत्र रचते हैं ।

उपमान—श्येनाय, उपमेय—अग्नये, साधारण धर्म—नु, वाचक पद का लोप है । भूतोपमा है ।

ताविद्दुः शंसं मर्त्यं दुर्विद्वांसं रक्षस्विनम् ।
आभोगं हन्मना हतमुदर्धिं हन्मना हतम् ।।

(ऋ० ७।९४।१२)

(हे इन्द्राग्नी) तुम दोनों दुष्ट हिंसक शत्रु को मारने वाले साधन से घड़े के (समान) तोड़ डालो ।

उपमान—उदर्धि, उपमेय—दुःशंसं दुर्विद्वांसं मर्त्यं, साधारण धर्म—हन्मना हतम्, वाचक पद का लोप है ।

तं त्वा जनन्त मातरः कविं देवासो अङ्गिरः ।।

(ऋ० ८।१०२।१७)

देवों ने उस (अग्नि) को माता के (समान) उत्पन्न किया ।

उपमान—मातरः, उपमेय—देवासः तं त्वा, साधारण धर्म—अजनन्त, वाचक पद का लोप है ।

स जातो गर्भो असि रोदस्योरग्ने चारुर्विभृत ओषधीषु ।
चित्रः शिशुः परि तमांस्यक्तून्प्र मातृभ्यो अधि कनिक्रदद्गाः ।।

(ऋ० १०।१।२)

हे अग्ने ! शिशु के (समान) तुम कल्याणकारी अरणियों के मन्थन से उत्पन्न होते हो।

उपमान—शिशुः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—ओषधीषु जातः, वाचक पद का लोप है।

अग्निं मन्ये पितरमग्निमापिमग्निं भ्रातरं सदमित्सखायम्।
अग्नेरनीकं बृहतः सपर्यं दिवि शुक्रं यजतं सूर्यस्य॥

(ऋ० १०।७।३)

द्युलोक में स्थित सूर्य के (समान) तेजस्वी) अग्नि को पिता मानता हूँ।

उपमान—सूर्यस्य, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म—शुक्रं पितरं मन्ये, वाचक पद का लोप है। अधिकोपमा है।

प्र केतुना बृहता यात्यग्निरा रोदसी वृषभो रोरवीति॥

(ऋ० १०।८।१)

अग्नि वृषभ के (समान) अत्यधिक शब्द करता है।

उपमान—वृषभः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—रोरवीति, वाचक पद का लोप है। भूतोपमा है।

यस्य धर्मन्त्स्वरेनीः सपर्यन्ति मातुरूधः॥

(ऋ० १०।२०।२)

(जैसे) गौ अपना दुग्धपान कराकर बछड़े का पालन करती है (उसी प्रकार) सभी देवता अपनी गमनशील स्तुतियों से इस (अग्नि) की परिचर्या करते हैं।

उपमान—मातुः ऊधः, उपमेय—स्वः यस्य एनीः, साधारण धर्म—सपर्यन्ति, वाचक पद का लोप है। भूतोपमा है।

यत्ते मनुर्यदनीकं सुमित्रः समीधे अग्ने तदिदं नवीयः॥

(ऋ० १०।६९।३)

हे अग्ने ! मैं सुमित्र तुम्हारे रश्मि-संघ को मनु के (समान) प्रदीप्त करता हूँ।

उपमान—मनुः, उपमेय—सुमित्रः, साधारण धर्म—अग्ने ते अनीकं समीधे, वाचक पद का लोप है।

आ सुष्वयन्ती यजते उपाके उषासानक्ता सदतां नि योनौ।
दिव्ये योषणे बृहती सुरुक्मे अधि श्रियं शुक्रपिशं दधाने॥

(ऋ० १०।११०।६)

उषा और रात्रि इस यज्ञ-स्थल में दिव्य स्त्रियों के (समान) शोभन रूप से जाती हुई नियमपूर्वक प्रतिष्ठित हों।

उपमान—दिव्ये योषणे, उपमेय—उषासानक्ता, साधारण धर्म—सुष्वयन्ती नि आ सदताम्, वाचक पद का लोप है।

वातस्याश्वो वायोः सखाथ देवेषितो मुनिः ॥
(ऋ० १०।१३६।५)

वायु का मित्र (अग्नि) वायु के (समान) गति से सर्वत्र व्याप्त है।

उपमान—वातस्य, उपमेय—वायोः सखा, साधारण धर्म—अश्वः, वाचक पद का लोप है।

प्रत्यस्य श्रेणयो ददृश्र एकं नियानं बहवो रथासः।
बाहू यदग्ने अनुमर्मृजानो न्यङ्ङुत्तानामन्वेषि भूमिम् ॥
(ऋ० १०।१४२।५)

हे अग्ने! तुम्हारी जलती हुई ज्वालायें मुख्य लक्ष्य-स्थल की ओर जाते हुए अनेकों रथिकों के (समान) दिखाई देती हैं

उपमान—एकं नियानं बहवः रथासः, उपमेय—अग्ने अस्य श्रेणयः, साधारण धर्म—ददृश्र, वाचक पद का लोप है।

प्र नूनं जातवेदसमश्वं हिनोत वाजिनम्।
इदं नो बर्हिरासदे ॥
(ऋ० २०।१८८।१)

जातवेद (अग्नि) को अश्व के (समान) स्तुति द्वारा प्रेरित करो।

उपमान—अश्वं, उपमेय—जातवेदसं, साधारण धर्म—प्रहिनोत्, वाचक पद का लोप है। भूतोपमा है।

(ख) समासगा वाचकलुप्तोपमा—

जहाँ सादृश्यवाचक पद का शब्दशः कथन नहीं होने पर समास के द्वारा ही उपमा की प्रतिपत्ति होने के कारण इव आदि उपमाबोधक पदों का लोप हो जाता है वहाँ समासगा वाचकलुप्तोपमा होती है। इसे द्विपदसमासगा वाचकलुप्तोपमा भी कहते हैं। निम्नलिखित ५ ऋचाओं में इसका प्रयोग हुआ है—

तस्य ज्येष्ठं महिमानं वहन्तीर्हिरण्यवर्णाः परियन्ति यह्वीः ॥
(ऋ० २।३५।९)

स्वर्ण के (समान) वर्णवाली नदियाँ इस (अपां नपाद) देव की महिमा को वहन करती हुई चारों ओर बहती हैं।

उपमान—हिरण्य, उपमेय—यह्वीः, साधारण धर्म—वर्णाः परियन्ति, वाचक पद का लोप है। हिरण्यवर्णाः में समास है। यास्क के अनुसार यहाँ वर्णोपमा है।

यमिन्धते युवतयः समित्था हिरण्यवर्णं घृतमन्नमस्य ॥
(ऋ० २।३५।११)

स्वर्ण के (समान) वर्ण वाले जिस (अपां नपात् देव) को युवतियाँ प्रज्वलित करती हैं।

उपमान—हिरण्य, उपमेय—यम्, साधारण धर्म—वर्ण, वाचक पद का लोप है। हिरण्यवर्णं में समास और वर्णोपमा है।

अग्निं पुरातनयित्नोरचित्ताद्धिरण्य रूपमवसे कृणुध्वम् ॥
(ऋ० ४।३।१)

स्वर्ण के (समान) रूपवाले अग्नि को अपनी रक्षा के लिये प्रज्वलित करो।

उपमान—हिरण्य, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म—रूपम्, वाचक पद का लोप है। हिरण्यरूपम् में समास है। यास्क के अनुसार यहाँ रूपोपमा है।

हिरण्यदन्तं शुचिवर्णमारात् क्षेत्रादपश्यमायुधा मिमानम् ॥
(ऋ० ५।२।३)

(मैंने) स्वर्ण के (समान) दन्त अर्थात् ज्वालावाले तेजस्वी अग्नि को देखा है।

उपमान—हिरण्य, उपमेय—शुचिवर्णम्, साधारण धर्म—दन्तं, वाचक पद का लोप है। हिरण्यदन्तं में समास है।

कृष्णः श्वेतोऽरुषो यामो अस्य ब्रघ्न ऋज्र उत शोणो यशस्वान्।
हिरण्यरूपं जनिता जजान ॥
(ऋ० १०।२०।९)

स्वर्ण के (समान) रूपवाले रथ को इस (अग्नि) के लिये प्रजापति ने उत्पन्न किया है।

उपमान—हिरण्य, उपमेय—यामः, साधारण धर्म—रूपं, वाचक पद का लोप है। हिरण्यरूपं में समास और रूपोपमा है।

(ग) कर्तृकारक से विहित क्यङ् के प्रयोग में वाचकलुप्तोपमा—

"कर्तुः क्यङ् सलोपश्च" इस पाणिनि सूत्र के अनुसार उपमानभूत कर्तृ-पद से आचार अर्थ में विहित क्यङ् प्रत्यय के प्रयोग होने पर यह लुप्तोपमा होती है।

निम्नलिखित ५ ऋचाओं में कर्तृकारक से विहित क्यङ् प्रत्यय के प्रयोग में वाचकलुप्तोपमा का प्रयोग हुआ है—

वृषायन्ते महे अत्याय पूर्वीर्वृष्णे चित्राय रश्मयः सुयामाः ॥
(ऋ० ३।७।६)

देवों के आह्वानकर्ता (अग्नि) की अतिशय विस्तृत सर्वत्र व्याप्त ज्वालायें वृषभ के (समान) बलवान होती हैं।

उपमान—वृषभ, उपमेय—पूर्वीः सुयामाः रश्मयः, साधारण धर्म—वृषायन्ते। यहाँ—'वृषा इव आचरन्ति' इस अर्थ में क्यङ् प्रत्यय हुआ है। वाचक पद का लोप है। भूतोपमा है।

अग्ने शुक्रेण शोचिषोरु प्रथयसे बृहत्।
अभिक्रन्दन्वृषायसे वि दोमदे गर्भं दधासि जामिषु विवक्षसे ॥
(ऋ० १०।२१।८)

हे अग्ने ! तुम शब्द करते हुए वृषभ के (समान) आचरण करते हो।

उपमान—वृषभ, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—वृषायसे, वाचक पद का लोप है। 'वृष इव आचरसि' इस अर्थ में क्यङ् प्रत्यय हुआ है। भूतोपमा है।

तव प्रशास्त्रं त्वमध्वरीयसि ब्रह्मा चासि गृहपतिश्च नो दमे ॥

(ऋ० १०।९१।१०)

(हे अग्ने !) तुम अध्वर्यु के (समान) आचरण करते हो।

उपमान—अध्वर्युः, उपमेय—त्वम्, साधारण धर्म—अध्वरीयसि। वाचक पद का लोप है। "अध्वर्युः इव आचरसि" अर्थ में क्यङ् प्रत्यय हुआ है।

यस्तुभ्यमग्ने अमृताय मर्त्यः समिधा दाशदुत वा हविष्कृति।
तस्य होता भवसि यासि दूत्यमुप ब्रूषे यजस्यध्वरीयसि ॥

(ऋ० १०।९१।११)

हे अग्ने ! तुम अध्वर्यु के (समान) आचरण करते हो।

उपमान—अध्वर्युः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—अध्वरीयसि। वाचक पद का लोप है। "अध्वर्यु इव आचरसि" इस अर्थ में क्यङ् प्रत्यय हुआ है।

अग्ने घृतस्नुस्त्रिर्ऋतानि दीद्यद्वर्तियज्ञं परियन्त्सुक्रतूयसे ॥

(ऋ० १०।१२२।६)

हे अग्ने ! तुम अध्वर्यु के (समान) यज्ञ को सम्यक्तया निष्पन्न करने के लिये प्रवर्तित होते हो।

उपमान—सुक्रतुः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—सुक्रतूयसे, वाचक पद का लोप है। "शोभनः क्रतुः यस्य असौ सुक्रतुः यजमानः स इव आचरसि" अर्थ में क्यङ् प्रत्यय हुआ है।

(ध) वतुप् प्रत्यय के प्रयोग में वाचकलुप्तोपमा—

घृतवन्तमुपमासि मधुमन्तं तनूनपात्।
यज्ञं विप्रस्य मावतः शशमानस्य दाशुषः ॥

(ऋ० १।१४२।२)

हे तनूनपात् अग्ने ! मेरे समान ज्ञानी मनुष्य के मधुरता से युक्त तेजस्वी यज्ञ में उपस्थित होओ।

उपमान—मावतः, उपमेय—विप्रस्य, साधारण धर्म—शशमानस्य दाशुषः, वाचक पद का लोप है।

मावतः मत्सदृशस्य यजमानस्य, यहाँ "युष्मदस्मद्भ्यां छन्दसि सादृश्ये" इस सूत्र के अनुसार सादृश्य अर्थ में वतुप् प्रत्यय हुआ है और "आसर्वनाम्नः" इस सूत्र से आत्व होकर मावतः बना है। इस प्रकार का केवल एक उदाहरण उपलब्ध हुआ है।

(४) धर्मवाचकलुप्तोपमा—

साधारण धर्म और उपमावाचक शब्द दोनों के लोप होने पर धर्मवाचक-लुप्तोपमा होती है। यह दो प्रकार की है—(१) क्विप्ग धर्मवाचकलुप्तोपमा (२) समासगा धर्मवाचकलुप्तोपमा। इन दोनों भेदों के अतिरिक्त वाक्यगा धर्मवाचक-लुप्तोपमा के उदाहरण भी वेद में उपलब्ध हैं, जिसका उल्लेख काव्यप्रकाश में नहीं किया गया है। उदाहरण निम्नलिखित हैं :—

(क) क्विप्गा धर्मवाचकलुप्तोपमा—

जहाँ "सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विप् वा वक्तव्यः" इस वार्तिक के अनुसार उपमान, वाचक पद तथा कर्तृभूत प्रातिपदिकों से आचार अर्थ में क्विप् प्रत्यय होता है (जो तुल्याचार रूढ साधारण धर्म का वाचक होता है) तथा "वेरपृक्तस्य" इस पाणिनि सूत्र से नित्य लोप हुआ करता है जिसके कारण इव पद के लोप के साथ-साथ साधारण धर्म भी लुप्त होता है वहाँ क्विप्गा धर्मवाचकलुप्तोपमा होती है। निम्नलिखित केवल एक ऋचा में इसका प्रयोग हुआ है—

आशुं दूतं विवस्वतो विश्वा यश्चर्षणीरभि।
आ जभ्रुः केतुमायवो भृगवाणं विशे विशे॥

(ऋ० ४।७।४)

भृगु के समान आचरण करनेवाले दूतरूप अग्नि को मनुष्य अपने घरों में प्रदीप्त करते हैं।

उपमान—भृगुः, उपमेय—दूतं आशुं केतुम्, साधारण धर्म एवं वाचक पद का लोप है। "भृगुवत् आचरन्तम्" भृगवाणं—यहाँ "सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विप् वक्तव्यः" से क्विप्, यानच् और आदि उदात्त होने से आत्व होकर भृगवाणं बना है।

(ख) वाक्यगा धर्मवाचकलुप्तोपमा—

साधारण धर्म और वाचक पद का लोप होने पर तथा उपमान और उपमेय का असमस्तपद द्वारा प्रतिपादन होने पर वाक्यगा धर्म-वाचकलुप्तोपमा होती है। निम्नलिखित २२ ऋचाओं में इसका प्रयोग हुआ है—

त्वं जामिर्जनानामग्ने मित्रो असि प्रियः। सखा सखिभ्यः ईड्यः॥

(ऋ० १।७५।४)

हे अग्ने! तुम स्तुत्य यजमानों के लिये मित्र (के समान) हो।

उपमान—सखा, उपमेय—अग्ने त्वम्, साधारण धर्म-वाचक पद का लोप है।

. . . . . यतो घृतश्चीरतिथिरजायत वह्निर्वेधा अजायत॥

(ऋ० १।१२८।४)

घृतभक्षक अग्नि अतिथि (के समान पूज्य) होकर उत्पन्न हुआ है।

उपमान—अतिथिः, उपमेय—घृतश्चीः, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

हव्यवालग्निरजरश्चनोहितो दूलभो विशामतिथिर्विभावसुः ॥

(ऋ० ३।२।२)

हविर्वाहक अग्नि प्रजाओं के लिये अतिथि (के समान पूज्य) है।

उपमान—अतिथिः, उपमेय—हव्यवाट् अग्निः, साधारण धर्म एवं वाचक पद का लोप है।

विश्वेषामदितिर्यज्ञियानां विश्वेषामतिथिर्मानुषाणाम् ।
अग्निर्देवानामव आवृणानः सुमृलीको भवतु जातवेदाः ॥

(ऋ० ४।१।२०)

अग्नि सम्पूर्ण मनुष्यों के लिये अतिथि (के समान पूज्य) है।

उपमान—अतिथिः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म एवं वाचक पद का लोप है।

मार्जाल्यो मृज्यते स्वे दमूनाः कविप्रशस्तो अतिथिः शिवो नः ॥

(ऋ० ५।१।८)

ज्ञानियों द्वारा प्रशंसित कल्याणकारी (अग्नि) अतिथि (के समान पूज्य) है।

उपमान—अतिथिः, उपमेय—कविप्रशस्तः शिवः, साधारण धर्म एवं वाचक पद का लोप है।

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोण इमं नो यज्ञमुप याहि विद्वान् ।
विश्वा अग्ने अभियुजो विहत्या शत्रूयतामा भरा भोजनानि ॥

(ऋ० ५।४।५)

हे अग्ने ! तुम घर में विद्वान् अतिथि (के समान पूज्य) हो।

उपमान—विद्वान् अतिथिः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

त्वामग्ने अतिथिं पूर्व्यं विशः शोचिष्केशं मृहपतिं नि षेदिरे ।

(ऋ० ५।८।२)

हे अग्ने ! मनुष्य अतिथि (के समान पूज्य) तुम्हें वेदी में स्थापित करते हैं।

उपमान—अतिथि, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

ये ते शुक्रासः शुचयः शुचिष्मः क्षां वपन्ति विषितासो अश्वाः ॥

(ऋ० ६।६।४)

हे दीप्तिमान् (अग्ने !) तुम्हारा शुभ्र तेज विमुक्त अश्व (के समान सर्वत्र गमन करता) है।

उपमान—विषितासः अश्वाः, उपमेय—शुचिष्मः ते शुक्रासः शुचयः, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है। भूतोपमा है।

मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आ जातमग्निम् ।
कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ।।

(ऋ० ६।७।१)

यजमानों के लिये अतिथि (के समान पूजा) अग्नि को ऋत्विक्गण प्रकट करते हैं।

उपमान—अतिथि, उपमेय—अग्निम्, साधारण धर्म एवं वाचक पद का लोप है।

वैश्वानरं रथ्यमध्वराणां यज्ञस्य केतुं जनयन्त देवाः ।।

(ऋ० ६।७।२)

रथ (के समान यज्ञ द्वारा मनुष्यों के नियन्ता) वैश्वानर अग्नि को ऋत्विक्गण अरणिमन्थन कर उत्पन्न करते हैं।

उममान—अध्वराणां रथ्यं, उपमेय—वैश्वानरं, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

इममूषुवो अतिथिमुषर्बुधं विश्वासां विशां पतिमृञ्जसे गिरा ।।

(ऋ० ६।१५।१)

तुम सब अतिथि (के समान पूज्य) इस (अग्नि) को स्तुति से प्रसन्न करो।

उपमान—अतिथिम्, उपमेय—इमम्, साधारण धर्म एवं वाचक पद का लोप है।

अग्निमग्निं वः समिधा दुवस्यत प्रियं प्रियं वो अतिथिं गृणीषणि ।।

(ऋ० ६।१५।६)

तुम सब अतिथि (के समान पूज्य) अग्नि की समिधा से परिचर्या करो।

उपमान—अतिथिं, उपमेय—अग्निम्, साधारण धर्म तथा वाचक पद का लोप है।

त्वमिमा वार्या पुरु दिवोदासाय सुन्वते । भरद्वाजाय दाशुषे ।।

(ऋ० ६।१६।५)

(हे अग्ने !) (जैसे) तुमने यह वरण करने योग्य धन सोमाभिषव करनेवाले राजा दिवोदास को (दिया था उसी प्रकार) हविर्दाता मुझ भरद्वाज ऋषि को भी (प्रदान करो)।

उपमान—दिवोदासाय, उपमेय—सुन्वते दाशुषे भरद्वाजाय, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

अधा महीं न आयस्यना धृष्टो नृपीतये ।
पूर्भवा शतभुजिः ।।

(ऋ० ७।१५।१४)

हे अप्रतिधर्षणीय अग्ने ! लोहे की बनी अत्यन्त विस्तृत पुरी (के समान) तुम शत्रुओं से हमारी रक्षा करो।

उपमान—शतभुजिः पूः, उपमेय—अनाधृष्टः, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

अतिथिं मानुषाणां सूनुं वनस्पतीनाम्।
विप्रा अग्निमवसे प्रत्नमीलते ॥

(ऋ० ८।२३।२५)

अतिथि (के समान पूज्य) अग्नि की स्तुति करते हैं।

उपमान—अतिथिं, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। अस्मिन् हव्या जुहोतन ॥

(ऋ० ८।४४।१)

अतिथि (के समान पूज्य) अग्नि की समिधा से परिचर्या करो।

उपमान—अतिथिम्, उपमेय—अग्निम्, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

स नो वस्व उप मास्यूर्जो नपान्माहिनस्य।
सखे वसो जरितृभ्यः ॥

(ऋ० ८।७१।९)

हे मित्र (के समान हितकारी) वासक अग्ने ! हमें महान् धन प्रदान करो।

उपमान—सखे, उपमेय—वसो, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

इयं ते नव्यसी मतिरग्ने अधाय्यस्मदा।
मन्द्र सुजात सुक्रतोऽमूर दस्मातिथे ॥

(ऋ० ८।७४।७)

अतिथि (के समान पूज्य) अग्ने ! यह नवीन स्तुति तुम्हें अर्पित करते हैं।

उपमान—अतिथे, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

यदत्त्युपजिह्विका यद्वम्रो अति सर्पति।
सर्वं तदस्तु ते घृतम् ॥

(ऋ० ८।१०२।२१)

(हे अग्ने !) जलने के बाद अवशिष्ट काष्ठ तुम्हारे लिये घृत (के समान प्रिय) हो।

उपमान—घृतम्, उपमेय—ते तत् सर्वं, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

मा नो हृणीतामतिथिर्वसुरग्निः पुरुप्रशस्त एषः ॥

(ऋ० ८।१०३।१२)

अतिथि (के समान पूज्य) अग्नि हमें किसी भी प्रकार अवरुद्ध न करे।

उपमान—अतिथिः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

प्रत्यधि देवस्य देवस्य महना श्रिया त्वाग्निमतिथिं जनानाम् ॥

(ऋ० १०।१।५)

यजमानों के लिये अतिथि (के समान पूज्य) अग्नि की स्तुति करते हैं।

उपमान—अतिथिम्, उपमेय—अग्निम्, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

स तु वस्त्राण्यध पेशनानि वसानो अग्निर्नाभा पृथिव्याः ॥

(ऋ० १०।१।६)

स्वर्ण (के समान भास्वर तेजवाला) अग्नि देवों का यजन करे।

उपमान—पेशनानि, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है।

(ग) समासगा धर्म-वाचकलुप्तोपमा—

उपमान और उपमेय के समस्त होने पर तथा साधारण धर्म और वाचक पद का लोप होने पर समासगा धर्म-वाचकलुप्तोपमा होती है। केवल १ ऋचा में इसका प्रयोग हुआ है—

वेधिष्ठो अङ्गिरसां यद्ध विप्रो मधुच्छन्दो भनति रेभ इष्टौ ॥

(ऋ० ६।११।३)

मेधावी स्तोता यज्ञ में मधु (के समान मदकारी) स्तोत्र को उच्चारित करते हैं।

उपमान—मधु, उपमेय—छन्दः, साधारण धर्म और वाचक पद का लोप है। मधुच्छन्दः में समास है।

(५) उपमेयलुप्तोपमा—

उपमा के चारों अंगों में से उपमेय के लोप होने पर उपमेयलुप्तोपमा होती है। काव्यप्रकाश में इस भेद का अलग से उल्लेख नहीं किया गया है किन्तु वेद में इसके पर्याप्त उदाहरण मिलते हैं।

निम्नलिखित ३३ ऋचाओं में उपमेयलुप्तोपमा का प्रयोग हुआ है—

ऊर्ध्व ऊ षु ण ऊतये तिष्ठा देवो न सविता ॥

(ऋ० १।३६।१३)

(हे यूप !) तेजस्वी सूर्य के समान हमारी रक्षा के लिये उन्नत होकर स्थित रहो।

उपमान—देवः सविता, साधारण धर्म—ऊर्ध्वः सुतिष्ठ, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—यूप का लोप है। अधिकोपमा है।

पश्वा न तायुं गुहा चतन्तं नमो युजानं नमो वहन्तम् ॥

(ऋ० १।६५।१)

गुहा में छिपे पशु की चोरी करनेवाले चोर के समान छिपे (अग्नि) का याजकगण पता लगा लेते हैं।

उपमान—पश्वा तायुं, साधारण धर्म—गुहा चतन्तं, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—अग्नि का लोप है। हीनोपमा है।

ऋतस्य देवा अनु व्रता गुर्भुवत् परिष्टिद्यौर्न भूम ॥

(ऋ० १।६५।२)

जैसे आकाश पृथ्वी पर व्याप्त है उसी प्रकार (अग्नि) सर्वत्र व्याप्त है।

उपमान—द्यौः, साधारण धर्म—भूम, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—अग्नि का लोप है।

सिन्धुर्न क्षोदः प्र नीचीरैनोन्नवन्त गावः स्वर्दृशीके ॥

(ऋ० १।६६।१०)

किनारों को तोड़ती हुई प्रवाहित होनेवाली नदी के समान (अग्नि की ज्वाला) प्रवाहित होती है।

उपमान—क्षोदः सिन्धुः, साधारण धर्म—प्र नीचीः ऐनोत्, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—अग्नि-ज्वाला का लोप है।

अजो न क्षां दाधार पृथिवीं तस्तम्भ द्यांगृल्वेभिः सत्यैः ॥

(ऋ० १।६७।३)

(अग्नि) अजन्मा सूर्य के समान पृथ्वी को धारण करता है।

उपमान—अजः, साधारण धर्म—क्षां दाधार, सादृश्यवाचक—न है, उपमेय—अग्नि का लोप है। अधिकोपमा है।

जने न शेव आहूर्यः सन्मध्ये निषत्तो रण्वो दुरोणे ॥

(ऋ० १।६९।२)

(अग्नि) मनुष्यों में हितैषी पुरुष के समान यज्ञ के मध्य में आहूत होकर यज्ञ-गृह में शोभायमान होता है।

उपमान—जने शेव, साधारण धर्म—आहूर्यः रण्वः, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—अग्नि का लोप है

रथं न चित्रं वपुषाय दर्शतं मनुर्हितं सदमित् राय ईमहे ॥

(ऋ० ३।२।१५)

रथ के समान सुन्दर (अग्नि) से धन माँगते हैं।

उपमान—रथं, साधारण धर्म—चित्रं, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—अग्नि का लोप है।

अनूनेन वृहता वक्षथेनोप स्तभायदुपमिन्न रोधः ॥

(ऋ० ४।५।१)

अग्नि सम्पूर्ण विश्व को उसी प्रकार थामे हुए है जिस प्रकार स्तम्भ भवन को आधार देता है।

उपमान—उपमित् रोधः, साधारण धर्म—उपस्तभायत्, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—अग्नि का लोप है।

का मर्यादा वयुना कद्ध वाममच्छा गमेम रघवो न वाजम् ॥

(ऋ० ४।५।१३)

(हम सब) ऐश्वर्य की ओर उसी प्रकार जायें जैसे वेगवान् अश्व युद्ध की ओर जाते हैं।

उपमान—रघवः वाजं, साधारण धर्म—वामम् गमेम, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—'हम सब' का लोप है। भूतोपमा है।

वातस्य मेलिं सचते निजूर्वन्नाशुं न वाजयते हिन्वे अर्वा ॥

(ऋ० ४।७।११)

(अश्वारोही) जिस प्रकार अश्व को पुष्ट करता है उसी प्रकार (अग्नि अपनी ज्वाला) को पुष्ट करता है।

उपमान—अर्वा आशुं, साधारण धर्म—वाजयते हिन्वे, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—'अग्नि ज्वाला' का लोप है। भूतोपमा है।

क्षेत्रादपश्यं सनुतश्चरन्तं सुमद् यूथं न पुरु शोभमानम् ॥

(ऋ० ५।२।४)

विचरते हुए पशुओं के झुण्ड के समान स्वयं बहुत शोभित (अग्नि) को देखा है।

उपमान—यूथं, साधारण धर्म—चरन्तं पुरु शोभमानम्, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—अग्नि का लोप है। भूतोपमा है।

अञ्जन्ति मित्रं सुधितं स गोभिर्यद्दम्पती समनसा कृणोषि ॥
(ऋ० ५।३।२)

सूर्य के समान श्रेष्ठ (अग्नि) को गौ के घृत से सींचते हैं।

उपमान—मित्रं, साधारण धर्म—सुधितं गोभिः अञ्जन्ति, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—अग्नि का लोप है। अधिकोपमा है।

यजस्व होतरिषितो यजीयानग्ने बाधो मरुतां न प्रयुक्ति ॥
(ऋ० ६।११।१)

हे अग्ने ! मरुतों के बल के समान (बलवान शत्रुओं का) विनाश करो।

उपमान—मरुतां, साधारण धर्म—बाधः, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—शत्रु का लोप है।

प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन्यदा महः संवरणाद्व्यस्थात् ॥
(ऋ० ७।३।२)

घास खाते हुए, शब्द करते हुए अथवा घूमते हुए अश्व के समान (महान् निरोधक दाव रूप अग्नि) जब वृक्षों में अवस्थित होता है।

उपमान—अश्वः, साधारण धर्म—यवसे अविष्य प्रोथत् यदा व्यस्थात्, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—अग्नि का लोप है। भूतोपमा है।

उषो न जारः पृथु पाजो अश्रेद्विद्युद्दीद्यच्छोशुचानः ॥
(ऋ० ७।१०।१)

(अग्नि) उषा-प्रेमी सूर्य के समान विस्तीर्ण तेज को धारण करता है।

उपमान—उषः जारः, साधारण धर्म—पृथु पाजः अश्रेत्, सादृश्यवाचक—व है। उपमेय—अग्नि का लोप है। अधिकोपमा है।

दुष्टरा यस्य प्रवणे नोर्मयो धिया वाजं सिषासतः ॥
(ऋ० ८।१०३।११)

जिस प्रकार प्रवहणाभिमुख को समुद्र की तरंग तैरने में असमर्थ कर देती है उसी प्रकार (जिस अग्नि की ज्वाला) संग्राम को नष्ट करनेवाले शत्रु को असमर्थ कर देती है।

उपमान—प्रवणे ऊर्मयः, साधारण धर्म—धिया वाजं सिषासतः यस्य दुष्टराः, सादृश्यवाचक—न हैं। उपमेय—'ज्वाला' का लोप है।

प्र देवत्रा ब्रह्मणे गातुरेत्वपो अच्छा मनसो न प्रयुक्ति ॥
(ऋ० १०।३०।१)

(गमनशील सोम) द्योतमान उदक की ओर मन के समान शीघ्रता से जाता है।

उपमान—मनसः, साधारण धर्म—प्रयुक्ति, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—सोम का लोप है।

नयन्तो गर्भं वनां घियं धुर्हिरिश्मश्रुं नार्वाणं धनर्चम् ॥
(ऋ० १०।४६।५)

हरित लोमयुक्त अश्व के समान (स्वर्णिम ज्वालायुक्त अग्नि की) हवि द्वारा स्तुति करके कर्म-फल को प्राप्त करो।

उपमान—अर्वाणं, साधारण धर्म—हिरिश्मश्रुं, सादृश्यवाचक—न है उपमेय—अग्नि का लोप है। भूतोपमा है।

इव—

वनेषु जायुर्मर्त्तेषु मित्रो वृणीते श्रुष्टिं राजेवाजुर्यम् ॥
(ऋ० १।६७।१)

जैसे राजा सर्वगुणसम्पन्न वीर पुरुष का वरण करता है उसी प्रकार (अग्नि) सहायता करनेवालों को स्वीकार करता है।

उपमान—राजा अजुर्यं, साधारण धर्म—श्रुष्टिं वृणीते, सादृश्यवाचक—इव है। उपमेय—अग्नि का लोप है। द्रव्योपमा है।

उद्यंयमीति सवितेव बाहू उभे सिचौ यतते भीम ऋञ्जन् ॥
(ऋ० १।९५।७)

(अग्नि) सूर्य के समान अपनी बाहुरूपी किरणों को ऊपर उठाता है।

उपमान—सविता, साधारण धर्म—बाहू उद्यंयमीति, सादृश्यवाचक—इव है। उपमेय—अग्नि का लोप है। अधिकोपमा और द्रव्योपमा है।

रथैरिव प्र भरे वाजयद्भिः प्रदक्षिणिन्मरुतां स्तोममृध्याम् ॥
(ऋ० ५।६०।१)

ऐश्वर्य-सम्पन्न रथ के समान (मैं) धन-सम्पन्न होऊँ।

उपमान—वाजयद्भिः रथैः, साधारण धर्म—प्रभरे, सादृश्यवाचक—इव है। उपमेय—मैं का लोप है। द्रव्योपमा है।

इन्द्रस्येव प्र तवसस्कृतानि वन्दे दारं वन्दमानो विवक्मि ॥
(ऋ० ७।६।१)

बलवान इन्द्र के समान (वैश्वानर अग्नि के) कर्मों का विशेषरूप से वर्णन एवं स्तुति करता हूँ।

उपमान—इन्द्रस्य, साधारण धर्म—कृतानि प्रविवक्मि, सादृश्यवाचक—इव है। उपमेय—वैश्वानर का लोप है। द्रव्योपमा है।

इमां प्रत्नाय सुष्टुतिं नवीयसीं वोचेयमस्मा उशते शृणोतु नः
भूया अन्तरा हृदस्य निस्पृशे जायेव पत्य उशती सुवासाः ॥

(ऋ० १०।१६।१३)

जैसे शोभन-वस्त्र-मण्डिता स्त्री पति के हृदय को अनुरंजित करती है उसी प्रकार (मैं) इस अग्नि के हृदय को सुन्दर स्तस्त्रों द्वारा अनुरंजित करनेवाला होऊँ।

उपमान—पत्ये सुवासः उशती जाया, साधारण धर्म—अस्मै नवीयसीं सुष्टुतिं वोचेयम्, सादृश्यवाचक—इव है। उपमेय—मैं का लोप है। द्रव्योपमा है।

सद्यो जात ओषधीभिर्ववक्षे यदी वर्धन्ति प्रस्वो घृतेन।
आप इव प्रवता शुम्भमाना उरुष्यदग्निः पित्रोरुपस्थे ॥

(ऋ० ३।५।८)

जन्म लेते ही अग्नि जब ओषधियों द्वारा धारण किया जाता है तब प्रवाहित जल के समान (ओषधियाँ) वृद्धि को प्राप्त होती हैं।

उपमान—प्रवता आपः, साधारण धर्म—वर्धन्ति प्रस्वः, सादृश्यवाचक—इव है। उपमेय—औषधियों का लोप है। द्रव्योपमा है।

शूर इव धृष्णुश्च्यवनः सुमित्रः प्र नु वो चं वाध्र्यश्वस्य नाम।

(ऋ० १०।६९।५)

(हे अग्ने ! तुम) वीर पुरुष के समान धर्षणशील शत्रु को नष्ट कर दो।

उपमान—शूर, साधारण धर्म—धृष्णुः च्यवनः, सादृश्यवाचक—इव है। उपमेय—अग्नि का लोप है। द्रव्योपमा है।

वत्—

तमु त्वा वाजसातममङ्गिरस्वद्धवामहे। धुम्नैरभि प्र णोनुमः ॥

(ऋ० १।७८।३)

अंगिरा के समान (हम) बहुत सारा धन देनेवाले तुम्हारा आह्वान करते हैं।

उपमान—अङ्गिरः, साधारण धर्म—वाजसातमम् त्वा हवामहे, सादृश्यवाचक—वत् है। उपमेय—हम का लोप है। सिद्धोपमा है।

प्र विश्वसामन्नत्रिवदर्चा पावकशोचिषे ॥

(ऋ० ५।२२।१)

(हे यजमान ! तुम) पावक (अग्नि) का अत्रि के समान पूजन करो।

उपमान—अत्रि, साधारण धर्म—पावक शोचिषे अर्च, सादृश्यवाचक—वत् है। उपमेय—यजमान का लोप है। सिद्धोपमा है।

आभिर्विधेमाग्नये ज्येष्ठाभिर्व्यश्ववत् ।
महिष्ठाभिर्मतिभिः शुक्रशोचिषे ॥

(ऋ० ८।२३।२३)

(मैं) अपने पिता व्यश्व के समान इन श्रेष्ठ स्तुतियों से अग्नि की परिचर्या करता हूँ।

उपमान—व्यश्व, साधारण धम—अग्नये आभिः मतिभिः विधेम; सादृश्यवाचक—वत् है। उपमेय—मैं का लोप है। सिद्धोपमा है।

अभ्यर्च नभाकवदिन्द्राग्नी यजसा गिरा ॥

(ऋ० ८।४०।४)

(हे नाभाक ! तुम) इन्द्राग्नी की नभाक के समान स्तुति से परिचर्या करो।

उपमान—नभाक, साधारण धर्म—इन्द्राग्नी यजसा गिरा अभ्यर्च, सादृश्यवाचक—वत् है। उपमेय—नाभाक का लोप है। सिद्धोपमा है।

प्र ब्रह्माणि नभाकवदिन्द्राग्निभ्यामिरज्यत ॥

(ऋ० ८।४०।५)

(मैं) इन्द्राग्नी के लिये नभाक के समान स्तोत्रों को प्रेरित करता हूँ।

उपमान—नभाक, साधारण धर्म—इन्द्राग्निभ्याम् ब्रह्माणि प्रइरज्यत, सादृश्यवाचक—वत् है। उपमेय—मैं का लोप है। सिद्धोपमा है।

यथा—

एषा वामह्व ऊतये यथा हुवन्त मेधिराः ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥

(ऋ० ८।३८।९)

हे इन्द्राग्नी। प्राचीन ज्ञानियों के समान (मैं) अपनी रक्षा के लिए तुम्हारा आह्वान करता हूँ।

उपमान—मेधिराः, साधारण धर्म—इन्द्राग्नी वां आहुवन्तः ऊतये अह्वे; सादृश्यवाचक—यथा है। उपमेय—मैं का लोप है। कर्मोपमा है।

मा नो अस्मिन्महाधने परा वर्ग्भारभृद्यथा ॥

(ऋ० ८।७५।१२)

जैसे भारवाहक भार को लक्ष्य तक पहुँचा देता है उसी प्रकार (हे अग्ने !) इस युद्ध में हमारा परित्याग मत करो अपितु लक्ष्य तक पहुँचा दो।

उपमान—भारभृत्, साधरण धर्म—मा परा वर्क्, सादृश्यवाचक—यथा है। उपमेय—अग्नि का लोप है। कर्मोपमा है।

आ—

उदीरय पितरा जार आ भगमियक्षति हर्यतो हृत्त इष्यति ।

(ऋ० १०।११।६)

(हे अग्ने ! तुम) नक्षत्रादि से दीप्त रात्रि को नष्ट करनेवाले सूर्य के समान द्यावा पृथ्वी पर अपनी ज्योति को फैलाओ।

उपमान—जार भगम्, साधारण धर्म—पितरा उदीरय, सादृश्यवाचक–आ है। उपमेय—अग्नि का लोप है। अधिकोपमा है।

**उपमेय-धर्म-लुप्तोपमा—**

उपमेय और साधरण धर्म के लोप होने पर उपमेय-धर्म-लुप्तोपमा होती है। एक ऋचा में इसका प्रयोग हुआ है—

अद्रौ चिदस्मा अन्तर्दुरोणे विशां न विश्वो अमृत; स्वाधीः ॥

(ऋ० १।७०।४)

अमर और उत्तम कर्म करनेवाला (अग्नि) सबको उसी प्रकार (आश्रय देता) है जैसे राजा अपनी प्रजा को (आश्रय देता है।)

उपमान—विशां, सादृश्यवाचक—न है। उपमेय—अग्नि और साधारण धर्म—आश्रय का लोप है।

**(७) उपमेय-वाचक-लुप्तोपमा—**

उपमेय और वाचक पद के लोप होने पर उपमेय-वाचक-लुप्तोपमा होती है। ५ ऋचाओं में इसका प्रयोग हुआ है—

पुरु प्रैषस्तुरिर्यज्ञसाधनोऽच्छिद्रोतिः शिशुरादत्त संरभः ॥

(ऋ० १।१४५।३)

शिशु के (समान अग्नि) हवि को स्वीकार करता है।

उपमान—शिशुः, साधारण धर्म—आदत्त, उपमेय अग्नि और वाचक पद का लोप है।

समानं वत्समभि संचरन्ती विष्वग्धेनू वि चरतः सुमेके ॥

(ऋ० १।१४६।३)

जैसे गौ बछड़े की ओर जाती है (उसी प्रकार यजमान-दम्पति) अग्नि की ओर जाते हैं।

उपमान—धेनू वत्सम्, साधारण धर्म—सुमेके विष्वक् चरतः, उपमेय—यजमान दम्पति और वाचक पद का लोप है। भूतोपमा है।

ऊर्णम्रदा वि प्रथस्वाभ्यर्का अनूषत ॥

(ऋ ५।५।४)

ऊन के (समान) कोमल (आसन) बिछाओ।

उपमान—ऊर्णम्रदा, साधारण धर्म—प्रथस्व, उपमेय—आसन और वाचक पद का लोप है।

चरन्वत्सो रुशन्निह विदातारं न विन्दते ॥

(ऋ ८।७२।५)

(अग्नि) वत्स के (समान) चपलता से दौड़नेवाला है।

उपमान—वत्सः, साधारण धर्म—चरन्, उपमेय—अग्नि और वाचक पद का लोप है। भूतोपमा है।

ऋतायिनी मायिनी सं दधाते मित्वा शिशुं जज्ञतुर्वर्धयन्ती ॥

(ऋ० १०।५।३)

सत्य स्वरूप द्यावा पृथ्वी शिशु के (समान अग्नि का) संवर्धन करती हुई धारण करती है।

उपमान—शिशुं, साधारण धर्म—वर्धयन्ती जज्ञतुः, उपमेय—अग्नि और वाचक पद का लोप है।

(८) त्रिलुप्ता—उपमेय-धर्म-वाचकलुप्तोपमा—

उपमेय, साधारण धर्म और वाचक पद तीनों के लोप होने पर त्रिलुप्ता—उपमेय-धर्म-वाचकलुप्तोपमा होती है। निम्नलिखित २ ऋचाओं में इसका प्रयोग हुआ है—

अस्मे वत्सं परिषन्तं न विन्दन्निच्छन्तो विश्वे अमृता अमूराः

(ऋ० १।७२।२)

सर्वत्र वर्तमान (अग्नि) वत्स के (समान) है।

उपमान—वत्सं है। उपमेय, साधारण धर्म और वाचक पद तीनों का लोप है। भूतोपमा है।

वा जातं जातवेदसि प्रियं शिशीतातिथिम्। स्योन आगृहपतिं।

(ऋ० ६।१६।४२)

अतिथि (के समान पूज्य अग्नि की यज्ञवेदी में स्थापना करो।)

उपमान—अतिथिम् है। उपमेय, साधारण धर्म और वाचक पद तीनों का लोप है। लुप्तोपमा के १५ भेदों का १०८ ऋचाओं में सुन्दर प्रयोग हुआ है। उपर्युक्त उपमा के पूर्णोपमा और लुप्तोपमा-गत भेद-प्रभेदों के अतिरिक्त उपमा के एक और प्रकार "मालोपमा" के भी पर्याप्त उदाहरण मिलते हैं जो निम्नलिखित हैं—

मालोपमा—

भिन्न-भिन्न साधारण धर्म उपात्त होने पर एक और प्रकार की उपमा होती है जिसे एक ही उपमेय के लिये अनेक उपमानों के (सजातीय और विजातीय पुष्पों के समान) गुम्फन के कारण मालोपमा कहा जाता है।

अग्नि-सूक्तस्थ मालोपमा की विशेषता यह है कि—अधिकांश ऋचाओं में उपमेय का शब्दशः कथन नहीं किया गया है और उपमानों की संख्या अधिक से अधिक चार तथा कम से कम २ है। १३६ ऋचाओं में मालोपमा का प्रयोग हुआ है—उपमेय सहित चार उपमान वाली मालोपमा—

निम्नलिखित ८ ऋचाओं में चार उपमानवाली मालोपमा का प्रयोग हुआ है—

४ वत्—

मनुष्वदग्ने अङ्गिरस्वदङ्गिरो ययातिवत् सदने पूर्ववच्छुचे।
अच्छ याह्या वहा दैव्यं जनमा सादय बर्हिषि यक्षि च प्रियम्॥
(ऋ० १।३१।१७)

हे अग्ने मनु, अंगिरा, ययाति और पूर्व पुरुषों के समान यज्ञ-स्थल में आओ।

उपमान—मनुष्, अंगिरः, ययाति, पूर्व, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—अच्छा आ याहि, सादृश्यवाचक—वत् है। १ उपमेय के ४ उपमान, १ साधारण धर्म है। सिद्धोपमा है।

प्रियमेधवदत्रिवज्जातवेदो विरूपवत्।
अङ्गिरस्वन्महिव्रत प्रस्कण्वस्य श्रुधी हवम्॥ (ऋ० १।४५।३)

हे जातवेद अग्ने! जैसे तुमने प्रियमेध, अत्रि, विरूप और अंगिरस की प्रार्थना सुनी थी उसी प्रकार मुझ प्रस्कण्व की भी प्रार्थना श्रवण करो।

उपमान—प्रियमेध, अत्रि, विरूप, अङ्गिरः, उपमेय—जातवेदः, साधारण धर्म—हवम् श्रुधी, सादृश्यवाचक—वत् है। १ उपमेय के ४ उपमान, १ साधारण धर्म है। सिद्धोपमा है।

३ न, १ इव—

रयिर्न यः पितृवित्तो वयोधाः सुप्रणीतिश्चिकितुषो न शासुः
स्योनशीरतिथिर्न प्रीणानो होतेव सद्म विधतो वि तारीत्॥
(ऋ० १।७३।१)

यह (अग्नि) पिता से प्राप्त सम्पत्ति की तरह अन्न का दाता, ज्ञानी के उपदेश के समान सन्मार्ग-प्रवर्तक, सद्गृहस्थ के घर सत्कृत अतिथि के समान सुखदायी और होता के समान यजमान के घर की वृद्धि करता है।

उपमान—पितृवित्तः रयिः, चिकितुषः शासुः, स्योनशीः अतिथिः, होता, उपमेय—यः, साधारण धर्म—वयोधाः, सुप्रणीतिः, प्रीणानः सद्म विधतः वितारीत्, सादृश्य-वाचक—३ न, एक इव है। एक उपमेय के ४ उपमान, ४ साधारण धर्म हैं। द्रव्योपमा है।

देवो न यः पृथिवीं विश्वधाया उपक्षेति हितमित्रो न राजा ।
पुरःसदः शर्मसदो न वीरा अनवद्या पतिजुष्टेव नारी ॥

(ऋ० १।७३।३)

जो (अग्नि) सूर्य के समान विश्व का धारणकर्त्ता, अनुकूल मित्र से युक्त राजा के समान पृथ्वी पर निवास करता है, मनुष्य इनके सामने इस प्रकार बैठते हैं जैसे पिता के घर में पुत्र बैठता है तथा जो पति से सेवित पतिव्रता स्त्री की तरह विशुद्ध है ।

उपमान—देवः, हितमित्रः—राजा, वीरा, पतिजुष्टा नारी, उपमेय—यः, साधारण धर्म—विश्वधाया, पृथिवीं उपक्षेति, पुरःसदः शर्मसदः, अनवद्या, सादृश्य-वाचक ३ न, एक इव है । एक उपमेय के ४ उपमान, ४ साधारण धर्म हैं । अधिकोपमा और द्रव्योपमा है ।

२ न, २ इव—

आ यो वना तातृषाणो न भाति वार्ण पथा रथ्येव स्वानीत् ।
कृष्णाध्वा तपूरण्वश्चिकेत द्यौरिव स्मयमानो नभोभिः ॥

(ऋ० २।४।६)

जो (अग्नि) प्यासे मनुष्य के समान वनों को जलाकर प्रकाशित होता है, ढाल की ओर वेग से बहनेवाले जल के समान अपने कृष्णमार्ग से गमन करता है, रथवाहक अश्व के समान शब्द करता है और नक्षत्रों से प्रकाशित आकाश के समान शोभायमान होता है ।

उपमान—तातृषाणः, वाः, रथ्या, नभोभिः स्मयमानः द्यौः, उपमेय—यः, साधारण धर्म—वना आ भाति, पथा कृष्णाध्वा तपू, स्वानीत्, चिकेत, सादृश्यवाचक—२ न, २ इव है । एक उपमेय के ४ उपमान, ४ साधारण धर्म हैं । भूतोपमा और द्रव्योपमा है ।

२ इव, १ यथा, १ न—

न यो वराय मरुतामिव स्वनः सेनेव सृष्टा दिव्या यथाशनिः ।
अग्निर्जम्भैस्तिगितैरत्ति भर्वति योधो न शत्रून्त्स वना न्यृञ्जते ॥

(ऋ० १।१४३।५)

जो अग्नि मरुतों की गर्जना के समान, आक्रामक अस्त्र के समान तथा आकाश के वज्र के समान किसीसे भी हराया नहीं जा सकता है तथा (जो) शूरवीरों के समान अपनी तीव्र ज्वालाओं से शत्रुओं का भक्षण करता है ।

उपमान—मरुताम् स्वनः, सृष्टा सेना, दिव्या अशनिः; योधः, उपमेय—यः अग्निः; साधारण धर्म—न वराय, तिगितैः जन्मैः शत्रून् अत्ति, सादृश्यवाचक २ इव, एक यथा एक न है। एक उपमेय के ४ उपमान, २ साधारण धर्म, (प्रथम ३ उपमान का एक साधारण धर्म और अन्तिम का एक) है। द्रव्योपमा और कर्मोपमा है।

उपमेयलुप्ता चार उपमानवाली मालोपमा—

४ न—

पुष्टिर्न रण्वा क्षितिर्न पृथ्वी गिरिर्न भुज्म क्षोदो न शंभु ॥

(ऋ० १।६५।३)

(अग्नि) धन की अभिवृद्धि के समान रमणीय, भूमि के समान विस्तीर्ण, पर्वत के समान भोजनदाता, जल के समान हितकारी है।

उपमान—पुष्टिः, क्षितिः, गिरिः, क्षोदः, साधारण धर्म—रण्वा, पृथ्वी, भुज्म, शंभु, सादृश्यवाचक ४ न हैं। उपमेय—अग्नि का शब्दशः कथन नहीं हुआ है किन्तु सूक्त का देवता होने के कारण आक्षेप से अर्थबोध होता है। एक उपमेय के ४ उपमान ४ साधारण धर्म हैं।

रयिर्न चित्रा सूरो न संदृगायुर्न प्राणो नित्यो न सूनुः ॥

(ऋ० १।६६।१)

(अग्नि) धन के समान रमणीय, सूर्य के समान सम्यक् द्रष्टा, जीवन के समान प्राणवान्, पुत्र के समान हितकर्ता है।

उपमान—रयिः, सूरः, आयुः, सूनुः, साधारण धर्म—चित्रा, संदृक, प्राणो, नित्यो, सादृश्यवाचक ४ न है। उपमेय—अग्नि का लोप है। एक उपमेय के ४ उपमान, ४ साधारण धर्म हैं। अधिकोपमा है।

उपमेय सहित तीन उपमानवाली मालोपमा—

निम्नलिखित २२ ऋचाओं में तीन उपमानवाली मालोपमा का प्रयोग हुआ है—

३ न—

सुसंदृक्ते स्वनीक प्रतीकं वि यद्रुक्मो न रोचस उपाके।
दिवो न ते तन्यतुरेति शुष्मश्चित्रो न सूरः प्रति चक्षि भानुम्।

(ऋ० ७।३।६)

शोभन तेजवाला अग्नि अलंकार के समान समीप में सुशोभित होता है, इसकी ज्वाला अन्तरिक्ष से कड़क के समान निकलती है, दर्शनीय यह सूर्य के समान अपनी दीप्ति को प्रदर्शित करता है।

उपमान—रुक्मः, दिवः-तन्यतुः, सूरः, उपमेय—स्वनीक चित्रः ते शुष्मः, साधारण धर्म—उषाके विरोचसे, एति भानुं प्रतिचक्षि, सादृश्यवाचक ३ न है। एक उपमेय के ३ उपमान, ३ साधारण धर्म हैं। अधिकोपमा है।

तं वो विन द्रुषदं देवमन्धसः इन्दुं प्रोथन्तं प्रवपन्तमर्णवम्।
आसा वह्निं न शोचिषा विरप्शिनं महिव्रतं न सरजन्तमध्वनः॥

(ऋ० १०।११५।३)

(हे स्तोतृगण) तुम सब वृक्ष पर बैठे पक्षी के समान द्योतमान, वृषभ के समान हवि को देवताओं तक वहन करने वाले, महान् कर्मशील सूर्य के समान मार्ग को एक साथ रंजित करनेवाले इस (अग्नि) की स्तुति करो।

उपमान—द्रुषदं वि, वह्निं, महिव्रतं, उपमेय—तं, साधारण धर्म—देवम्, आसा, अध्वनः सरजन्तम् सादृश्यवाचक ३ न है। एक उपमेय के ३ उपमान, ३ साधारण धर्म हैं। भूतोपमा और अधिकोपमा है।

२ न, १ इव—

देवो न यः सविता सत्यमन्मा क्रत्वा निपाति वृजनानि विश्वा।
पुरुप्रशस्तो अमतिर्न सत्य आत्मेव शेवो दिधिषाय्यो भूत्॥

(ऋ० १।७३।२)

यह (अग्नि) प्रकाशमान सूर्य के समान यथार्थदर्शी—अनेकों से प्रशंसित चित्त के समान सत्य मार्ग का अनुसरण करनेवाला और आत्मा के समान सुखकर है।

उपमान—देवः सविता, अमतिः, आत्मा, उपमेय—यः, साधारण धर्म—सत्यमन्मा, सत्य, शेवः, सादृश्यवाचक—२ न एक इव है। एक उपमेय के ३ उपमान, ३ साधारण धर्म हैं। अधिकोपमा और द्रव्योपमा है।

स हि पुरु चिदोजसा विरुक्मता दीद्यानो भवति द्रुहन्तरः परशुर्न द्रुहन्तर।
वीलु चिद्यस्य समृतौ श्रुवद्वनेव यत् स्थिरम्।
निष्षहमाणो यमते नायते धन्वासहा नायते।

(ऋ० १।१२७।३)

वह (अग्नि) लकड़ी काटनेवाले फरसे के समान द्रोह करनेवाले शत्रु को काटनेवाला, वृक्ष के समान दृढ़ पदार्थ को भी खण्डित करनेवाला और धनुषधारी की तरह आगे बढ़नेवाला है।

उपमान—द्रुहन्तरः परशुः, वना,—धन्वासहा, उपमेय—सः, साधारण धर्म—द्रुहन्तरः, वीलु चित् स्थिरम् श्रुवद्, अयते, सादृश्यवाचक २ न, एक इव है। एक उपमेय के ३ साधारण धर्म हैं। द्रव्योपमा है।

भूषन् न योऽधि बभ्रूषु नम्नते वृषेव पत्नीरभ्येति रोरुवत् ।
ओजायमानस्तन्वश्च शुम्भते भीमो न शृङ्गा दविधाव दुर्गृभिः ॥
(ऋ० १।१४०।६)

जो (अग्नि) पीतवर्ण ओषधियों में भूषित करते हुए के समान प्रवेश करता है, शब्द करते हुए गाय की और भागनेवाले वृषभ के समान शब्द करता हुआ वनस्पतियों की ओर भागता है, भयंकर पशु के समान सींगरूप ज्वाला को घुमाता है।

उपमान—भूषन्, पत्नीः-वृधा, भीमः, उपमेय—यः, साधारण धर्म—बभ्रूषु अधि नम्नते, रोरुवत् अभ्येति, शृंगादविधाव, सादृश्यवाचक—२ न, एक इव है। एक उपमेय के ३ उपमान, ३ साधारण धर्म हैं। भूतोपमा और द्रव्योपमा है।

ऋत्वा हि द्रोणे अज्यसेऽग्ने वाजी न कृत्व्यः ।
परिज्मेव स्वधा गयोऽत्यो न ह्वार्यः शिशुः ॥
(ऋ० ६।२।८)

हे अग्ने ! तुम वेगवान् अश्व के समान हव्य को ले जानेवाले, वायु के समान सर्वत्रगन्ता और उत्पत्ति के समय शिशु रहने पर भी अश्व के समान कुटिल रूप में इधर-उधर जाते हो।

उपमान—वाजी, परिज्म, अत्यः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—कृत्व्यः गयः ह्वार्यः, सादृश्यवाचक २ न, एक इव है। एक उपमेय के ३ उपमान, ३ साधारण धर्म हैं। भूतोपमा और द्रव्योपमा है।

स इदस्तेव प्रति धादसिष्यच्छिशीत तेजोऽयसो न धाराम् ।
चित्रध्रजतिररतिर्यो अक्तोर्वेर्न द्रुषद्वा रघुपत्मजंहाः ॥
(ऋ० ६।३।५)

वह (अग्नि) बाणवर्षक के समान अपनी ज्वाला को प्रेषित करता है, लोहार जिस प्रकार अपने कुठार की धार को तीक्ष्ण करता है उसी प्रकार ज्वाला को तीक्ष्ण करता है तथा शीघ्र उड़ान भरने में समर्थ पेड़ पर बैठे पक्षी के समान अद्भुत गतिसम्पन्न होकर रात्रि को लाँघ जाता है।

उपमान—अस्ता, अयसः-धाराम्, वेः, उपमेय—सः, साधारण धर्म—प्रतिधात्, तेजः शिशीत, द्रुषद्वा, सादृश्यवाचक—२ न, एक इव है। एक उपमेय के ३ उपमान, ३ साधारण धर्म हैं। द्रव्योपमा है।

३ वाचकलुप्ता—

हिरण्यरूपः स हिरण्यसंदृगपां नपात् सेदु हिरण्यवर्णः ।
हिरण्ययात् परि योनेर्निषद्या हिरण्यदा ददत्यन्नमस्मै ॥

(ऋ० २।३५।१०)

वह अपांनपात् देव स्वर्ण समान रूपवाला, स्वर्णसदृश नेत्रवाला, स्वर्णतुल्य वर्णवाला है ।

उपमान—हिरण्य, हिरण्य, हिरण्य, उपमेय—सः अपांनपात्, साधारण धर्म—रूपः, संदृक् वर्णः, सादृश्यवाचक—तीनों वाचक पद का लोप है । एक उपमेय के एक ही उपमान को ३ बार प्रतिपादित किया है । साधारण धर्म ३ हैं । रूपोपमा और वर्णोपमा है ।

उपमेयलुप्ता तीन उपमानवाली मालोपमा—

३ वत् —

मनुष्वत् त्वा नि धीमहि मनुष्वत् समिधीमहि ।
अग्ने मनुष्वदङ्गिरो देवान् देवयते यज ॥

(ऋ० १।१२९।१)

हे अग्ने ! (हम) तुम्हें मननशील मनु की तरह स्थापित करते हैं, मनु के समान प्रज्वलित करते हैं, हे अग्ने ! तुम मनु के समान उत्तम गुणों को चाहनेवाले (हमें) उत्तम गुणों से युक्त करो

उपमान—मनुष् मनुष, मनुष्, साधारण धर्म—त्वा निधीमहि, समिधीमहि, देवयते, सादृश्यवाचक—३ वत् है । उपमेय—हम का लोप है । एक उपमेय के एक ही तरह के तीन उपमान हैं । ३ साधारण धर्म हैं । सिद्धोपमा है ।

एवेन्द्राग्निभ्यां पितृवन्नवीयो मन्धातृवदङ्गिरस्वदवाचि ॥

(ऋ० ८।४०।१२)

(मैं ऋषि) इन्द्राग्नी के लिए पिता नभाक के समान, मन्धाता के समान और अंगिरा के समान नवीन स्तुति करता हूँ ।

उपमान—पितृ, मन्धातृ, अङ्गिरः, साधारण धर्म—नवीयः अवाचि, सादृश्यवाचक—३ वत् है । उपमेय—मैं का लोप है । एक उपमेय के ३ उपमान, एक साधरण धर्म है । सिद्धोपमा है ।

उत त्वा भृगुवच्छुचे मनुष्वदग्न आहुत । अङ्गिरवद्धवामहे ॥

(ऋ० ८।४३।१३)

हे अग्ने ! (हम) तुम्हारा भृगु, मनु और अङ्गिरा के समान आह्वान करते हैं।

उपमान—भृगु, मनुष्, अंगिरः, साधारण धर्म—हवामहे, सादृश्यवाचक—३ वत् है। उपमेय—हम का लोप है। एक उपमेय के ३ उपमान एक साधारण धर्म है। सिद्धोपमा है।

३ न—

तिग्मं चिदेम महि वर्पो अस्य भसदश्वो न यमसान आसा।
बिजेहमानः परशुर्न जिह्वां द्रविर्न द्रावयति दारु धक्षत्॥

(ऋ० ६।३।४)

(यह अग्नि) अश्व के समान मुख से घास ग्रहण करता हुआ, कुठार के समान अपनी ज्वाला रूप जिह्वा से झाड़ियों को तितर-बितर करता हुआ, जैसे स्वर्णकार सोना पिघलाता है उसी प्रकार सम्पूर्ण वन को भस्मसात् कर देता है।

उपमान—अश्वः, परशुः, द्रविः, साधारण धर्म—आसा यमसानः, जिह्वां बिजेहमानः, द्रावयति दारु धक्षत्, सादृश्यवाचक—३ न है। उपमेय—अग्नि का लोप है। एक उपमेय के ३ उपमान, ३ साधारण धर्म हैं।

२ इव १ न—

साधुर्न गृध्नुरस्तेव शूरो यातेव भीमस्त्वेषः समत्सु॥

(ऋ० १।७०।६)

(यह अग्नि) सत्पुरुष के समान सत्कार करने योग्य, बाण-वर्षक के समान वीर, अश्वरोही के समान भयंकर है।

उपमान—साधुः, अस्ता, याता, साधारण धर्म—गृध्नुः, शूरः, भीमः, सादृश्य-वाचक—२ इव एक न है। उपमेय—अग्नि का लोप है। एक उपमेय के ३ उपमान, ३ साधारण धर्म हैं। द्रव्योपमा है।

१ इव, १ न, १ वाचकलुप्ता—

अधा हि विक्षीड्योऽसि प्रियो नो अतिथिः।
रण्वः पुरीव जूर्यः सूनुर्न त्रययाय्यः॥

(ऋ० ६।२।७)

(हे अग्ने ! तुम) अतिथि के समान प्रिय, नगर में रहनेवाले वृद्ध हितोप-देष्टा के समान रमणीय और पुत्र के समान रक्षा करने योग्य हो।

उपमान—अतिथिः, पुरिजूर्यः, सूनुः, साधारण धर्म—प्रियः, रण्वः, त्रययाय्यः, सादृश्यवाचक—एक वाचकलुप्ता, एक इव, एक न है। उपमेय—अग्नि का लोप है। एक उपमेय के ३ उपमान ३ साधारण धर्म हैं। द्रव्योपमा है।

३ वाचकलुप्ता—

आ हि ष्मा सूनवे पितापिर्यजत्यापये । सखा सख्ये वरेण्य: ।।

(ऋ० १।२६।३)

जैसे श्रेष्ठ पिता अपने पुत्र की, बन्धु अपने बन्धु की और मित्र अपने मित्र की सहायता करता है उसी प्रकार (अग्नि हमारी) सहायता करे ।

उपमान—पिता सूनवे, आपि: आपये, सखा सख्ये, साधारण धर्म—आ यजति स्म, उपमेय—अग्नि हमारी और सादृश्यवाचक पद का लोप है । एक उपमेय के ३ उपमान और एक साधारण धर्म है ।

२ उपमेय और ३ उपमानवाली मालोपमा—

१ इव, १ न, १ वाचकलुप्ता—

केवल एक ऋचा में २ उपमेय का प्रयोग हुआ है जिसमें से एक उपमेय का लोप है और एक का शब्दश: प्रतिपादन किया गया है—

हिरण्यकेशो रजसो विसारेऽहिर्धुनिर्वात इव ध्रजीमान् ।
शुचि भ्राजा उषसो नवेदा यशस्वतीरपस्युवो न सत्या: ।।

(ऋ० १।७९।१)

स्वर्ण के समान ज्वालावाला, वायु के समान शीघ्र गतिवाला (अग्नि) मेघ के जल का विस्तार करता है, सरल स्वभाववाली प्रजा के समान उषायें इस बात को नहीं जानती हैं ।

उपमान—हिरण्य, वात, सत्या:, साधारण धर्म—केश:, ध्रजीमान्, यशस्वती: अपस्युव:, नवेदा, सादृश्यवाचक—१ वाचकलुप्ता, १ इव, १ न है । उपमेय २ हैं—(१) अग्नि और (२) उषस: । प्रथम उपमेय—अग्नि का शब्दश: कथन नहीं किया गया है । इसके २ उपमान और २ साधारण धर्म हैं । द्वितीय उपमेय—उषस: का प्रतिपादन किया गया है । इसका १ उपमान और १ साधारण धर्म है । द्रव्योपमा है ।

उपमेय सहित दो उपमानवाली मालोपमा—

१०६ ऋचाओं में २ उपमानवाली मालोपमा का प्रयोग हुआ है । निम्न-लिखित ६२ ऋचाओं में १ उपमेय, २ उपमान और २ साधारण धर्म हैं—

२ न—

आ स्वमद्य युवमानो अजरस्तृष्वविष्यन्नतसेषु तिष्ठति ।
अत्यो न पृष्ठं प्रुषितस्य रोचते दिवो न सानुस्तनयन्नचिक्रदत् ।

(ऋ० १।५८।२)

जरा-रहित अग्नि घी से सिंचित होने पर अश्व के समान शोभता है, द्युलोक के शिखर पर रहनेवाले मेघ के समान गर्जता हुआ बार-बार शब्द करता है।

उपमान—अत्यः, दिवः, उपमेय—अजर साधारण धर्म—रोचते, स्तनयन् अचिक्रदत्, सादृश्यवाचक—२ न है। भूतोपमा।

उप प्र जिन्वन्नुशतीरुशन्तं पतिं न नित्यं जनयः सनीलाः।
स्वसारः श्यावीमरुषीमजुष्रन् चित्रमुच्छन्तीमुषसं न गावः।
(ऋ० १।७१।१)

जैसे कामना करती हुई स्त्रियाँ अपने पति को प्रसन्न करती हैं और उषा काल को देखकर गायें प्रसन्न होती हैं उसी प्रकार एक साथ रहनेवाली भगिनीरूप अंगुलियाँ अग्नि को प्रसन्न करती हैं।

उपमान—उशतीः जनयः नित्यं पतिं, उषसं गावः, उपमेय—सनीलाः स्वसारः चित्रं, साधारण धर्म—उप प्रजिन्वन्, अजुष्रन् सादृश्यवाचक—२ न है। भूतोपमा है।

उभे भद्रे जोषयेते न मेने गावो न वाश्रा उप तस्थुरेवैः।
स दक्षाणां दक्षपतिर्बभूवाञ्जन्ति यं दक्षिणतो हविर्भिः॥
(ऋ० १।९५।६)

दोनों कल्याणकारिणी द्यावा पृथ्वीरूप स्त्रियाँ जैसे चामर-हस्ता स्त्रियाँ राजा की दोनों ओर से सेवा करती हैं उसी प्रकार इस (अग्नि) की सेवा करती हैं और रँभानेवाली गायों के समान उसके समीप आती हैं।

उपमान—जोषयेते, वाश्रागावः, उपमेय—उभे भद्रे मेने यं, साधारण धर्म—उपतस्थुः एवैः अञ्जन्ति, सादृश्यवाचक—२ न है। भूतोपमा है।

आ यः पुरं नार्मिणीमदीदेदत्यः कविर्नभन्यो नार्वा।
सूरो न रुरुक्वाञ्छतात्मा॥
(ऋ० १।१४९।३)

जो (अग्नि) अश्व के समान वेगवान् और सैकड़ों किरणोंवाले सूर्य के समान तेजस्वी हैं।

उपमान—अर्वा, सूरः, उपमेय—यः, साधारण धर्म—अत्यः, रुरुक्वान्, सादृश्यवाचक—२ न है। भूतोपमा और अधिकोपमा है।

अभ्रातरो न योषणो व्यन्तः पतिरिपो न जनयो दुरेवाः।
पापासः सन्तो अनृता असत्या इदं पदमजनता गभीरम्॥
(ऋ० ४।५।५)

बन्धु-बान्धवों से रहित स्त्री जिस प्रकार कुमार्ग पर चलती है उसी प्रकार कुमार्ग पर चलनेवाले तथा पति से द्वेष करनेवाली स्त्रियों के समान दुराचारी पापियों ने यह अगाध नरक उत्पन्न किया है।

उपमान—अभ्रातरः योषणः, पतिरिपः जनयः, उपमेय—पापासः, साधारण धर्म—व्यन्तः, दुरेवाः, सादृश्यवाचक—२ न हैं।

द्विर्यं पञ्च जीजनन्त्संवसानाः स्वसारो अग्निं मानुषीषु विक्षु।
उषर्बुधमथर्यो न दन्तं शुक्रं स्वासं परशुं न तिग्मम्॥
(ऋ० ४।६।८)

दस बहिनरूपी अंगुलियाँ परशु के समान तीक्ष्ण और बाण के अग्रभाग के समान तीव्र इस अग्नि को उत्पन्न करती हैं। उपमान—अथर्यः, परशुं, उपमेय—यं अग्निं, साधारण धर्म—दन्तं, तिग्मम्, सादृश्यवाचक—२ न है।

ये ह त्ये ते सहमाना अयासस्त्वेषासो अग्ने अर्चयश्चरन्ति।
श्येनासो न दुवसनासो अर्थं तुविष्वणसो मारुतं न शर्धः॥
(ऋ० ४।६।१०)

हे अग्ने। तुम्हारी ज्वालायें श्येन पक्षी की तरह गन्तव्य पर जाती हैं और बलशाली मरुतगणों के समान अत्यन्त ध्वनि करती हैं।

उपमान—श्येनासः, मारुतं शर्धः, उपमेय—अग्ने ते अर्चयः, साधारण धर्म—अर्थं चरन्ति, तुविष्वणसः, सादृश्यवाचक २ न हैं।

अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदि स्पृशम्। ऋध्यामा त ओहैः॥
(ऋ० ४।१०।१)

हे अग्ने। अश्व के समान कल्याणकारी तथा बुद्धि के समान अन्तस्तल में निवास करनेवाले प्रशंसनीय स्तोत्रों द्वारा तुम्हारी वृद्धि करते हैं।

उपमान—अश्वं, क्रतुं उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—भद्रं, हृदिस्पृशम्, सादृश्यवाचक २ न हैं। भूतोपमा है।

घृतं न पूतं तनूररेपाः शुचि हिरण्यम्।
तत् ते रुक्मो न रोचत स्वधावः॥
(ऋ० ४।१०।६)

हे अन्नवान् अग्ने! तुम्हारा स्वरूप घृत के समान पवित्र और आभूषण के समान प्रकाशमान है।

उपमान—घृतं, रुक्मः, उपमेय—स्वधावः ते तनूः, साधारण धर्म—पूतं, रोचते, सादृश्यवाचक—२ न है।

तमर्वन्तं न सानसिमरुषं न दिवः शिशुम्।
मर्मृज्यन्ते दिवे दिवे॥
(ऋ० ४।१५।६)

अश्व के समान सबके द्वारा सेवा किये जाने योग्य और द्युलोक के शिशु रूप सूर्य के समान दीप्तिमान उस (अग्नि) की बार-बार परिचर्या करते हैं।

उपमान—अर्वन्तं, दिव शिशुम्, उपमेय—तम्, साधारण धर्म—सानसिम्, अरुषं, सादृश्यवाचक—२ न है। भूतोपमा और अधिकोपमा है।

उत स्म दुर्गृभीयसे पुत्रो न ह्वार्याणाम्।
पुरू यो दग्धासि वनाग्ने पशुर्न यावसे॥

(ऋ० ५।६।४)

हे अग्ने। भूखा पशु जैसे जौ जाता है उसी प्रकार तुम सम्पूर्ण वनों को जलाने वाले हो। कुटिल गतिवाले सर्प-पुत्र के समान तुम्हें पकड़ना अत्यन्त कठिन है।

उपमान—ह्वार्याणाम् पुत्रः पशुः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—दुर्गृभीयसे, यवसे, सादृश्यवाचक—२ न है। भूतोपमा है।

तव त्ये अग्ने अर्चयो भ्राजन्तो यन्ति धृष्णुया।
परिज्मानो न विद्युतः स्वानो रथो न वाजयुः॥

(ऋ० ५।१०।५)

हे अग्ने। तुम्हारी ज्वालायें विद्युत् के समान सर्वत्र व्याप्त और शब्द करते हुए रथ के समान सर्वत्र गमन करती हैं।

उपमान—विद्युतः स्वानो रथः, उपमेय—अग्ने ते अर्चयः, साधारण धर्म—परिज्मानः, वाजयुः यन्ति, सादृश्यवाचक—२ न है।

दिवो न यस्य विधतो नवीनोद्वृषा रुक्ष ओषधीषु नूनोत्।
घृणा न यो भ्रजसा पत्मना यन्ना रोदसी वसुना दं सुपत्नी॥

(ऋ० ६।३।७)

जिस (अग्नि) की तेजस्वी किरणें सूर्य के समान ओषधीरूप काष्ठ में महान शब्द करती हैं, जो संचलनशील दीप्तिवाले सूर्य के समान गमनशील तेज से ऊपर उठता है।

उपमान—दिवः, घृणा, उपमेय—यस्य रुक्षः यः, साधारण धर्म—ओषधीषु नूनोत्, भ्रजसा पत्मना यन्, सादृश्यवाचक—२ न है। अधिकोपमा है।

नितिक्ति यो वारणमन्नमत्ति वायुर्न राष्ट्र्येत्यक्तून्।
तुर्याम यस्त आदिशामरातीरत्यो न ह्रुतः पततः परिह्रुत्॥

(ऋ० ६।४।५)

यह (अग्नि) वायु के समान सबका शासक है, अश्व के समान सम्मुख आये हिंसक शत्रु को नष्ट करता है। उपमान—वायुः, अत्यः, उपमेय—यः, साधारण धर्म—राष्ट्री, पततः ह्रुतः परिह्रुत्, सादृश्यवाचक २ न है। भूतोपमा है।

आ सूर्यो न भानुमद्भिरर्कैरग्ने ततन्थ रोदसी विभासा।
चित्रो नयत्परि तमांस्यक्तः शोचिषा पत्मन्नौशिजो न दीयन्॥

(ऋ० ६।४।६)

हे अग्ने। तुम द्यावा पृथ्वी को सूर्य के समान अपने से आच्छादित करते हो। नियमित रूप से चलनेवाले सूर्य के समान गतिशील दीप्तिमान् अग्नि रात्रि के अंधकार को नष्ट करता है।

उपमान—सूर्यः, औशिजः; उपमेय—अग्ने अर्कैः चित्रः, साधारण धर्म—रोदसी वि आ ततन्थ, दीयन् तमांसि परिनयद्, सादृश्यवाचक—२ न है। अधिकोपमा है।

अध जिह्वा पापतीति प्र वृष्णो गोषु युधो नाशनिः सृजाना।
शूरस्येव प्रसितिः क्षातिरग्नेर्दुर्वर्तुर्भीमो दयते वनानि॥

(ऋ० ६।६।५)

इन्द्र द्वारा छोड़े गये वज्र के समान और शूरवीर के बन्धन के समान अग्नि की ज्वाला सहन करने में लोग असमर्थ होते हैं,

उपमान—गोषुयुधः अशनिः, शूरस्य प्रसितिः, उपमेय—अग्नेः क्षातिः, साधारण धर्म—दुर्वर्तुः, भीमः, सादृश्यवाचक—२ न है।

तेजिष्ठा यस्यारतिर्वनेराट् तोदो अध्वन्न वृधसानो अद्यौत्।
अद्रोघो न द्रविता चेतति त्मन्नमर्त्योऽवर्त्र ओषधीषु॥

(ऋ० ६।१२।३)

वर्धमान अग्नि सर्वप्रेरक सूर्य के समान अपने मार्ग अर्थात् अन्तरिक्ष में प्रकाशित होता है। वायु के समान किसीसे भी रोका न जानेवाला होकर सम्पूर्ण विश्व में प्रकाशित होता है।

उपमान—तोदो अध्वन्, अद्रोघो, उपमेय—वृधसानः, साधारण धर्म—अद्यौत, अवत् चेतति, सादृश्यवाचक—२ न है। अधिकोपमा है।

पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन्रुरुच उषसो न भानुना।
तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नू रण आ यो घृणे न ततृषाणो अजरः॥

(ऋ० ६।१५।५)

जो अग्नि उषा के समान तेज से प्रकाशित होता है और युद्धभूमि में शत्रु-हन्ता वीर के समान सूर्य के साथ युद्ध में सहायता के लिये प्रदीप्त होता है।

उपमान—उषसः, तूर्वन्, उपमेय—यः, साधारण धर्म—भानुना रुरुचे, एतशस्य नूरण आ घृणे, सादृश्यवाचक—२ न है।

स्वाध्योविदुरो देवयन्तोऽशिश्रयूरथयुर्देवताता।
पूर्वीं शिशुं न मातरा रिहाणे समग्रुवो न समनेष्वञ्जन्॥

(ऋ० ७।२।५)

जैसे गौ बछड़े को चाटती है, जैसे नदियाँ खेतों को जल से सींचती हैं उसी प्रकार शोभनकर्मा यजमान अग्नि को घी से सींचते हैं।

उपमान—मातरा पूर्वी शिशुं अग्रुवः, उपमेय—स्वाध्यः, साधारण धर्म—रिहाणे, समञ्जन्, सादृश्यवाचक—२ न है। भूतोपमा है।

प्रशंसमानो अतिथिर्न मित्रियोऽग्नी रथो न वेद्यः॥

(ऋ० ८।१९।८)

अग्नि अतिथि के समान हित करनेवाला और रथ के समान अभीष्ट फल का साधक होने से ज्ञातव्य है।

उपमान—अतिथिः, रथः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—मित्रियः, वेद्यः, सादृश्यवाचक—२ न है।

अग्निं विश्वायुवेपसं मर्यं न वाजिनं हितम्।

सप्तिं न वाजयामसि॥

(ऋ० ८।४३।२५)

अग्नि को युवा पुरुष के समान हितकारी, अश्व के समान बलवान बनायें।

उपमान—मर्यं, सप्तिं, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म—हितम्, वाजिनम्, सादृश्यवाचक—२ न है। भूतोपमा है।

तमर्वन्तन्न सानसिं गृणीहि विप्रशुष्मिणम्। मित्रं न यातयज्जनम्।

(ऋ० ८।१०२।१२)

अश्व के समान सबके द्वारा सेवा किये जाने योग्य, सूर्य के समान बलवान शत्रुनाशक इस (अग्नि) की स्तुति करो।

उपमान—अर्वन्तं, मित्रं, उपमेय—तं, साधारण धर्म—सानसिं, शुष्मिणम् यातयन्, सादृश्यवाचक—२ न है। भूतोपमा, अश्विकोपमा है।

वि यस्य ते ऋषसानस्याजर धक्षोर्न वाताः परिसन्त्यच्युताः।

आ रण्वासो युयुधयो न सत्वनं त्रितं नशन्त प्र शिषन्त इष्टये॥

(ऋ० १०।११५।४)

हे जरारहित अग्ने! योद्धाओं के समान बलवान और शत्रु से नष्ट न होने वाला तुम्हारा तेज वायु के समान सर्वत्र व्याप्त है।

उपमान—वाताः, युयुधयः, उपमेय—यस्य ते अच्युताः अजर, साधारण धर्म—परिसन्ति, सत्वनं, सादृश्यवाचक—२ न है।

एवाग्निर्मंतैः सह सूरिभिर्वसुः ष्टवे सहसः सूनरो नृभिः।

मित्रासो न ये सुधिता ऋतायवो द्यावो न द्युम्नैरभि सन्ति मानुषान्॥

(ऋ० १०।११५।७)

सूर्य के समान तृप्त यज्ञ की कामना वाले विद्वान् द्योतमान आकाश के समान अग्निप्रदत्त बल से अपने शत्रुओं को परास्त करते हैं।

उपमान—मित्रासः, द्यावः, उपमेय—ये सूरयः अग्निम्, साधारण धर्म—सुधिताः, द्युम्नैः अभि सन्ति, सादृश्यवाचक—२ न है।

२ इव—

भवा नो अग्ने सुमना उपेतौ सखेव सख्ये पितरेव साधुः ॥

(ऋ० ३।१८।१)

हे अग्ने। जैसे मित्र के प्रति मित्र और माता-पिता अपने पुत्र के प्रति हितैषी होते हैं उसी प्रकार तुम हमारे सम्मुख आने पर हितैषी बनो।

उपमान—सखा, पितरा, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—नः सुमना भव, साधुः, सादृश्यवाचक - २ इव है। द्रव्योपमा है।

अमूरो होता न्यसादि विक्ष्वग्निर्मन्द्रो विदथेषु प्रचेताः।

ऊर्ध्वं भानुं सवितेवाश्रेन्मेतेव धूमं स्तभायदुप द्याम् ॥

(ऋ० ४।६।२)

अग्नि सूर्य के समान अपनी किरणों को ऊपर की ओर फैलाता है, स्तम्भ के समान द्युलोक के ऊपर धूम को धारण करता है।

उपमान—सविता, मेता, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—भानुं ऊर्ध्वं अश्रेत्, धूमं द्याम् उपस्तभायत्, सादृश्यवाचक - २ इव है। द्रव्योपमा है।

आ ते चिकित्र उषसामिवेतयोऽरेपसः सूर्यस्येव रश्मयः।

(ऋ० १०।९१।४)

(हे अग्ने) तुम्हारी रश्मियाँ उषा की प्रकाशयुक्त किरणों के समान दिखाई देती हैं (और) सूर्य के समान पापरहित हैं।

उपमान—उषसाम् एतयः, सूर्यस्य रश्मयः, उपमेय—ते, साधारण धर्म—आ चिकित्र, अरेपसः, सादृश्यवाचक—२ इव है। द्रव्योपमा और अधिकोपमा है।

यदुद्वतो निवतो यासि बप्सत्पृथगेषि प्रगर्धिनीव सेना।

यदा ते वातो अनुवाति शोचिर्वप्तेव श्मश्रु वपसि प्र भूम ॥

(ऋ० १०।१४२।४)

(हे अग्ने।) जब ऊपर नीचे झाड़ियों को जलाते हुए जाते हो तब दूसरे राष्ट्र पर आक्रमण करनेवाली सेना के समान विभिन्न रूप में प्राप्त होते हो। वायु से प्रभावित तुम्हारी ज्वाला जैसे नापित दाढ़ी-मूँछ को साफ कर देता है उसी प्रकार भूमि को जलाकर साफ कर देती है।

उपमान—प्रगर्धिनी सेना, वप्ता श्मश्रु, उपमेय—ते शोचिः, साधारण धर्म—बप्सद पृथगेषि, प्रवपसि, सादृश्यवाचक—२ इव है। द्रव्योपमा है।

१ न, १ इव—

रथो न यातः शिक्वभिः कृतो द्यामङ्गेभिररुषेभिरीयते।

आदस्य ते कृष्णासो दक्षि सूरयः शूरस्येव त्वेषथादीषते वयः ॥

(ऋ० १।१४१।८)

(अग्ने !) तुम्हारी गमनशील ज्वालायें निपुण कारीगरों द्वारा बनाये और रज्जु से बँधे जाते हुए रथ के समान द्युलोक की ओर जाती है, वीर के समान इसके तेज से पक्षीगण भाग जाते हैं।

उपमान—शिक्वभिः कृतः यातः रथः, शूरस्य, उपमेय—ते अस्य, साधारण धर्म—अरुषेभिः अंगेभिः द्यां ईयते, त्वेषयात् वयः ईषते, सादृश्यवाचक—१ न १ इव है। द्रव्योपमा है।

अस्मे रयिं न स्वर्थं दमूनसं भगं दक्षं न पपृचासि धर्णसिम्।
रश्मींरिव यो यमति जन्मनी जन्मनी उभे देवानां शंसमृत आच सुक्रतुः॥
(ऋ० १।१४१।११)

जो (अग्नि) हमारे लिये धन के समान प्रयोजनीय उत्साही साहय्यकारी प्रदान करता है, जन्मदात्री दोनों द्यावा पृथ्वी को रासों के समान वश में रखता है।

उपमान—रयिं, रश्मीन्, उपमेय—यः, साधारण धर्म—स्वर्थं भगं दक्षं पपृचासि, उभे जन्मनी यमति, सादृश्यवाचक—१ न १ इव है। द्रव्योपमा है।

अभित्वा नक्तीरुषसो ववाशिरेऽग्ने वत्सं न स्वसरेषु धेनवः।
दिव इवेदरतिर्मानुषा युगा क्षपो भासि पुरुवार संयतः॥
(ऋ० २।२।२)

हे अग्ने ! गौ जैसे बछड़े की इच्छा करती है उसी प्रकार मनुष्य दिन-रात तुम्हारी इच्छा करते हैं। तुम द्युलोक के समान विस्तृत होते हो।

उपमान—वत्सं, दिवः, उपमेय—त्वा अग्ने, साधारण धर्म—ववाशिरे, इव अरतिः, सादृश्यवाचक—१ न १ इव है। द्रव्योपमा और भूतोपमा है।

रथमिव वेद्यं शुक्रशोचिषमग्निं मित्रं न क्षितिषु प्रशंस्यम्।
(ऋ० २।२।३)

रथ के समान ऐश्वर्य-प्राप्ति का मार्ग जानने के कारण ज्ञातव्य, मित्र के समान प्रशंसनीय अग्नि को देवगण श्रेष्ठ स्थान में स्थापित करते हैं।

उपमान—रथम् मित्रं, उपमेय—अग्निम्, साधारण धर्म—वेद्यं, प्रशंस्यम्, सादृश्यवाचक—१ इव १ न है। द्रव्योपमा है।

तमुक्षमाणं रजसि स्व आदमे चन्द्रमिव सुरुचं ह्वार आदधुः॥
पृश्न्याः पतरं चितयन्तमक्षभिः पाथो न पायुं जनसी उभे अनु॥
(ऋ० २।२।४)

स्वर्ण के समान आनन्ददायक, जल के समान रक्षक इस (अग्नि) को मनुष्य अपने घर में स्थापित करते हैं।

उपमान—चन्द्रम्, पाथः उपमेय—तं, साधारण धर्म—सुरुचं, पायुं, सादृश्यवाचक—१ इव १ न है। द्रव्योपमा है।

अस्य रण्वा स्वस्येव पुष्टिः संदृष्टिरस्य हियानस्य दक्षोः ।
वि यो भरिभ्रदोषधीषु जिह्वामत्यो न रथ्यो दोधवीति वारान् ॥

(ऋ० २।४।४)

शरीर की पुष्टि के समान इस (अग्नि) की रमणीयता होती है, जैसे रण में जुता अश्व अपनी पूँछ के बालों को बार-बार कँपाता है उसी प्रकार यह (अग्नि) वनस्पतियों पर अपनी ज्वाला रूप जीभ को घुमाता है।

उपमान—स्वस्थ पुष्टिः, अत्यः, उपमेय—अस्य यः जिह्वां, साधारण धर्म—रण्वा, वारान् दोधवीति, सादृश्यवाचक—१ इव १ न है। द्रव्योपमा है।

बृहन्त इद्भानवो भाऋजीकमग्निं सचन्त विद्युतो न शुक्राः ।
गुहेव वृद्धं सदसि स्वे अन्तरपार ऊर्वे अमृतं दुहानाः ॥

(ऋ० ३।१।१४)

विद्युत् के समान अत्यन्त कान्तियुक्त महान् किरणें गुहा के समान अपने घर अन्तरिक्ष में बढ़ते हुए प्रकाशमान अग्नि का आश्रय प्राप्त करती हैं।

उपमान—विद्युतः, गुहा, उपमेय—भानवः अग्निम्, साधारण धर्म—शुक्राः, वृद्धं सचन्त, सादृश्यवाचक—१ इव १ न है। द्रव्योपमा है।

अस्य श्रेष्ठा सुभगस्य संदृग्देवस्य चित्रतमा मर्त्येषु ।
शुचि घृतं न तप्तमघ्न्यायाः स्पार्हा देवस्य मंहनेव धेनोः ॥

(ऋ० ४।१।६)

जैसे उत्तम गोपालक की गाय का दूध और घी शुद्ध एवं तेजस्वी होता है तथा गोपालक द्वारा प्रदत्त गौ का दान श्रेष्ठ होता है उसी प्रकार देव (अग्नि) का प्रशंसनीय तेज मनुष्यों में पूजनीय और स्पृहणीय होता है।

उपमान—अघ्न्यायाः घृतं धेनोः मंहना, उपमेय—देवस्य संदृक्, साधारण धर्म—शुचितमम् स्पार्हा चित्रतमा, सादृश्यवाचक—१ न १ इव है। द्रव्योपमा है।

सम्यक्स्रवन्ति सरितो न धेना अन्तर्हृदा मनसा मानस पूयमानाः
एते अर्षन्त्यूर्मयो घृतस्य मृगा इव क्षिपणोरीषमाणाः ॥

(ऋ० ४।५८।६)

आनन्द देनेवाली नदियों के समान, शिकारी से डरकर भागनेवाले हिरणों के समान ये घी की धाराएँ तेजी से बहती हैं।

उपमान—धेनाः सरितः, क्षिपणोः ईषमाणाः मृगाः, उपमेय—एते घृतस्य ऊर्मयः, साधारण धर्म—सम्यक् स्रवन्ति, अर्षन्ति सादृश्यवाचक—१ न १ इव है। भूतोपमा और द्रव्योपमा है।

स्तोमं यमस्मै ममतेव शूषं घृतं न शुचि मतयः पवन्ते ॥

(ऋ० ६।१०।२)

(स्तोतागण) इस (अग्नि) के लिये घृत के समान पवित्र और ब्रह्मवादिनी दीर्घतमस की माता ममता के समान सुखकारी स्तोत्र अर्पित करते हैं।

उपमान—ममता, घृतं, उपमेय—स्तोमं, साधारण धर्म—शूषं, शुचि पवन्ते, सादृश्यवाचक—१ इव १ न है। द्रव्योपमा है।

सास्माकेभिरेतरी न शूषैरग्निः ष्टवे दम आ जातवेदाः।
द्रवन्नो वन्वन् ऋत्वा नार्वोस्त्रः पितेव जारयायि यज्ञैः॥
(ऋ० ६।१२।४)

अश्व के समान सुखकारी, बछड़ों के जनक वृषभ के समान शीघ्रगामी अग्नि की स्तुति करते हैं।

उपमान—एतरी, उस्त्रः पिता, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—शूषैः, ऋत्वा अर्वा, सादृश्यवाचक—१ न, १ इव है। भूतोपमा, द्रव्योपमा है।

त्वं भगो न आहि रत्नमिषे परिज्मेव क्षयसि दस्म वर्चाः।
अग्ने मित्रो न बृहत् ऋतस्यासि क्षत्ता वामस्य देव भूरेः॥
(ऋ० ६।१३।२)

हे अग्ने! तुम वायु के समान सर्वत्र निवास करते हो, सूर्य के समान महान् उदक अथवा यज्ञ के दाता हो।

उपमान—परिज्म, मित्रः, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—क्षयसि, बृहत् ऋतस्य क्षत्ता असि, सादृश्यवाचक—१ इव, १ न है। अधिकोपमा और द्रव्योपमा है।

य उग्र इव शर्यहा तिग्मशृंगो न वंसगः। अग्ने पुरो रुरोजिथ॥
(ऋ० ६।१६।३९)

यह (अग्नि) धनुष-बाण के समान शत्रु-हन्ता, तीक्ष्ण सींगवाले वृषभ के समान तीक्ष्ण ज्वाला-युक्त है।

उपमान—उग्रः, वंसगः, उपमेय—यः, साधारण धर्म—शर्यहा, तिग्मशृंगः, सादृश्यवाचक—१ इव, १ न है। भूतोपमा, द्रव्योपमा है।

सेनेव सृष्टा प्रसितिष्ट एति यवं न दस्म जुह्वा विवेक्षि॥
(ऋ० ७।३।४)

हे दर्शनीय (अग्ने!) अस्त्र के समान आक्रमणकारी तुम्हारी ज्वाला जौ के समान काष्ठ आदि को खा जाती है।

उपमान—सेना, यवं, उपमेय—दस्म ते प्रसितिः, साधारण धर्म—सृष्टा, एति जुह्वा विवेक्षि, सादृश्यवाचक—१ इव, १ न है। द्रव्योपमा है।

शिशुं न त्वा जेन्यं वर्धयन्ती माता बिभर्ति सचनस्यमाना।
धनोरधि प्रवता यासि हर्यञ्जिगीषसे पशुरिवावसृष्टः॥
(ऋ० १०।४।३)

(हे अग्ने !) पृथ्वी शिशु के समान तुम्हें धारण करती है, जैसे विमुक्त पशु गोष्ठ की ओर जाता है उसी प्रकार हवि ग्रहण कर तुम देवों की ओर जाना चाहते हो।

उपमान—शिशुं पशुः, उपमेय—त्वा, साधारण धर्म—बिभर्ति, अवसृष्टः जिगीषसे, सादृश्यवाचक—१ न, १ इव है। भूतोपमा, द्रव्योपमा है।

तव श्रियो वर्ष्यस्येव विद्युतश्चित्राश्चिकित्र उषसां न केतवः।
(ऋ० १०।९१।५)

(हे अग्ने।) तुम्हारी रश्मि रूप विभूतियाँ वर्षक मेघ से सम्बद्ध विद्युत् के समान विचित्र, उषा के प्रज्ञापक प्रकाश के समान उद्भासित होती हैं।

उपमान—वर्षस्य विद्युतः, उषसां केतवः, उपमेय—तव श्रियः, साधारण धर्म—चित्राः, चिकित्र, सादृश्यवाचक—१ इव १ न है। द्रव्योपमा है।

१ यथा, १ न—

शिशानो वृषभो यथाग्निः शृंगे दविध्वत्।
तिग्मा अस्य हनवो न प्रतिधृषे सुजम्भः सहसो यहुः॥
(ऋ० ८।६०।१३)

अग्नि सींगों को तीक्ष्ण करते हुए वृषभ के समान अपनी ज्वाला को कँपाता है। हनु के समान इसकी तीक्ष्ण ज्वाला का प्रतिकार नहीं किया जा सकता है।

उपमान—शृंगे शिशानः वृषभः, हनवः, उपमेय—अग्निः अस्यतिग्मा, साधारण धर्म—शृंगे दविध्वत्, प्रतिधृषे, सादृश्यवाचक—१ यथा, १ न है। भूतोपमा, कर्मोपमा है।

१ यथा १ इव—

तव द्युमन्तो अर्चयो ग्रावेवोच्यते बृहत्।
उतो ते तन्यतुर्यथा स्वानो अर्तत्मना दिवः॥
(ऋ० ५।२५।८)

(हे अग्ने।) तुम्हारी ज्वालायें पीसनेवाले प्रस्तर के समान महान, मेघगर्जन के समान गर्जनशील हैं।

उपमान—ग्रावा, तन्यतुः उपमेय—तव ते अर्चयः, साधारण धर्म—बृहत् उच्यते, स्वानः, सादृश्यवाचक—१ इव, १ यथा है। द्रव्योपमा, कर्मोपमा है।

१ क्यच् १ इव—

जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहाति वेदः।
स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिंधुं दुरितात्यग्निः॥
(ऋ० १।९९।१)

वह अग्नि शत्रु के समान आचरण करनेवाले को जला डालता है, नौका द्वारा समुद्र पार करने के समान सभी संकटों से पार करता है।

उपमान—अरातीयतः, नावा सिंधुं, उपमेय—अग्निः नः, साधारण धर्म—निदहाति, दुरिता पर्षदति, सादृश्यवाचक—१ क्यच्, १ इव है। द्रव्योपमा है।

अरातीयतः—अरातिं शत्रुं इव अस्मान् आचरतः शत्रोः इति—"उपमानादाचारे" (पा० सू० ३।१।१०) से कर्म में विहित क्यच् प्रत्यय हुआ है।

१ न, १ वाचकलुप्ता—

तपुर्जम्भो वन आ वातचोदितो यूथे न साह्वाँ अव वाति वंसगः।
अभिव्रजन्नक्षितं पाजसा रजः स्थातुश्चरथं भयते पतत्रिणः॥

(ऋ० १।५८।५)

ज्वाला रूप दंष्ट्रावाला (अग्नि) गो-समुदाय में साँढ़ के समान वन में घूमता है, पक्षी के समान वेग से जानेवाले इससे सभी स्थावर-जंगम डरते हैं।

उपमान—यूथे वंसगः, पतत्रिणः, उपमेय—तपुर्जम्भः, साधारण धर्म—वन अववाति, अभिव्रजन्, सादृश्यवाचक—१ न १ वाचकलुप्ता है। भूतोपमा है।

स इधान उषसो रामया अनु स्वर्णदीदेदरुषेण भानुना।
होत्राभिरग्निर्मनुषः स्वध्वरो राजा विशामतिथिश्चारु रायवे॥

(ऋ० २।२।८)

वह (अग्नि) सूर्य के समान प्रकाशित होता है, अतिथि के समान चारु है।

उपमान—स्वः, अतिथिः, उपमेय—सः, साधारण धर्म—दीदेत्, चारुः, सादृश्यवाचक—१ न, १ वाचकलुप्ता है। अधिकोपमा।

स हि ष्मा धन्वाक्षितं दाता न दात्या पशुः।
हिरिश्मश्रुः शुचिदन्नभुरनिभृष्टतविषिः॥

(ऋ० ५।७।७)

स्वर्ण के समान मूँछ रूप ज्वाला वाला वह (अग्नि) घास खानेवाले पशु के समान निर्जल प्रदेश में रखे गये काष्ठ को जलाकर भस्म कर देता है।

उपमान—हिरिश्मश्रुः, दातापशुः, उपमेय—सः, साधारण धर्म—धन्वाक्षितं दाति, सादृश्यवाचक—१ न १ वाचकलुप्ता है। भूतोपमा है।

इन्द्रं न त्वा शवसा देवता वायुं पृणन्ति राधसा नृतमाः॥

(ऋ० ६।४।७)

(हे अग्ने!) ऋत्विक्गण इन्द्र के समान बलवान् देवतात्मा, वायु के समान बल से युक्त तुम्हें हवि से प्रसन्न करते हैं।

उपमान—इन्द्रं, वायुं, उपमेय—त्वा, साधारण धर्म—देवता, शवसा, सादृश्यवाचक—१ न, १ वाचकलुप्ता है।

घृतानं वो अतिथिं स्वर्णरमग्निं होतारं मनुषः स्वध्वरम्।
विप्रं न शुक्रवचसं सुवृक्तिभिर्हव्यवाहमरतिं देवमृञ्जसे।

(ऋ० ६।१५।४)

(हे ऋत्विक्गण।) तुम अतिथि के समान दीप्यमान, मेधावी के समान तेज के आश्रयस्थल अग्नि की परिचर्या करते हो।

उपमान— अतिथि, विप्रं, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म—द्युतानं, द्युक्षवचसं, सादृश्यवाचक—१ न, १ वाचकलुप्ता है।

प्रमायमग्निर्भरतस्य शृण्वे वियत्सूर्यो न रोचते बृहद्भाः।
अभि यः पूरुं पृतनासु तस्थौ द्युतानो दैव्यो अतिथिः शुशोच॥

(ऋ० ७।८।४)

यह अग्नि सूर्य के समान प्रकाशित होता है, देवताओं के अतिथि के समान दीप्यमान है।

उपमान—सूर्यः, अतिथिः, उपमेय—अग्निः, साधारण धर्म—रोचते, द्युतानः शुशोच, सादृश्यवाचक—१ न, १ वाचकलुप्ता है। अधिकोपमा है।

अश्वमिद्गां रथप्रां त्वेषमिन्द्रं न सत्पतिम्।
यस्य श्रवांसि तूर्वथ पन्यम्पन्यं च कृष्टयः॥

(ऋ० ८।७४।१०)

गमनशील अश्व के समान रथ से युक्त, इन्द्र के समान तेजस्वी इस (अग्नि) की मनुष्य परिचर्या करते हैं।

उपमान—अश्वमित्, इन्द्रं, उपमेय—यस्य श्रवांसि, साधारण धर्म—रथप्रां, त्वेषं, सादृश्यवाचक—१ वाचकलुप्ता, १ न है। भूतोपमा है।

वसुं न चित्रमहसं गृणीषे वामं शेवमतिथिमद्विषेण्यम्।
स रासते शुरुधो विश्ववारयोऽग्निर्होता गृहपतिः सुवीर्यम्॥

(ऋ० १०।१२२।१)

दासक सूर्य के समान अद्भुत तेज वाले, अतिथि के समान कल्याणकारी द्वेषरहित अग्नि की स्तुति करता हूँ।

उपमान—वसुं, अतिथिं, उपमेय—सुवीर्यम् (अग्निः), साधारण धर्म—चित्रमहसं, शेवम् अद्विषेण्यम्, सादृश्यवाचक—१ न १ वाचकलुप्ता है। अधिकोपमा है।

अयमुष्य प्र देवयुर्होता यज्ञाय नीयते।
रथो न योरभीवृतो घृणीवाञ्चेतति त्मना॥

(ऋ० १०।१७६।३)

यह (अग्नि) रथ के समान यज्ञस्थल में ले जाया जाता है, सूर्य के समान प्रकाशित होता है।

उपमान—रथः, घृणीवान्, उपमेय—अयमु, साधारण धर्म—प्रनीयते, चेतति, सादृश्यवाचक—१ न १ वाचकलुप्ता है। अधिकोपमा है।

१ वाचकलुप्ता, १ इव—

हुवे वः सुद्योत्मानं सुवृक्तिं विशामग्निमतिथिं सुप्रयसम् ।
मित्र इव यो दिधिषाय्यो भूद्देव आदेवे जने जातवेदाः ॥

(ऋ० २।४।१)

अतिथि के समान दीप्यमान, सूर्य के समान मनुष्यों से लेकर देवों तक के धारक अग्नि का आह्वान करता हूँ ।

उपमान—अतिथिम्, मित्रः, उपमेय—अग्निं यः, साधारण धर्म—सुद्योत्मानं, आदेवे जने दिधिषाय्यः भूत्, सादृश्यवाचक—१ वाचकलुप्ता १ इव है । अधिकोपमा, द्रव्योपमा है ।

स दूतो विश्वेदभि वष्टि सद्मा होता हिरण्यरथो रंसुजिह्वः ।
रोहिदश्वो वपुष्यो विभावा सदा रण्वः पितुमतीव संसत् ॥

(ऋ० ४।१।८)

स्वर्ण के समान रथवाला वह अग्नि अन्नयुक्त घर के समान सदा सुखकर है ।

उपमान—हिरण्य, पितुमती संसत्, उपमेय—सः, साधारण धर्म—रथः, सदा रण्वः, सादृश्यवाचक—१ वाचकलुप्ता १ इव है । द्रव्योपमा है ।

अबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषासम् ।
यह्वा इव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सिस्रते नाकमच्छ ॥

(ऋ० ५।१।१)

जैसे उषाकाल में गायों को जगाया जाता है उसी प्रकार मनुष्यों की समिधा द्वारा अग्नि प्रज्वलित होता है ।

इसकी ज्वालायें वृक्ष की शाखाओं के समान आकाश की ओर सीधी जाती हैं ।

उपमान—धेनुं, वयां, उपमेय—अग्निः भानवः, साधारण धर्म—अबोधि, नाकं अच्छ सिस्रते, सादृश्यवाचक—१ इव, १ वाचकलुप्ता है । पूर्णोपमा, द्रव्योपमा है ।

ता वृधन्तावनु द्यून्मर्तांय देवावदभा ।
अर्हन्ता चित्पुरो दधेंऽशेव देवावर्वते ॥

(ऋ० ५।८६।५)

वे दोनों (इन्द्राग्नी) मनुष्य के समान वर्धमान हैं, अश्व-प्राप्ति के लिए सूर्य के समान सबसे आगे स्थापित किया जाता है ।

उपमान—मर्तांय, अंशा, उपमेय—देवौ, साधारण धर्म—वृधन्तौ, पुरः दधे, सादृश्यवाचक—१ वाचकलुप्ता १ इव है । अधिकोपमा, द्रव्योपमा है ।

उपच्छायामिव घृणेरगन्म शर्म ते वयम् । अग्ने हिरण्येऽसन्दृशः ॥

(ऋ० ६।१६।३८)

स्वर्ण के समान तेजवाले हे अग्ने ! जैसे धूप-संतप्त मनुष्य छाया को प्राप्त करता है उसी प्रकार हम तुम्हारी शरण को प्राप्त करें।

उपमान— हिरण्य, छायाम्, उपमेय—अग्ने, साधारण धर्म—संदृशः, ते शर्म अगन्म, सादृश्यवाचक—१ वाचकलुप्ता, १ इव है। द्रव्योपमा है।

२ वाचकलुप्ता—

हुवे वातस्वनं कविं पर्जन्यक्रन्द्यं सहः। अग्निं समुद्रवाससम् ॥

(ऋ० ८।१०२।५)

वायु के समान ध्वनि वाले, बादल के समान गर्जनशील अग्नि का आह्वान करता हूँ।

उपमान—वात, पर्जन्य, उपमेय—अग्निम्, साधारण धर्म—स्वनं, क्रन्द्यं, सादृश्यवाचक—२ वालकलुप्ता है।

२ न—

निम्नलिखित ७ ऋचाओं में १ उपमेय, २ उपमान और १ साधारण धर्म का प्रयोग हुआ है—

ऋत्वा यदस्य तविषीषु पृञ्चतेऽग्नेरवेण मरुतां न भोज्येषिराय न भोज्या ॥

(ऋ० १।१२८।५)

इस अग्नि की ज्वालाओं में मरुतों के समान, याचक को भोजन देने के समान हवि अर्पित करते हैं।

उपमान—मरुतां, इषिराय भोज्या, उपमेय अस्य तविषीषु, साधारण धर्म—भोज्या पृञ्चते, सादृश्यवाचक २ न है।

आ यं हस्ते खादिनं शिशुं जातं न बिभ्रति। विशामग्निं स्वध्वरम् ॥

(ऋ० ७।१६।४७)

जिस अग्नि को हाथ में कंकण के समान, उत्पन्न पुत्र को पिता के समान अध्वर्यु धारण करता है।

उपमान—खादिनं, जातं शिशुं, उपमेय—यं अग्निं, साधारण धर्म—बिभ्रति, सादृश्यवाचक—२ न है।

२ इव—

अहाव्यग्ने हविरास्ये ते स्रुचीव घृतं चम्वीव सोमः ॥

(ऋ० १०।९१।१५)

हे अग्ने। तुम्हारे मुख में जैसे घृत को स्रुक् में डालते हैं, सोम को चमस में डालते हैं उसी प्रकार हवि डालते हैं।

उपमान—स्रुचिघृतं, चम्वी सोमः, उपमेय—अग्ने ते आस्ये, साधारण धर्म—हविः अहावि, सादृश्यवाचक—२ इव है।

१ न १ इव—

सखे सखायमभ्या ववृत्स्वाशुं न चक्रं रथ्येव रंह्यास्मभ्यं दस्म रंह्या ॥

(ऋ० ४।१।३)

हे मित्र (अग्ने !) वेगवान् अश्व जिस प्रकार रथ-चक्र को प्रेरित करता है, वेगवान् अश्व जिस प्रकार वीर द्वारा प्रेरित होते हैं उसी प्रकार अपने मित्र वरुण को हमारी ओर प्रेरित करो।

उपमान—आशु चक्रं, रथ्या रंह्या, उपमेय—दस्म सखे सखायं, साधारण धर्म—अभि आववृत्स्व, सादृश्यवाचक—१ न १ इव है। भूतोपमा, द्रव्योपमा है।

१ यथा १ इव—

आ सवं सवितुर्यथा भगस्येव भुजिं हुवे। अग्निं समुद्रवाससम् ॥

(ऋ० ८।१०२।६)

सूर्योदय के समान और भगदेव के भोग के समान बड़वाग्नि का आह्वान करता हूँ।

उपमान—सवितु सवं, भगस्य भुजि, उपमेय—अग्निं, साधारण धर्म—आ हुवे, सादृश्यवाचक—१ इव १ यथा है। कर्मोपमा, द्रव्योपमा है।

१ न १ वाचकलुप्ता—

अतिथिं मानुषाणां पितुर्न यस्यासया। अमी च विश्वे अमृतास आ वयो हव्यादेवेष्वा वयः ॥

(ऋ० १।१२७।८)

मनुष्यों के लिए अतिथि के समान जिस (अग्नि) के समीप में सभी देवता हवि भक्षण के लिये उसी प्रकार आते हैं जैसे पुत्र पिता के पास अन्न के लिये जाता है।

उपमान—अतिथि, पितुः वयः, उपमेय—यस्य आसया, साधारण धर्म—वयः आ, सादृश्यवाचक—१ वाचकलुप्ता १ न है। यहाँ १ साधारण धर्म का लोप है।

तमिद्दोषा तमुषसि यविष्ठमग्निमत्यं न मर्जयन्त नरः।
निशिशाना अतिथिमस्य योनौ दीदाय शोचिराहुतस्य वृष्णः ॥

(ऋ० ७।३।५)

मनुष्य अश्व के समान परिष्कृत, युवतम, कामना पूर्ण करनेवाले अग्नि की अतिथि के समान परिचर्या करते हैं।

उपमान—अत्यं, अतिथि, उपमेय—अग्निम्, साधारण धर्म—अहुतस्य वृष्णः मर्जयन्त, सादृश्यवाचक-१ न १ वाचकलुप्ता है। १साधारण धर्म का लोप है। भूतोपमा है।

२ उपमेय १ उपमान वाली मालोपमा—

निम्नलिखित १५ ऋचाओं में २ उपमेय २ उपमान, २ साधारण धर्म का प्रयोग हुआ है—

२ न—

स हिशर्धो न मारुतं तुविष्वणिरप्नस्वतीषूर्वरास्विष्टनि-
रार्तनास्विष्टनिः। आदद्धव्यान्यादिर्यज्ञस्य केतुरर्हणा।
अध स्मास्य हर्षतो हृषीवतो विश्वे जुषन्त पन्थां नरः शुभे न पन्थाम्॥

(ऋ० १।१२७।६)

वह (अग्नि) बलशाली वायु के समान बहुत जोर से गर्जना करता है। इसके मार्ग पर कल्याण-प्राप्ति के लिये सारे देव उसी प्रकार चलते हैं जैसे मनुष्य कल्याण-प्राप्ति के लिये उत्तम मार्ग पर चलते हैं।

उपमान—मारुतं शर्धः, नरः पन्थाम्, उपमेय—सः, विश्वे, साधारण धर्म—तुविष्वणिः, शुभेजुषन्त, सादृश्यवाचक—२ न है।

त्वमग्ने सहसा सहन्तमः शुष्मिन्तमो जायसे देवतातये रयिर्न देवतातये

शुष्मिन्तमो हि ते मदो द्युम्निन्तम उतक्रतुः।
अध स्मा ते परि चरन्त्यजर श्रुष्टीवानो नाजर॥

(ऋ० १।१२७।६)

हे अग्ने! जैसे देवों के यज्ञ के लिये धन उत्पन्न होता है उसी प्रकार तेरा जन्म यज्ञों की रक्षा करने के लिए हुआ है।

दूत के समान सभी (मनुष्य) तुम्हारी सेवा करते हैं।

उपमान—देवतातयेरयिः, श्रुष्टीवानः, उपमेय—अग्नेत्वम्, मनुष्य—उपमेय का लोप है। साधारण धर्म—देवतातये जायसे, परिचरन्ति, सादृश्यवाचक—२ न है।

प्र वो महे सहसा सहस्वत उषर्बुधे पशुषे नाग्नये स्तोमो बभूत्वग्नये।
प्रति यदीं हविष्मान्विश्वासु क्षासु जोगुवे।
अग्रे रेभो न जरत ऋषूणां जूर्णिर्होत ऋषूणाम्॥

(ऋ० १।१२७।१०)

पशुदाता को याचक की स्तुति के समान तुम्हारी स्तुतियाँ अग्नि को प्रसन्न करती हैं। हे कुशल होता तुम धनवानों के गायक स्तोता के समान अग्नि की प्रशंसा करते हो।

उपमान—पशुषे, ऋषूणाम् रेभः, उपमेय—वः स्तोमः, होतः, साधारण धर्म—प्रबभूतु, जरत, सादृश्यवाचक—२ न है।

वैश्वानराय धिषणाभृतावृधे घृतं न पूतमग्नये जनामसि।
द्विता होतारं मनुषश्च वाघतो धिया रथं न कुलिशः समृण्वति।

(ऋ० ३।२।१)

वैश्वानर अग्नि के लिये घी के समान पवित्र स्तुति प्रकट करते हैं। मनुष्य अग्नि को अपनी बुद्धि से उसी प्रकार संवारते हैं जैसे बढ़ई रथ को।

उपमान—घृतं, कुलिशः रथं, उपमेय—धिषणां, मनुषः होतारं, साधारण धर्म—पूतं, संऋष्वति, सादृश्यवाचक—२ न है।

२ इव—

वेदिषदे प्रियधामाय सुद्युते धासिमिव प्र भरा योनिमग्नये।
वस्त्रेणेव वासया मन्मना शुचि ज्योतीरथं शुक्रवर्णं तमोहनम्॥

(ऋ० १।१४०।१)

(हे अध्वर्यु !) अग्नि के लिये अन्न के समान ही स्थान को विशेष रूप से तैयार करो और स्तोत्रों से वस्त्र के समान ढक दो।

उपमान—धासिम् वस्त्रेण, उपमेय अग्नये योनिम् मन्मना, साधारण धर्म—प्रभर, वासय, सादृश्यवाचक—२ इव है। द्रव्योपमा है।

१ न १ इव—

वृहती इव सूनवे रोदसी गिरो होता मनुष्यो न दक्षः।
स्वर्वते सत्यशुष्मायपूर्वीर्वैश्वानराय नृतमाय यह्वीः॥

(ऋ० १।५९।४)

पुत्र के समान वैश्वानर अग्नि के लिये द्यावा पृथ्वी विस्तृत हो गई, मनुष्य के समान दक्ष होता अग्नि के लिये स्तुतियाँ गाते हैं।

उपमान—सूनवे, मनुष्यः, उपमेय—वैश्वानराय, दक्षः होता, साधारण धर्म—वृहती पूर्वीः यह्वीः गिरः सादृश्यवाचक—१ इव १ न है। प्रथम के साधारण धर्म का लोप है। द्रव्योपमा है।

पव्येव राजन्नघशंसमजर नीचा नि वृश्च वनिनं न तेजसा॥

(ऋ० ६।८।५)

हे जरारहित अग्ने ! वज्र के समान अपने तेज से वृक्ष के समान अनर्थकारी शत्रुओं को नष्ट कर दो।

उपमान—पव्य, वनिनं, उपमेय—तेजसा, अघशंसम् साधारण धर्म—नीचा निवृश्च, सादृश्यवाचक—१ इव १ न है। प्रथम साधारण धर्म का लोप है। द्रव्योपमा है।

यस्य ते अग्ने अन्ये अग्नय उपक्षितो वया इव।
विपो न द्युम्ना नि युवे जनानां तव क्षत्राणि वर्धयन्॥

(ऋ० ८।१९।३३)

हे अग्ने ! अन्य अग्नि तुम्हारी शाखा के समान समीप में स्थित रहते हैं। तुम्हारे बल को स्तुति द्वारा बढ़ाते हुए स्तुति के समान यश प्राप्त करें।

उपमान—वया, विपः, उपमेय—अन्ये अग्नय, द्युम्ना, साधारण धर्म—उपक्षितः, नियुवे, सादृश्यवाचक—१ इव १ न है। द्रव्योपमा है।

तनूत्यजेव तस्करा वनर्गू रशनाभिर्दशभिरभ्यधी ताम्।
इयस्ते अग्ने नव्यसी मनीषा युक्ष्वा रथं न शुचयद्भिरंगैः॥

(ऋ०१।१०।४।६)

हे अग्ने! चोरी में भरने के लिये कृत संकल्प, सर्वस्व हरणकर्त्ता चोर के समान यह स्तुति प्रस्तुत करता हूँ। हे अग्ने! अपने सर्वप्रकाशक तेज से रथ के समान यज्ञ से सम्बद्ध होओ।

उपमान—तनूत्यजा तस्करा, रथं, उपमेय—इयं मनीषा, अग्ने, साधारण धर्म—अभ्यधीताम् शुचयद्भिरंगैः युक्ष्व, सादृश्यवाचक—१ इव, १ न है। हीनोपमा द्रव्योपमा है।

अग्नेः पूर्वे भ्रातरो अर्थमेतं रथीवाध्वानमन्वावरीवुः।
तस्माद्भिया वरुण दूरमायं गौरो न क्षेप्नोरबिजे ज्यायाः॥

(ऋ० १०।५१।६)

हे अग्ने! मेरे अग्रज जैसे रथी मार्ग को पार कर लेता है उसी प्रकार नष्ट हुए, अतः मैं धनुष की प्रत्यंचा से गौर पशु के समान उस (मृत्यु) से डरता हूँ।

उपमान—रथी अध्वानम् क्षेप्नोः ज्यायाः गौरो, उपमेय—पूर्वे भ्रातरः, तस्माद्भिया, साधारण धर्म—अन्वावरीवुः, अबिजे, सादृश्यवाचक—१ इव, १ न है। भूतोपमा, द्रव्योपमा है।

१ न १ वत्—

विश्वानि नो दुर्गहा जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिपर्षि।
अग्ने अत्रिवन्नमसा गृणानोऽस्माकं बोध्यविता तनूनाम्॥

(ऋ० ५।४।९)

हे अग्ने! नौका द्वारा सिंधु के समान हमें कठिनाइयों से पार करो। अत्रि के समान स्तोत्रों से हम तुम्हारी स्तुति करते हैं।

उपमान—नावा सिन्धुं, अत्रि, उपमेय—नः दुरिता, साधारण धर्म—अतिपर्षि, तमसा गृणा नः सादृश्यवाचक—१ न १ वत् है। द्वितीय उपमेय—हम का लोप है १ सिद्धोपमा है।

१ यथा १ इव—

दृळहा चिदस्मा अनु दुर्यथा विदे तेजिष्ठाभिररणिभिर्दाष्ट्यवसेऽग्नये दाष्ट्यवसे
प्र यः पुरूणि गाहते तक्षद्वनेव शोचिषा।
स्थिरा चिदन्ना नि रिणात्योजसा नि स्थिराणि चिदोजसा॥

(ऋ० १।१२७।४)

जिस प्रकार ज्ञानियों को धन दिया जाता है उसी प्रकार अग्नि में आहुति दी जाती है। यह (अग्नि) जंगल में प्रविष्ट होकर जैसे वृक्षों को नष्ट करता है उसी प्रकार अपने तेज से स्थिर शत्रु को भी नष्ट करता है।

उपमान—विदेदुः, तक्षद् वना, उपमेय—अग्नये, स्थिराणि, साधारण धर्म—अनुदाष्टि, नि रिणाति, सादृश्यवाचक—१ यथा १ इव है। कर्मोपमा, द्रव्योपमा है।

अध स्म यस्यार्चयः सम्यक् संयन्ति धूमिनः।
यदीमह त्रितो दिव्युप ष्मातेव धमति शिशीते ष्मातरी यथा ॥

(ऋ० ५।९।५)

जब लुहार के समान त्रितऋषि इस (अग्नि) को प्रज्वलित करता है तब धौंकनी के समान इसकी ज्वालायें तीक्ष्ण होती हैं।

उपमान—ष्माता, ष्मातरी, उपमेय—त्रितः, यस्य अर्चयः साधारण धर्म—धमति, शिशीते, सादृश्यवाचक—१ इव, १ यथा है। द्रव्योपमा, कर्मोपमा है।

१ न १ वाचकलुप्ता—

स जायमानः परमे व्योमन्वायुर्न पाथः परि पासि सद्यः।
त्वं भुवना जनयन्नभि क्रन्नपत्याय जातवेदो दशस्यन्॥

(ऋ० ७।५।७)

हे जातवेद अग्ने! तुम वायु के समान शीघ्र सोमपान करते हो, सन्तान के समान (पालनीय यजमान) की कामनाओं को पूर्ण करते हुए विद्युत्रूप में गर्जना करते हो।

उपमान—वायुः, अपत्याय, उपमेय—जातवेदः, साधारण धर्म—पाथः परिपासि, दशस्यन् अभिक्रन्, सादृश्यवाचक १ न १ वाचकलुप्ता है। उपमेय—यजमान का लोप है।

१ वत् १ वाचकलुप्ता—

तदग्ने चक्षुः प्रति धेहि रेभे शफारुजं येन पश्यसि यातुधानम्।
अथर्ववज्ज्योतिषा दैव्येन सत्यं धूर्वन्तमचितं न्योष॥

(ऋ० १०।८७।१२)

(हे अग्ने! शफ के समान नखवाले राक्षस को अपने तेज से अथर्वा के समान जला दो।

उपमान—शफा, अथर्व उपमेय—यातुधानम् अग्ने, साधारण धर्म—रुजं, न्योष, सादृश्यवाचक। वाचकलुप्ता, १ वत् है १ सिद्धोपमा है।

उपमेयलुप्ता, दो उपमान वाली मालोपमा—

२ न—

निम्नलिखित २२ ऋचाओं में उपमान २ साधारण धर्म हैं—

अत्यो नाज्मन्त्सर्गप्रतक्तः सिन्धुर्न क्षोदः क ईं वराते ।।

(ऋ० १।६५।३)

जैसे वीर द्वारा प्रेरित अश्व युद्ध-स्थल में जाता है, नदी जैसे किनारों को तोड़ती हुई आगे बढ़ती है उसी प्रकार यह अग्नि है। इसको कौन रोक सकता है।

उपमान—अत्यः, सिन्धुः, साधारण धर्म—अज्मन् सर्गप्रतक्तः, क्षोदः सादृश्यवाचक २ न है। उपमेय का लोप है। भूतोपमा है।

सोमो न वेधा ऋतप्रजातः पशुर्न शिश्वा विभुर्दूरेभाः ।।

(ऋ० १।६५।१०)

(अग्नि) सोम के समान वृद्धिकारक, पशु के समान चंचल है।

उपमान—सोमः, पशुः, साधारण धर्म—वेधा, शिश्वा, सादृश्यवाचक—२ न है। उपमेय का लोप है। भूतोपमा है।

तक्वा न भूर्णिर्वना सिषक्ति पयो न धेनुः शुचिर्विभावा ।।

(ऋ० १।६६।२)

(अग्नि) शिकारी पशु के समान पोषण करनेवाला, गौ के समान हितकारी है।

उपमान—तक्वा, धेनुः, साधारण धर्म—भूर्णि, पयः, सादृश्यवाचक—२ न है। उपमेय का लोप है। भूतोपमा है।

दाधार क्षेममोको न रण्वो यवो न पक्वो जेता जनानाम् ।।

(ऋ० १।६६।३)

(अग्नि) गृह के समान रमणीय, अन्न के समान परिपक्व है।

उपमान—ओकः, यवः, साधारण धर्म—रण्वः पक्वः, सादृश्यवाचक—२ न है। उपमेय का लोप है।

ऋषिर्न स्तुभ्वा विक्षु प्रशस्तो वाजी न प्रीतो वयो दधाति ।।

(ऋ० १।६६।४)

(अग्नि) ऋषि के समान स्तुति करनेवाला, प्रसन्न मनवाले अश्व के समान सबके हित के लिये अपना जीवन अर्पित करता है।

उपमान—ऋषिः प्रीतः वाजी, साधारण धर्म—स्तुभ्वा, वयः दधाति, सादृश्यवाचक—२ न है। उपमेय का लोप है। भूतोपमा है।

चित्रो यदभ्राट् श्वेतो न विक्षु रथो न रुक्मी त्वेषः समत्सु ।

(ऋ० १।६६।६)

शुभ्र वर्णवाले अश्व के समान विचित्र दीप्तियुक्त (अग्नि) युद्ध में स्वर्णभूषित रथ के समान प्रदीप्त होता है।

उपमान—श्वेतः, रथः, साधारण धर्म—चित्रः, विक्षु रुक्मी, सादृश्यवाचक—२ न है। उपमेय का लोप है। भूतोपमा है।

क्षेमो न साधुः क्रतुर्न भद्रो भुवत् स्वाधीर्होता हव्यवाट् ॥

हविर्वाहक (अग्नि) रक्षक के समान हितकारी, बुद्धि के समान कल्याणकारी है।

उपमान—क्षेमः, क्रतुः, साधारण धर्म—साधुः, भद्रः, सादृश्यवाचक—२ न है। उपमेय का लोप है।

शुक्रः शुशुक्वाँ उषो न जारः पप्रा समीची दिवो न ज्योतिः ॥

(ऋ० १।६९।१)

(अग्नि) उषाप्रेमी सूर्य के समान शुभ्र वर्ण, प्रकाशमान सूर्य के समान अपने तेज से द्यावा पृथ्वी को पूर्ण करता है।

उपमान—उषः जारः, दिवः ज्योतिः, साधारण धर्म—शुक्रः, समीची पप्रा, सादृश्यवाचक—२ न है। उपमेय का लोप है। अधिकोपमा है।

पुत्रो न जातो रण्वो दुरोणे वाजी न प्रीतो विशो वि तारीत् ॥

(ऋ० १।६६।५)

(अग्नि) उत्पन्न पुत्र के समान सुखदायक, प्रसन्न अश्व के समान प्रजाओं को दुःख से पार लगाता है।

उपमान—जातः पुत्रः, प्रीतः वाजी, साधारण धर्म—रण्वः विशः वितारीत्, सादृश्यवाचक—२ न है। उपमेय का लोप है। भूतोपमा है।

आदीं भगो न हव्यः समस्मदा वोलहुर्न रश्मीन्त्समयंस्त सारथिः।

(ऋ० १।१४४।३)

जैसे पूजनीय भगदेव अपनी हवि को ग्रहण करता है, सारथि अश्व की लगाम को ग्रहण करता है उसी प्रकार (अग्नि) हमारी घृतधारा को स्वीकार करता है।

उपमान—भगः, सारथिः वोलहुः, साधारण धर्म-हव्यः रश्मीन्, सादृश्यवाचक—२ न है। उपमेय का लोप है।

यदी मन्थीन्त बाहुभिर्वि रोचतेऽश्वो न वाज्यरुषो वनेष्वा।
चित्रो न यामन्नश्विनोरनिवृतः परि वृणक्त्यश्मनस्तृणा दहन् ॥

(ऋ० ३।२९।६)

(अग्नि) वन में शीघ्रगामी अश्व के समान प्रकाशित होता है, अश्विनीकुमारों के शीघ्रगामी रथ के समान शोभा को धारण करता है।

उपमान—वाजी अश्वः, अश्विनोः यामन्, साधारण धर्म—अरुषः आ विरोचते, चित्रः, सादृश्यवाचक—२ न है। उपमेय का लोप है। भूतोपमा है।

प्रियं दुग्धं न काम्यमजामि जाम्योः सचा ।
धर्मो न वाजजठरोऽदब्धः शश्वतो दभः ॥

(ऋ० ५।१६।४)

(अग्नि) दूध के समान काम्य, यज्ञ के समान हवि अन्न को अपने अन्दर रखनेवाला है ।

उपमान—दुग्धं, धर्मः, साधारण धर्म—काम्यम् वाजजठरः, सादृश्यवाचक—२ न है । उपमेय का लोप है ।

प्र मातुः प्रतरं गुह्यमिच्छन्कुमारो न वीरुधः सर्पदुर्वीः ॥
ससं न पक्वमविदच्छुचन्तं रिरिह्वांसं रिप उपस्थे अन्तः ॥

(ऋ० १०।७६।३)

(अग्नि) स्तन्यपान के लिये जानु के सहारे आगे बढ़नेवाले शिशु के समान, पके अन्न के समान सूखे (वृक्ष को) पृथ्वी की गोद में प्राप्त करता है ।

उपमान—कुमारः ससं, साधारण धर्म—मातुः उर्वीः वीरुधः प्रसर्पत् पक्वं शुचन्तं अविदत्, सादृश्यवाचक—२ न है । यहाँ अग्नि और वृक्ष ही उपमेय हैं और दोनों का लोप है ।

१ इव १ न—

जामिः सिन्धूनां भ्रातेव स्वस्रामिभ्यान्न राजा वनान्यत्ति ॥

(ऋ० १।६५।७)

बहन के लिये भाई जैसे हितकारी होता है उसी प्रकार नदियों का मित्र (अग्नि) धनिकों के धन अहीन राजा के समान वनों को खा जाता है ।

उपमान—भ्राता स्वस्रां, इभ्यान् राजा, साधारण धर्म—सिन्धूनां जामिः, अत्ति, सादृश्यवाचक—१ इव १ न है । उपमेय—अग्नि का लोप है । द्रव्योपमा है ।

दुरोकशोचिः क्रतुर्नित्यो जायेव योनावरं विश्वस्मै ॥

(ऋ० १।६६।५)

नित्य शुभ कर्म करनेवाली बुद्धि के समान कर्मशील, घर में सुखदायी स्त्री के समान (अग्नि) सबका कल्याण करता है ।

उपमान—क्रतुः, योनौ जाया, साधारण धर्म—नित्यः विश्वस्मै अरं, सादृश्यवाचक १ न १ इव है । उपमेय अग्नि का लोप है । द्रव्योपमा है ।

सेनेव सृष्टामं दधात्यस्तुर्न दिद्युत् त्वेषप्रतीका ॥

(ऋ० १।६६।७)

(अग्नि) अस्त्र के समान आक्रमणकारी, बाण के समान भयंकर दीप्ति-वाला है ।

उपमान—सेना, अस्तुः, साधारण धर्म—सृष्टा, विद्युत् सादृश्यवाचक—१ इव, १ न है। उपमेय—अग्नि का लोप है। द्रव्योपमा है।

कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवाँ इभेन।
तृष्वी मनुप्रसितिं द्रूणानोऽस्तासि विध्य रक्षसस्तपिष्ठैः॥

(ऋ० ४।४।१)

(हे अग्ने) जैसे व्याधा जाल फैलाता है उसी प्रकार अपने बल को विस्तृत करो, हाथी पर चढ़कर जानेवाले बलवान राजा के समान गमन करो।

उपमान—प्रसितिं, अभवान् राजा इभेन, साधारण धर्म—पृथ्वीं, याहि, सादृश्यवाचक—१ न १ इव है। उपमेय—अग्नि का लोप है, द्रव्योपमा है।

मानो देवानां विशः प्रस्नातीरिवोस्राः। कृशं न हासुरघ्न्याः॥

(ऋ० ८।७५।८)

पयस्विनी गौ के समान प्रजा का कल्याण करनेवाला (अग्नि) छोटे बछड़े को कभी भी नहीं छोड़नेवाली गौ के समान हमारा त्याग न करे।

उपमान—उस्राः, अघ्न्याः कृशं, साधारण धर्म—विशः प्रस्नातीः, मा नः हासुः, सादृश्यवाचक—१ न १ इव है। उपमेय—अग्नि का लोप है। भूतोपमा और द्रव्योपमा है।

१ इव १ वत्—

शुचिः ष्म यस्मा अत्रिवत् प्रस्वधितीव रीयते॥

(ऋ० ५।७।क)

(ऋषिगण) जिस अग्नि में अत्रि के समान हवि देते हैं, जो तलवार के समान लकड़ियों को फाड़ देता है। (भस्म कर देता है।)

उपमान—अत्रि, स्वधितिः, साधारण धर्म—प्र, रीयते, सादृश्यवाचक—१ वत्, १ इव है। यहाँ ऋषि और अग्नि दो उपमान हैं, दोनों का लोप है। द्रव्योपमा, सिद्धोपमा है।

अपि वृश्च पुराणवद्व्रततेरिव गुष्पितमोजो दासस्य दम्भय॥

(ऋ० ८।४०।६)

(हे इन्द्राग्नी) पूर्वज पुरुष के समान दास के तेज का दमन करो, जैसे लता की निकली, शाखायें काट डाली जाती हैं उसी प्रकार शत्रुओं का विनाश करो।

उपमान—पुराण, व्रततेः, साधारण धर्म—दासस्य ओज दम्भय, गुष्पितम् वृश्च, सादृश्यवाचक—१ वत्, १ इव है। उपमेय—इन्द्राग्नी का लोप है। सिद्धोपमा और द्रव्योपमा है।

२ वाचक लुप्ता—

अमूरः कविरदितिर्विवस्वान्त्सुसंसन्मित्रो अतिथिः शिवो नः ।

(ऋ० ७।९।३)

(अग्नि) सूर्य के समान दीप्तिमान, अतिथि के समान हितकारी है ।

उपमान—मित्रः, अतिथिः, साधारण धर्म—विवस्वान्, शिवः, सादृश्यवाचक और उपमेय—दोनों का लोप है । अधिकोपमा है ।

२ वत्—

केवल । ऋचा में २ उपमान । साधारण धर्म का प्रयोग हुआ है—

और्वभृगुवच्छुचिमप्नवानवदा हुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ।।

(ऋ० ८।१०२।४)

(मैं ऋषि) और्वभृगु और अप्नवान के समान बड़वाग्नि का आह्वान करता हूँ । उपमान—और्वभृगु, अप्नवान, साधारण धर्म—आ हुवे, सादृश्यवाचक—२ वत् है । उपमेय—मैं ऋषि का लोप है । सिद्धोपमा है ।

इस प्रकार उपर्युक्त ४८९ ऋचाओं में उपमा के जिन भेद-प्रभेदों का स्वरूप प्रतिपादित किया गया है वे प्राचीनतम रूप होने पर भी सौन्दर्य और उत्कृष्टता की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ हैं ।

—:०:—

पंचम अध्याय

# उपमानों के औचित्य का विवेचन

जो वस्तु जिसके अनुरूप होती है उसे उचित कहते हैं और उचित का भाव "औचित्य" कहलाता है—

"उचितं प्राहुराचार्याः सदृशं किल यस्य यत् ॥
उचितस्य च यो भावस्तदौचित्यं प्रचक्षते ॥"

(औ० वि० च० ७)

औचित्य से सम्बद्ध सिद्धान्तों और तत्सम्बद्ध शास्त्रों की रचना बहुत बाद में हुई है। ऋग्वेद विश्ववाङ्मय का प्राचीनतम ग्रन्थ है। इसकी रचना उस काव्य-युग में हुई, जब ऋचाओं के द्रष्टा ऋषिगणों के सामने नियम और सिद्धान्तों का कोई बन्धन नहीं था। उनके पीछे साम्य-योजना की कोई साहित्यिक परम्परा नहीं थी। प्रकृति के निकटतम सम्पर्क में रहते हुए उन्होंने जिस परम सत्य का साक्षात्कार किया उसे सरलतम रूप में प्रकट कर दिया। अपने कथन की पुष्टि के लिये यदि प्राकृतिक वस्तुओं की आवश्यकता हुई तो उसे भी उपमान के रूप में ग्रहण कर लिया। मानव-भावना की भाषागत अभिव्यक्ति का प्राचीनतम रूप होने के कारण उनके अनौचित्य का विश्लेषण असंगत प्रतीत होता है तथापि यहाँ प्राचीनतम पृष्ठ-भूमि को दृष्टि में रखते हुए औचित्यानौचित्य के विवेचन का प्रयत्न किया जा रहा है।

अग्नि-सूक्तस्थ ऋचायें अग्निदेव से सम्बद्ध स्तुतियाँ हैं। इनमें प्रधानतः अग्नि ही प्रस्तुत अर्थात् वर्ण्य है। अग्नि की गणना देवों के अन्तर्गत होने के कारण सूर्य, इन्द्र, वरुण आदि देवों से सम्बद्ध उपमानों को छोड़कर शेष सभी उपमान अपकृष्ट ही हो सकते हैं, किन्तु ऋषिगणों के सामने उपमानों के उत्कृष्ट-अपकृष्ट होने का कोई महत्त्व नहीं है। उनके लिये यदि किसी बात का महत्त्व है तो वह है उपमानों की उपयुक्तता का। अपनी बात को सरल और सुन्दरतम रूप में प्रस्तुत करने के लिये उन्होंने अपने समय ज्ञात जगत् से उपमानों का यथेच्छ संग्रह किया है।

प्राप्त उपमानों में सबसे अधिक उपमान सूर्य से सम्बद्ध हैं। सूर्य के विविध रूप के साथ अग्नि की तुलना की गई है। जैसे—अग्नि सूर्य के समान तेजस्वी, प्रकाशमान, रक्षक, अन्धकारनाशक, द्यावापृथ्वी को प्रकाशित करनेवाला, बल को धारण करनेवाला, कल्याणकारी दृष्टियुक्त और हितकारी है। ऋषिगणों के दैनिक जीवन में यज्ञ, भोजन, सुरक्षा आदि प्रत्येक दृष्टि से सूर्य के समान ही अग्नि का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने अपने गृह में यज्ञाग्नि के रूप में प्रदीप्त

अग्नि के कोमलतम रूप से लेकर पलभर में जंगलों को भस्मसात् कर देनेवाले दावानल के विकराल रूप का भी दर्शन किया होगा। अग्नि के इस महान् तेज को अभिव्यक्त करने के लिए सूर्य से बढ़कर कोई दूसरा उपमान उपयुक्त भी नहीं हो सकता है। अतः तेज-पुंज के रूप में वर्तमान अग्नि की सूर्य से की गई तुलना सर्वथा उपयुक्त है।

२० ऋचाओं में अग्नि को वायु के समान बलवान, शीघ्रगन्ता, सर्वव्यापक और बहुत जोर से गर्जन करनेवाला कहा गया है। अग्नि और वायु दोनों में ऊपर लिखित चारों गुण समान रूप में वर्तमान हैं। भीषण झंझावात के समय की वायु की ध्वनि से दावाग्नि के रूप में स्थित अग्नि की ध्वनि की तुलना प्रभाव-साम्य और ध्वनि-साम्य दोनों ही दृष्टि से अत्यन्त सुन्दर है। सूर्य और वायु के अतिरिक्त इन्द्र, वरुण, मरुत् आदि देवगणों के साथ भी अग्नि की तुलना की गई है जिनकी गणना उत्कृष्ट उपमानों के अन्तर्गत की जा सकती है।

ऋ० १०।९१।४ और १०।९१।५ में प्रातःकाल में घर-घर में यज्ञ के लिये प्रदीप्त अग्नि को उषाकाल की कोमल किरणों और नक्षत्रों से प्रकाशमान आकाश के समान कहा गया है। यहाँ यदि यज्ञ रूप अग्नि के सीमित रूप को उपमेय माना जाय तो उपमान की तुलना में यह अत्यन्त हीन होगा किन्तु यहाँ सर्वव्यापी अग्नि के प्रकाशनशील गुण से तुलना की गई है जो सर्वथा उपयुक्त है।

ऋ० १०।४५।४ में गर्जन करते हुए बादल के साथ अग्नि का ध्वनि-साम्य स्थापित किया गया है जो अत्यन्त सुन्दर है।

ऋ० १।७३।८ और ६।१६।३८ में अग्नि की तुलना छाया से की गई है। छाया का स्वाभाविक गुण शीतलता है और अग्नि का उष्णता। अतः दोनों का गुण-साम्य परस्पर विरुद्ध प्रतीत होता है किन्तु वस्तुतः विरोध है नहीं, कारण जैसे छाया शरणागत के ताप-जनित कष्ट को दूर कर आनन्दित करती है उसी प्रकार अग्नि उष्ण होने पर भी शरणागत व्यक्ति का अनेक प्रकार से कल्याण करता है। अतः यहाँ अग्नि के बाह्य रूप का नहीं अपितु उसके कल्याणकारिता रूप गुण से साम्य दिखाया गया है जो परस्पर विरुद्ध प्रतीत होने पर भी विरुद्ध नहीं है।

ऋ० ६।५।२ और ८।३९।७ में अग्नि को पृथ्वी के समान सभी प्राणियों और धन को धारण करनेवाला कहा गया है। पृथ्वी की धारणा-शक्ति को तो सभी देखते और अनुभव करते हैं किन्तु अग्नि की धारणा-शक्ति का अव्यक्त होने के कारण केवल अनुभव किया जा सकता है। यहाँ मूर्त का अमूर्त के साथ दिखाया गया साम्य अत्यन्त सुन्दर है।

ऋ० १।४४।१२ में समुद्र को प्रचण्ड ध्वनि के साथ अग्नि का ध्वनि-साम्य स्थापित किया गया है और विकराल तरंगों के साथ अग्नि-ज्वाला के दुर्द्धर्ष रूप की समता दिखाई है जो उत्कृष्ट कोटि की है।

ऋ० २।४।५ में अग्नि के अटल नियमों को जाननेवाले विद्वान् की तुलना प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त करनेवाली वृक्ष की शाखाओं से की गई है। यहाँ वृक्ष-शाखा और ज्ञाता-विद्वान् की समृद्धि का जो परस्पर वृद्धि-साम्य स्थापित किया गया है वह अत्यन्त मनोहारी है।

ऋ० ४।४।४ और ७।६४।१२ में कहा गया है कि अग्नि अपनी तीक्ष्ण ज्वालाओं से भयंकर शत्रु को शुष्क घास और कच्चे घड़े के समान नष्ट कर देता है। यहाँ अग्नि के विशिष्ट तेज का प्रतिपादन किया गया है।

ऋ० २।३५।१ में अग्नि की पीताभ-ज्वालाओं की तुलना स्वर्ण-रचित आभूषण और स्वर्ण से की गई है। स्वर्ण और ज्वाला दोनों के स्वरूप में अद्भुत समानता है। यह रूप-साम्य का उत्कृष्ट उदाहरण है।

ग्राम्य पशुओं में सबसे अधिक उपमान अश्व से सम्बद्ध हैं। वेग के वर्णन में जो स्थान आकाश में श्येन पक्षी को दिया गया है वही पृथ्वी पर अश्व को दिया गया है। बल और गति-साम्य के अतिरिक्त अश्व के अन्य रूपों से भी अग्नि की तुलना की गई है—"जैसे रथ में जुता अश्व अपनी पूँछ के बाल को बार-बार कँपाता है उसी प्रकार अग्नि वृक्ष-वनस्पतियों पर अपनी ज्वाला रूप जिह्वा को घुमाता है।" (२।४।४) यहाँ पूँछ और ज्वाला का कंपन रूप क्रिया-साम्य दिखाया गया है जो अत्यन्त मनोहारी है।

ऋ० १।१४८।३ में कहा गया है कि—"रथ में जुते शीघ्रगामी अश्व के समान अग्नि को याज्ञिकगण यज्ञ में सुन्दरता से बढ़ाते हैं।"

याजकगण के बाह्य जीवन के लिये जितना उपयोगी अश्व है उतना ही अग्नि भी है। अतः वे दोनों को समान रूप से बढ़ाते हैं।

ऋ० १।३६।४ में अग्नि और अश्व की धारणाशक्ति की परस्पर तुलना की गई है जो व्यापकता की दृष्टि से अनुचित है कारण अश्व केवल अपने एकमात्र पालक का उपकार करता है जबकि अग्नि सभी याजकों का उपकार करता है अतः व्यापकता की दृष्टि से यह साम्य-योजना उचित नहीं है।

अग्नि के सौम्य और हितकारी रूप की उपमा दुधार गायों से दी गई है। "बछड़ों से मिलने रंभाती हुई गायों का गोठों की ओर जाना" (१।६६।२) वैदिक कवियों का प्रिय और उत्कृष्ट उपमान रहा है।

वन्य पशुओं में प्रसिद्ध उपमान है सिंह (३।२।११) जहाँ-कहीं शौर्य-वीर्य और भीषण गर्जन का प्रसंग आया है वहीं इस भयानक पशु का स्मरण किया गया है। ग्राम्य-पशुओं में यही स्थान वृषभ को प्राप्त है। दीर्घतमा ने अग्नि की उपमा दुर्गम शृंगवाले साँढ़ से दी है (१।१४०।६) अग्नि की गंभीर ध्वनि और बल की तुलना भी वृषभ से की गई है। (१।६४।१०), (१।१४०।६)।

ऋ० ६।८।३ में कहा गया है कि वैश्वानर अग्नि ने द्यावा-पृथ्वी को चमड़े के समान विस्तृत किया है। यहाँ द्यावा-पृथ्वी की तुलना चमड़े से की गई है जो व्यापकता और प्रभाव दोनों ही दृष्टि से हीन प्रतीत होती है।

ऋ० ४।५।३ में ज्ञानियों के ज्ञान की तुलना गोपालक से की गई है जो रूप, गुण, प्रभाव आदि किसी भी दृष्टि से उपयुक्त प्रतीत नहीं होती है।

मानव-निर्मित उपकरणों में से भी उपमानों का भण्डार भरा गया है। इनमें—धन, लोहे के दृढ़ किलों से युक्त नगर (७।३।७), गृह (१।६६।३), स्तंभ (१।५६।१) रथ आदि प्रमुख उपमान हैं। रथ एवं रथ-चक्र ऋग्वेदीय कवियों के प्रसिद्ध उपमान हैं।

ऋ० १।१४१।६ में कहा गया है कि—जैसे रथ का पहिया अरों को व्याप्त करके रहता है उसी प्रकार अग्नि सबको व्याप्त करके रहता है। यहाँ अग्नि की व्यापन-शीलता को बताने के लिये प्रस्तुत चक्र अत्यन्त उपयुक्त है।

ऋ० ७।३।७ में पाप की कठोरता की तुलना लोहे के दृढ़ किले से की गई है जो पाप के अमूर्त रूप को स्पष्ट करने में पूर्ण समर्थ है।

"नौका द्वारा समुद्र पार करने के समान अग्नि हमें पापों से पार करे।" (१।६७।७) यह क्रिया-साम्य का उत्कृष्ट उदाहरण है।

सामाजिक उपकरणों में युद्धोपकरणों से सम्बद्ध उपमान अधिक हैं। अग्नि की उत्पत्ति में अरणी और अंगुलियों का विशेष योगदान रहता है अतः ऋ० ४।६।८ में दस बहिन-रूपी अंगुलियों की तुलना बाण के नुकीले अग्रभाग से की गई है। बाण और अंगुली दोनों के अग्र-भाग में पर्याप्त समानता रहती है, हालाँकि अंगुलियों का अग्र भाग बाण के समान कठोर और तीक्ष्ण दोनों ही नहीं होता है तथापि लक्ष्य-प्राप्ति की दृष्टि से जैसे बाणाग्र शत्रु को बींध कर लक्ष्य प्राप्त कर लेता है उसी प्रकार अंगुलियाँ भी अरणि मन्थन कर अग्नि को प्रदीप्त कर लेती हैं अतः प्रभाव-साम्य की दृष्टि से यह उपमान अत्यन्त सुन्दर है।

बाण के अतिरिक्त परशु, वर्म, गदा, अस्त्र आदि से सम्बद्ध उपमानों का भी प्रयोग किया गया है जो समुपयुक्त हैं।

"मन्थन से उत्पन्न अग्नि को हाथ में धारण किये गये कंकण के समान अध्वर्यु धारण करते हैं। (६।१६।४०) यहाँ अग्नि की तुलना कंकण से की गई है। स्वर्ण-रचित कंकण पीतवर्ण का होता है और यज्ञाग्नि की ज्वाला भी पीत वर्ण की होती है। शोभा और सुख दोनों ही दृष्टि से यज्ञाग्नि भी अध्वर्यु को उतना ही प्रिय होता है जितना स्वर्ण-कंकण। अतः यहाँ कंकण से दी गई उपमा अत्यन्त सुन्दर बन पड़ी है।

भोज्य पदार्थों में घृत, सोम, यव, शहद और दुग्ध आदि के समान अग्नि को क्रमशः पापरहित, वृद्धिकारक, कल्याणकारी, मधुर और काम्य कहा गया है।

मानव समाज से भी नाना प्रकार के उपमान चुने गये हैं। विभिन्न पेशों में रहनेवाले लोग विभिन्न उपमानों का रूप धारण करके आये हैं।

ऋ० १।७३।३ में अनुकूल मित्र से युक्त राजा के समान अग्नि को सबका पालन-कर्त्ता बताया गया है। इसकी तीव्र ज्वाला की तुलना ऐसे वीर पुरुष से की गई है जिसको बंधन में डालना असंभव होता है। (६।६।५) यह दूत के समान हविर्वाहक (८।२३।६) और पिता के समान पालनकर्त्ता (२।१०।१) है।

कल्याणकारी अग्नि के पास पिता के पास पुत्र के आने के समान सभी मनुष्यों का गमन करना अत्यन्त स्वाभाविक है अतः ये सभी उपमान उत्कृष्ट कोटि के हैं।

ऋ० १।७१।१ में अग्नि को प्रसन्न करनेवाली अंगुलियों की तुलना कामना करती हुई पति को प्रसन्न करनेवाली स्त्रियों से की गई है।

ऋ० ६।२।७ में अग्नि को नगर में रहनेवाले वृद्ध हितोपदेष्टा के समान रमणीय और पुत्र के समान रक्षणीय बताया गया है। वृद्ध और बालक के साथ दी गई अग्नि की उपमा बहुत सुन्दर है। यहाँ विशेष बात यह बताई गई है कि यह आत्माग्नि स्वयं अशक्त है अतः दूसरों की सहायता की अपेक्षा करता है जैसे—वृद्ध मनुष्य यद्यपि पूज्य होता है तथापि तरुणों के साथ उसकी शक्ति का कोई मुकाबला नहीं हो सकता। उसी प्रकार यद्यपि बालक सुकुमार होने से सबको प्यारा होता है तथापि तरुणों की अपेक्षा वह अशक्त होता है। अशक्त होने पर भी वृद्ध अपने अनुभव की शक्ति के कारण वंदनीय और बालक सुकुमारता के कारण तथा सभी शक्तियों को बीजवत् अपने अन्दर धारण करने के कारण सबको प्यारा होता है। उसी प्रकार आत्माग्नि भी इस शरीर के जन्म से पहले विद्यमान था अतः शरीर से वृद्ध है और उसकी सम्पूर्ण शक्तियों का विकास होनेवाला है अतः बालकवत् है। आत्माग्नि अपना प्रत्येक कार्य अपनी शक्ति से इन्द्रियों द्वारा करवाता है अतः इन्द्रियों की सहायता की अपेक्षा रहने के कारण वह वृद्ध बालवत् दूसरे की सहायता चाहता है। अग्नि की चिनगारी छोटी होती है। बालकवत् उसकी रक्षा आवश्यक है। अनुकूल परिस्थिति मिलने पर वही चिनगारी दावानल का रौद्र रूप धारण कर लेती है। इसी

प्रकार आत्माग्नि प्रारम्भ में सब शक्तियों को बीज रूप में धारण करता है तथा योग्य माता-पिता, गुरु, वातावरण आदि मिलने पर उचित विकास के कारण वही पूज्य हो जाता है। यहाँ भौतिक अग्नि एवं आत्माग्नि को वृद्ध तथा बालक से की गई तुलना उच्च कोटि की है।

ऋ० १०।१।२ में कहा गया है कि अरणि-मन्थन द्वारा प्रदीप्त अग्नि को अध्वर्यु उसी प्रकार धारण करता है जैसे पिता उत्पन्न शिशु को धारण करता है। नवजात अग्नि और शिशु दोनों को ही संरक्षणीयता की आवश्यकता होती है। कोमलता और असहायता की दृष्टि से दोनों की साम्य-योजना सुन्दर है।

ऋ० ३।१८।१ में अग्नि को मित्र के समान हितैषी तथा १।७३।१ में अतिथि के समान पूज्य कहा गया है। यह गुण-साम्य की दृष्टि से उत्कृष्ट है।

जैसे गोपालक पशुओं को देखता है उसी प्रकार अग्नि रक्षा के लिये सभी जीवों को देखता है। (७।१३।३) यहाँ अग्नि के कल्याणकारी रूप की तुलना गोपालक की कल्याण भावना से की गई है जो सुन्दर है।

ऋ० १०।१४२।४) में अग्नि के लिये नाई को उपमान चुना गया है। जैसे; नाई दाढ़ी मूड़ता है उसी प्रकार हे अग्नि! तुम अनुकूल वात मिलने पर पृथ्वी को मूड़ते हो।"

यहाँ अग्नि की तुलना नाई से की गई है। जहाँ तक रूप एवं गुण का प्रश्न है नाई के साथ अग्नि की कोई तुलना नहीं हो सकती है किन्तु रूप गुण में परस्पर विरोध होने पर भी क्रिया-साम्य और प्रभाव-साम्य की दृष्टि से यह उत्कृष्ट कोटि का उपमान है। कारण जैसे; नाई दाढ़ी, मूँछ को काटकर एकदम साफ कर देता है उसी प्रकार अग्नि जंगलों को जलाकर भस्मसात् कर देता है।

ऋ० १।६५।१, ५।१५।५, और १०।४।६ में अग्नि की उपमा चोर से दी गई है। गुहा में रहनेवाले पशु की चोरी करनेवाले चोर के समान छिपे हुए अग्नि का याजकगण पता लगा लेते हैं। यहाँ चोर के साथ अग्नि की तुलना अनुचित प्रतीत होती है कारण अग्नि के समान चोर का एक भी गुण उत्कृष्ट नहीं माना जा सकता है कारण चोर समाज में अग्नि की अपेक्षा हर दृष्टि से हीन माना जाता है।

ऋ० ५।८६।१ में कहा गया है कि जैसे ज्ञानी वाणी के मर्म को समझ लेता है उसी प्रकार अग्नि दृढ़ एवं तेजस्वी शत्रु-सेना को छिन्न-भिन्न कर देता है। यहाँ ज्ञानी व्यक्ति की अग्नि के साथ की गई तुलना तो ठीक है किन्तु वाणी के मर्म का शत्रु-सेना के विनाश से की गई तुलना पाठक के सामने कोई मूर्त रूप उपस्थित नहीं कर पाती है अतः अनुचित प्रतीत होती है।

मूर्त उपमानों के अतिरिक्त कुछ अमूर्त उपमानों का भी प्रयोग किया गया है जैसे—अग्नि आत्मा के समान सुखकर (१।७३।२), मन के समान वेगवान् (१।७१।९), बुद्धि के समान कर्मशील (१।६६।५), जीवन के समान प्राणवान् (१।६६।१), स्तुति के समान तेजस्वी (८।१९।३३) और धन की अभिवृद्धि के समान रमणीय (१।६५।५) है।

इस प्रकार अग्नि-सूक्तस्थ कुछ ही उपमान ऐसे हैं जो भद्दे प्रतीत होते हैं अन्यथा सभी उपमान अग्नि के प्रख्यात गुणों को प्रकट करने में पर्याप्त समर्थ हैं और सौन्दर्य की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं।

# विभिन्न ऋषियों द्वारा प्रयुक्त उपमाओं की विशिष्टता

ऋग्वेदस्थ अग्नि-सूक्तों के साक्षात्कर्त्ता ७२ ऋषियों ने उपमाओं का प्रयोग किया है जिनका मण्डलानुसार क्रमिक-विवरण इस प्रकार है—

## प्रथम मण्डल

(१) मधुच्छन्दा वैश्वामित्र—

ऋ० १।१।९

सामाजिक उपमान— १ (पिता)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१।१।९)

सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१।

दैविक, प्राकृतिक एवं भावात्मक उपमानों का प्रयोग नहीं किया गया है।

(२) आजीगर्त्ति शुनःशेप वैश्वामित्र देवरात—

ऋ०—१।२६।३, १।२६।४, १।२६।६, १।२७।१, १।२७।६, १।२७।१२।

दैविक उपमान— १ (देवं देवं)

प्राकृतिक उपमान— २ (अश्वं, ऊर्णां)

सामाजिक उपमान— ५ (पिता, अग्निः, सखा, मनुषः, रेवान्)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—५ (१।२६।४, १।२६।६, १।२७।१, १।२७।६, १।२७।१२)

तीन उपमानवाली मालोपमा—१(१।२६।३)

सूक्त—२, ऋक्—६, उपमान—८, उपमा-भेद—२

(३) हिरण्यस्तूप आंगिरस—

ऋ० १।३१।१५, १।३१।१७।

प्राकृतिक उपमान— १ (वर्म)

सामाजिक उपमान— ४ (मनुः, अंगिरः, ययाति, पूर्व)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१।३१।१५)

चार उपमानवाली मालोपमा—१ (१।३१।१७)

सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—५, उपमा-भेद—२

(४) कण्व घौर—

ऋ० १।३६।१३, १।३६।१६

दैविक उपमान— १ (सविता)

प्राकृतिक उपमान— १ (घना)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१।३६।१६)

उपमेयलुप्तोपमा— १ (१।३६।१३)

सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—२, उपमा-भेद—२

(५) प्रस्कण्व काण्व—

ऋ० १।४४।११, १।४४।१२, १।४५।३

प्राकृतिक उपमान— १ (ऊर्मयः)

सामाजिक उपमान—५ (मनुः, प्रियमेध, अत्रि, विरूप, आंगिर)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१।४४।१२)

तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा— १ (१।४४।११)

चार उपमानवाली मालोपमा—१ (१।४५।३)

सूक्त—२, ऋक्—३, उपमान—६, उपमा-भेद—३

(६) नोधा गौतम—

ऋ० १।५८।२, १।५८।३, १।५८।५, १।५८।६, १।५८।८, १।५९।१, १।५९।३, १।५९।४, १।६०।१, १।६०।५

दैविक उपमान— १ (सूर्य-रश्मयः)

प्राकृतिक उपमान—१० (अत्यः, दिवः सानु, रथः पृथेवंसगः, पतत्रिणः, रयिं, पूर्भिः, रयिं, आशु, स्थूणा)

सामाजिक उपमान— ३ (अतिथिं, मित्र, मनुष्यः)

भावात्मक उपमान— १ (बृहती)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— ३ (१।५९।३, १।५८।३, १।६०।५)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— २ (१।५९।१, १।६०।१)

वाक्यगा वाचकलुप्तोपमा— १ (१।५८।८)

दो उपमानवाली मालोपमा— ३ (१।५८।२, १।५८।५, १।५९।४)

तीन उपमानवाली मालोपमा—१ (१।५८।६)

सूक्त—३, ऋक्—१०, उपमान—१५, उपमा-भेद—४

(७) पराशर शाक्त्य—

ऋ० १।६५।१, १।६५।३, १।६५।५, १।६५।६, १।६५।७, १।६५।९, १।६५।१०, १।६६।१, १।६६।२, १।६६।३, १।६६।४, १।६६।५, १।६६।६, १।६६।७, १।६६।९, १।६६।१०, १।६७।१, १।६७।२, १।६७।५, १।६७।१०, १।६८।९, १।६९।१, १।६९।३, १।६९।४,

१।६६।५, १।६६।६, १।७०।४, १।७०।१०, १।७०।११, १।७१।१, १।७१।४, १।७१।७, १।७१।६, १।७१।१०, १।७२।२, १।७२।१०, १।७३।१, १।७३।२, १।७३।३, १।७३।८

दैविक उपमान—७ (सूरः, अजः, उषः-जारः, दिवः-ज्योतिः, उषः-जारः सविता, देवः)

प्राकृतिक उपमान—३२ (द्यौः, क्षितिः, गिरिः, क्षोदः, अत्यः, सिन्धुः, हंसः, सोमः, पशुः, रयिः, तक्वा, धेनुः, ओकः, यवः; प्रीतः वाजी, श्वेतः, रथः, सृष्टासेना, अस्तुः विद्युत्, अस्तं, सिन्धुः, सद्म, गोनां ऊचः, प्रीतः-वाजी, गावः, समुद्रं, नभः, सिन्धवः, रयिः, अमतिः. छाया, वत्सं)

सामाजिक उपमान—२३ (पश्वा तायु, भ्राता, राजा, सूनुः, ऋषिः, जाया, अजुर्य, क्षेमः, पुत्राः, जनेशेवः, पुत्रः, विशां, जिव्रेः पितुः, साधुः, अस्ता, याता, पति, दूत्यं, अतिथिः, होता, राजा, वीराः, नारी)

भावात्मक उपमान—७ (पुष्टिः, आयुः, क्रतुः, मनो चिकितुषः-वायुः, आत्मा)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—११ (१।६५।६, १।६६।९, १।६८।१, १।६९।३, १।६६।६, १।७०।१०, १।७१।४, १।७१।७, १।७१।६, १।७१।१०, १।७२।१०)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा—२ (१।६७।१०, १।७३।८)

उपमेय-लुप्तोपमा— ६ (१।६५।१, १।६५।३, १।६६।१०, १।६७।१, १।६७।५, १।६९।४)

उपमेय-धर्मलुप्तोपमा— १ (१।७०।४)

त्रिलुप्ता उपमेय-धर्मवाचक लुप्तोपमा—१ (१।७२।२)

चार उपमानवाली मालोपमा—४ (१।६५।५, १।६६।१, १।७३।१, १।७३।३)

तीन उपमानवाली मालोपमा—२ (१।७०।११, १।७३।२)

दो उपमानवाली मालोपमा—१३ (१।६५।६, १।६५।७, १।६५।१०, १।६६।२, १।६६।३, १।६६।४, १।६६।५, १।६६।६, १।६६।७, १।६७।२, १।६९।१, १।६९।५, १।७१।१)

सूक्त—९, ऋक्—४०, उपमान—६९, उपमा-भेद—६
निम्नलिखित ३ उपमानों का दो-दो बार प्रयोग हुआ है—

सिन्धुर्न क्षोदः— (१।६५।६, १।६६।१०)
उषो न जारः— (१।६९।१, १।६९।९)
वाजी न प्रीतो— (१।६६।४, १।६९।५)

(८) गौतम राहूगण—

ऋ० १।७५।४, १।७६।५, १।७७।३, १।७८।३, १।७९।१, १।७९।२
दैविक उपमान— ३ (देवान्, मित्रः, वातः)
प्राकृतिक उपमान— १ (हिरण्य)
सामाजिक उपमान— ४ (अंगिरः, सत्याः, स्मयमानाभिः-शिवाभिः; सखा)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१।७६।५)
धर्मलुप्ता वाक्यगा श्रौती लुप्तोपमा—१ (१।७७।३)
वाक्यगा श्रौती उपमान लुप्तोपमा— १ (१।७९।२)
वाक्यगा धर्म-वाचकलुप्तोपमा— १ (१।७५।४)
उपमेयलुप्तोपमा— १ (१।७८।३)
तीन उपमानवाली मालोपमा— १ (१।७९।१)
सूक्त—५, ऋक्—६, उपमान—८, उपमा-भेद—६

(९) कुत्स आंगिरस—
ऋ० १।९४।१, १।९४।१०, १।९५।६, १।९५।७, १।९७।७, १।९७।८
दैविक उपमान— १ (सविता)
प्राकृतिक उपमान— ५ (रथ, वृषभस्य, गावः, नावा, नावया-सिंधु)
सामाजिक उपमान— १ (जोषयेते)
समासगा श्रौती पूर्णोपमा— ३ (१।९४।१, १।९७।७, १।९७।८)
धर्मलुप्ता समासगा श्रौती लुप्तोपमा—१ (१।९४।१०)
उपमेय लुप्तोपमा— १ (१।९५।७)
दो उपमानवाली मालोपमा— १ (१।९५।६)
सूक्त—३, ऋक्—६, उपमान—७, उपमा-भेद—४

(१०) कश्यपो मारीच—
ऋ० १।९९।१
प्राकृतिक उपमान— १ (नावा)
सामाजिक उपमान— १ (अरातीयतः)

दो उपमानवाली मालोपमा—१ (१।६९।१)

सूक्त—१, ऋक्—१, उपमा—२, उपमा-भेद—१

(११) परुच्छेप दैवोदासि—

ऋ० १।१२७।१, १।१२७।२, १।१२७।३, १।१२७।४, १।१२७।५, १।१२७।६, १।१२७।८, १।१२७।९, १।१२७।१०, १।१२७।११; १।१२८।१, १।१२८।४, १।१२८।५, १।१२८।६, १।१२८।७

दैविक उपमान— ४ (द्यां-परिज्मानं, मारुतं, मरुतां, तरणिः)

प्राकृतिक उपमान— ८ (वना, परशुः, वना, वीलु-शर्म, पंथां, रयिं, रयिः, इषिराय-भोज्या)

सामाजिक उपमान— ११ (विप्रं, धन्वासहा, विदेदुः, अतिथि, पितुः, श्रुष्टीवानः, पशुषे, रेभः, उग्रः, विश्वपति-जेन्य, अतिथिः)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा — ६ (१।१२७।१, १।१२७।५, १।१२७।११, १।१२८।१, १।१२८।६, १।१२८।७)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा — १ (१।१२७।२)

वाक्यगा धर्म-वाचक लुप्तोपमा—१ (१।१२८।४)

तीन उपमानवाली मालोपमा— १ (१।१२७।३)

दो उपमानवाली मालोपमा— ६ (१।१२७।४, १।१२७।६, १।१२७।८, १।१२७।९, १।१२७।१०, १।१२८।५)

सूक्त—२, ऋक्—१५, उपमान—२३, उपमा-भेद—४

(१२) दीर्घतमा औचथ्य—

ऋ० १।१४०।१, १।१४०।६, १।१४०।१०, १।१४०।३, १।१४१।६, १।१४१।७, १।१४१।८, १।१४१।९, १।१४१।१०, १।१४१।११, १।१४१।१३, १।१४२।२, १।१४३।३, १।१४३।४, १।१४३।५, १।१४३।७, १।१४४।३, १।१४४।५, १।१४४।६, १।१४४।७, १।१४५।३, १।१४६।३, १।१४८।१, १।१४८।३, १।१४८।४, १।१४९।२, १।१४९।३, १।१५०।१।

दैविक उपमान—८ (शर्म, भगं, वरुणः, मरुतां-स्वनः, भगः, स्वः, सूरः, तोदस्य)

प्राकृतिक उपमान—२१ (धासिं, वस्त्रेण, भूषन्, वृषा, भीमः, वर्म, ह्वारः, पितुक्षयः, रथः, नेमिः, रयिं, रश्मीन्, मिहं, सिन्धवः, सृष्टा-सेना, अशनिः, अश्वासः, असनां-शर्म, अर्वा,

धनोः प्रवतः, वत्सं)

सामाजिक उपमान—९(शूरस्य, योधः, मित्रं, सारथिः, पशुपा, शिशुः, नरांवृषा, मावतः, शिशुं)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—१४ (१।१४१।७, १।१४१।९, १।१४१।१०, १।१४१।१३, १।१४३।३, १। ४३।४, १।१४३।७, १।१४४।५, १।१४४।६, १।१४४।७, १।१४८।१, १।१४८।३, १।१४८।४, १।१४९।२)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— ३ (१।१४०।१०, १।१४१।६, १।१५०।१)

वाक्यगा वाचकलुप्तोपमा— १ (१।१४०।३)

वतुप् प्रत्यय के प्रयोग में वाचक लुप्तोपमा—१ (१।१४२।२)

उपमेय-वाचकलुप्तोपमा— २ (१।१४५।३, १।१४६।३)

चार उपमानवाली मालोपमा—१ (१।१४३।५)

तीन उपमानवाली मालोपमा— १ ( ।१४०।६)

दो उपमानवाली मालोपमा—५ (१।१४०।१, १।१४१।८, १।१४१।११, १।१४४।३, १।१४९।३)

सूक्त—१०, ऋक्—२८, उपमान—३८, उपमा-भेद—६

दैविक उपमान में से ६ सूर्यवाचक उपमान हैं।

## द्वितीय मण्डल

(१३) गृत्समद भार्गव शौनक—

ऋ० २।२।२, २।२।३, २।२।४, २।२।५, २।२।६, २।२।७, २।२।८, २।२।९, २।२।१०, २।८।१, २।८।४, २।१०।१, २।१०।६, २।३५।४, २।३५।५, २।३५।९ २।३५।१०, २।३५।११

दैविक उपमान— ४ (स्वः, स्वः, स्वः, स्वः)

प्राकृतिक उपमान—१३ (वत्सं, दिवः, रथं, चन्द्रं, पाथः, स्तृभिः-द्यौः, धेनुः, रथान्, अप्सु, हिरण्य, हिरण्य, हिरण्य, हिरण्य)

सामाजिक उपमान—६ (मित्रं, रेवत, अतिथिः, पिता, मनु, युवतयः—युवानं)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—५ (२।२।५, २।२।७, २।२।१०, २।८।४, २।३५।५)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा—२ (२।८।१, २।१०।१)

तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा—२ (२।२।६, २।१०।६)

वाक्यगा वाचकलुप्तोपमा—२ (२।२।९, २।३५।४)

समासगा वाचकलुप्तोपमा—२ (२।३५।९, २।३५।११)

तीन उपमानवाली मालोपमा—१ (२।३५।१०)
दो उपमानवाली मालोपमा—४ (२।२।२, २।२।३, २।२।४, २।२।८)
सूक्त—४, ऋक्—१८, उपमान—२३, उपमा-भेद— ६
दैविक चारों उपमान सूर्यवाचक "स्वः" पद है।
प्राकृतिक उपमानों में स्वर्णवाचक पद का ५ वार प्रयोग किया गया है।

(१४) सोमाहुति भार्गव—
ऋ० २।४।१, २।४।३, २।४।४, २।४।६, २।४।७, २।४।९, २।५।२, २।५।३, २।५।४, २।५।६, २।५।८, २।६।७, २।७।३
दैविक उपमान— २ (मित्रः, मित्रं)
प्राकृतिक उपमान—९ (अत्यः-वारान्, वाः, रथ्या, द्यौः, पशुः, नेमिः-चक्रं, वया, वृष्टी-यवः, उदन्याः-धारा)
सामाजिक उपमान—६ (अतिथि, तातृषाणः, गृत्समदासः, मनुः, विद्वान्, दूतः)
भावात्मक उपमान— १ (पुष्टिः)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— ६ (२।४।३, २।४।७, २।४।९, २।५।४, २।५।८, २।७।३)
समासगा श्रौती पूर्णोपमा— ३ (२।५।३, २।५।६, २।६।७)
तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा— १ (२।५।२)
चार उपमानवाली मालोपमा—१ (२।४।६)
दो उपमानवाली मालोपमा— २ (२।४।१, २।४।४)
सूक्त—४, ऋक्—१३, उपमान—१८, उपमा-भेद—४
दैविक दोनों उपमान सूर्यवाचक "मित्र" पद हैं।

## तृतीय मण्डल

(१५) गाथिन विश्वामित्र—
ऋ० ३।१।४, ३।१।१४, ३।२।१, ३।२।२, ३।२।३, ३।२।७, ३।२।१०, ३।२।११, ३।२।१५, ३।४।६, ३।५।८, ३।६।१०, ३।७।४, ३।७।९, ३।८।९, ३।९।४, ३।९।५, ३।९।७, ३।१०।५, ३।२६।३, ३।२७।१४, ३।२९।२, ३।२९।६, ३।२९।१३, ३।२९।१५
दैविक उपमान—२ (मित्रः-वरुणः—मरुत्वान्, मरुतां-प्रयाः)
प्राकृतिक उपमान—१८ (अश्वाः-शिशुं, विद्युतः गुहा, घृतं, रथं, अत्यं, अत्याः, स्वधितिं, सिंहः, रथं, आपः, वृषायन्ते, हंसाः, सिंहं, अश्वः, अश्वः, अश्वः, यामन्)

सामाजिक उपमान—७ (अतिथिः, एकां, ससृवांसं, पाकाय, वेधसे, गर्भः, पुमांसं-जातं)

भावात्मक उपमान— १ (अध्वरा)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—१२ (३।१।४, ३।२।३, ३।२।७, ३।२।१०, ३।२।११, ३।४।६, ३।८।९, ३।९।७, ३।१०।५, ३।२६।३, ।२७।१४, ३।२९।२)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— ५ (३।६।१०, ३।७।४, ३।९।४, ३।९।५, ३।२९।१५)

वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा— १ (३।२९।१३)

कर्तृकारक से विहित क्यङ् के प्रयोग में वाचक लुप्तोपमा—१ (३।७।९)

वाक्यगा धर्म-वाचक लुप्तोपमा—१ (३।२।२)

उपमेय लुप्तोपमा— २ (३।२।१५, ३।५।८)

दो उपमानवाली मालोपमा— ३ (३।१।१४, ३।२।१, ३।२९।६)

सूक्त—१२, ऋक्—२५, उपमान—२८, उपमा-भेद—७

प्राकृतिक उपमानों में अश्ववाचक उपमान ६ हैं।

(१६) काव्य उत्कील—

ऋ० ३।१५।२, ३।१५।५

प्राकृतिक उपमान— १ (रथः)

सामाजिक उपमान— १ (तनयं)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (३।१५।५)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (३।१५।२)

सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—२, उपमा-भेद—२

(१७) कतो वैश्वामित्र —

ऋ० ३।१७।२, ३।१८।१

प्राकृतिक उपमान— २ (पृथिव्याः, दिवः)

सामाजिक उपमान— ३ (मनुः, सखा, पितरा)

तीन उपमानवाली मालोपमा—१ (३।१७।२)

दो उपमानवाली मालोपमा—१ (३।१८।१)

सूक्त—२, ऋक्—२, उपमान—५, उपमा-भेद—१

(१८) गाथी कौशिक—

ऋ० ३।२०।४, ३।२२।१

दैविक उपमान— १ (भगः)

प्राकृतिक उपमान— १ (अत्यं-सप्तिं)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—२ (३।२०।४, ३।२२।१)

सूक्त—२, ऋक्—२, उपमान—२, उपमा-भेद—१

## चतुर्थ मण्डल

(१९) वामदेव गौतम—

ऋ० ४।१।३, ४।१।६, ४।१।८, ४।१।२०, ४।२।७, ४।२।८, ४।२।११, ४।२।१४, ४।२।१७, ४।२।१८, ४।३।१, ४।३।२, ४।३।३, ४।३।१२, ४।४।१, ४।४।४, ४।५।१, ४।५।३, ४।५।५, ४।५।६, ४।५।८, ४।५।१३, ४।५।१५, ४।६।२, ४।६।४, ४।६।५, ४।६।७, ४।६।८, ४।६।१०, ४।७।३, ४।७।४, ४।७।११, ४।८।८, ४।१०।१, ४।१०।३, ४।१०।४, ४।१०।५, ४।१०।६, ४।१२।६, ४।१३।२, ४।१३।४, ४।१५।१, ४।१५।२, ४।१५।६, ४।५८।६, ४।५८।७, ४।५८।८, ४।५८।९

दैविक उपमान—६ (सविता, मित्रः, मारुतं-शर्धः, स्वः, दिवः-शिशुं, वात-प्रमियः)

प्राकृतिक उपमान—३८ (आशुं-चक्रं, रंह्या, घृतं, हिरण्य, पितुमती-संसत्, हैम्यावान्-अश्वः, पशवः यूथ, ग्रावा, वाजी, इभेन, अतसं, रोधः, गोः-पदं, वार्, रघवः-वाजं, मेता, वाजिनः, परशुं, अघर्यः, श्येनासः, स्तृभिः द्यां, आशुं, क्षिप्रा, अश्वं, दिवः, रुक्मः, घृतं, रुक्मः, गौः, गविषः-सत्वा, घर्मं, वाजीसन्, अर्वन्तं, सरितः, मृगाः, सिन्धोः, वाजी, हिरण्यं)

सामाजिक उपमान—१७ (धेनोः-मंहना, अतिथिः, अतिथिं, दीता-बृजिना पृष्ठा विविद्वान्, ऋन्तः, अयः-धमन्तः जाया, प्रसिति, अभ्रातरः-योषणः, पतिरिपः-जनयः, कियते गुरुं भारं, क्षितिः-राया, पशुपा, रथी, योधाः, कन्याः, भृगवाण)

भावात्मक उपमान—१ (ऋतुम्)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—१७ (४।२।८, ४।२।१४, ४।२।१७, ४।३।१२, ४।४।४, ४।५।३, ४।५।६, ४।५।१५, ४।६।४, ४।६।५, ४।६।७, ४।१०।३,

४।१०।४, ४।१०।५, ४।१२।६, ४।१३।२, ४।५८।९)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा—१० (४।२।११, ४।२।१८, ४।३।२, ४।३।३, ४।५।८, ४।७।३, ४।८।८, ४।१३।४, ४।१५।२, ४।५८।८)

वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा— २ (४।२।७, ४।१५,१)

समासगा वाचक लुप्तोपमा— १ (४।३।१)

क्विप्गा धर्मवाचक लुप्तोपमा—१ (४।७।४)

वाक्यगा धर्मवाचक लुप्तोपमा—१ (४।१।२०)

उपमेय लुप्तोपमा— ३ (४।५।१, ४।५।१३, ४।७।११)

तीन उपमानवाली मालोपमा— १ (४।५८।७)

दो उपमानवाली मालोपमा—१२ (४।१।३, ४।१।६, ४।१।८, ४।४।१, ४।५।५, ४।६।२, ४।६।८, ४।६।१०, ४।१०।१, ४।१०।६, ४।१५।६, ४।५८।६)

सूक्त—१३, ऋक्—४८, उपमान—६२, उपमा-भेद—८

दैविक उपमानों में ४ सूर्यवाचक हैं।

प्राकृतिक उपमानों में आश्ववाचक उपमान १० हैं।

रुक्मो न रोचत—(४।१०।५ और ४।१०।६)

इस उपमान का दो बार प्रयोग हुआ है।

## पंचम मण्डल

(२०) बुध गविष्ठिरो आत्रेयौ—

ऋ० ५।१।१, ५।१।४, ५।१।८, ५।१।१२

दैविक उपमान— १ (दिवि-रुक्मं-उरुव्यञ्च)

प्राकृतिक उपमान— २ (धेनुं, वयां)

सामाजिक उपमान— २ (चक्षूंषि, अतिथिः)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— २ (५।१।४, ५।१।१२)

वाक्यगा धर्मवाचक लुप्तोपमा—१ (५।१।८)

दो उपमानवाली मालोपमा— १ (५।१।१)

सूक्त—१, ऋक्—४, उपमान—५, उपमा-भेद—३

(२१) कुमार आत्रेय अथवा वृशो वाजनिः—

ऋ० ५।२।३, ५।२।४, ५।२।११

प्राकृतिक उपमान— ३ (हिरण्य, यूथं, रथं)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (५।२।११)
समासगा वाचक लुप्तोपमा—१ (५।२।३)
उपमेय लुप्तोपमा— १ (५।२।४)
सूक्त—१, ऋक्—३, उपमान—३, उपमा-भेद—३

(२२) वसुश्रुत आत्रेय—
ऋ० ५।३।२, ५।३।६, ५।४।५, ५।४।९, ५।५।४, ५।५।७, ५।६।७
दैविक उपमान— २ (मित्रं, वातस्य-पत्मन्)
प्राकृतिक उपमान— ३ (नावा, ऊर्णम्रदा, वाजिनः)
सामाजिक उपमान— ३ (पुत्रः—पितरं, अतिथिः, अत्रि)
वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा— ३ (५।३।६, ५।५।७, ५।६।७)
वाक्यगा धर्म-वाचक लुप्तोपमा—१ (५।४।५)
उपमेय लुप्तोपमा— १ (५।३।२)
उपमेय-वाचक लुप्तोपमा— १ (५।५।४)
दो उपमानवाली मालोपमा— १ (५।४।६)
सूक्त—४, ऋक्—७, उपमान—८, उपमा-भेद—५

(२३) इष आत्रेय—
ऋ० ५।७।५, ५।७।७, ५।७।८, ५।८।२
प्राकृतिक उपमान— ३ (हिरण्मश्रुः पशुः, स्वग्निति)
सामाजिक उपमान— ३ (स्वजेत्यं, अत्रि, अतिथिं)
समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (५।७।५)
वाक्यगा धर्म-वाचक लुप्तोपमा—१ (५।८।२)
दो उपमानवाली मालोपमा— २(५।७।७, ५।७।८)
सूक्त—२, ऋक्—४, उपमान—६, उपमा-भेद—३

(२४) गय आत्रेय—
ऋ० ५।९।३, ५।९।४, ५।९।५, ५।९।६, ५।१०।२, ५।१०।५
दैविक उपमान— १ (मित्रः)
प्राकृतिक उपमान— ५ (पशुः, ह्वार्यणांपुत्रं, क्ष्मातरि, विद्युतः, रथः)
सामाजिक उपमान— ३ (शिशुं, क्ष्माता, द्वेषोयुतः)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— ३ (५।९।३, ५।९।६, ५।१०।२)
दो उपमानवाली मालोपमा—३ (५।९।४, ५।९।५, ५।१०।५)
सूक्त—२, ऋक्—६ उपमान—९, उपमा-भेद—२

(२५) सुत्रंभर आत्रेय—

ऋ० ५।११।५, ५।१२।१, ५।१३।६

प्राकृतिक उपमान— ३ (सिन्धुं, घृतं, नेमिः—अरान्)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—२ (५।१२।१, ५।१३।६)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (५।११।४)

सूक्त—३, ऋक्—३, उपमान—३, उपमा-भेद—२

(२६) धरुण आंगिरस—

ऋ० ५।१५।३, ५।१५।४, ५।१५।५

प्राकृतिक उपमान— १ (सिंहं)

सामाजिक उपमान— २ (माता, तायुः)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— २ (५।१५।३, ५।१५।५)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (५।१५।४)

सूक्त—१, ऋक्—३, उपमान—३, उपमा-भेद—२

(२७) पुरु आत्रेय—

ऋ० ५।१६।१, ५।१६।२. ५।१६।४, ५।१७।३

दैविक उपमान—४ (मित्रं, भगः, यह्वं, दिवः)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—४ (५।१६।१, ५।१६।२, ५।१६।४, ५।१७।३)

सूक्त—२, ऋक्—४, उपमान—४, उपमा-भेद—१

चारों उपमान सूर्यवाचक हैं।

(२८) वह्नि आत्रेय—

ऋ० ५।१९।३, ५।१९।४

प्राकृतिक उपमान— २ (मध्वा, दुग्धं)

भावात्मक उपमान— १ (धर्मः)

धर्मलुप्ता वाक्यगा श्रौती लुप्तोपमा—१ (५।१९।३)

दो उपमानवाली मालोपमा— १ (५।१९।४)

सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—३, उपमा-भेद—२

(२९) सप्त आत्रेय—

ऋ० ५।२१।१

सामाजिक उपमान— ३ (मनुष्वत्, मनुष्वत्, मनुष्वत्)

तीन उपमानवाली मालोपमा—१ (५।२१।१)

सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—३, उपमा-भेद—१

एक ही मनुवाचक उपमान की आवृत्ति तीन बार हुई है।

(३०) विश्वसामा आत्रेय—

ऋ० ५।२२।१
सामाजिक उपमान—१ (अत्रि)
उपमेय लुप्तोपमा— १ (५।२२।१)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमाभेद—१

(३१) वसूयव आत्रेय—

ऋ० ५।२५।७, ५।२५।८, ५।२५।९
प्राकृतिक उपमान— ३ (ग्रावा, तत्यतुः, नावा)
सामाजिक उपमान— १ (महिषी)
समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (५।२५।९)
समासगा आर्थी उपमान लुप्तोपमा—१ (५।२५।७)
दो उपमानवाली मालोपमा— १ (५।२५।८)
सूक्त—१, ऋक्—३, उपमान—४, उपमा-भेद—३

(३२) त्रैवृष्णः वृषरुणः पौरुकुत्स्य त्रसदस्यु भारतो अश्वमेध राजा—

ऋ० ५।२७।५, ५।२७।६
दैविक उपमान— १ (सूर्य)
प्राकृतिक उपमान— १ (सोमा)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (५।२७।५)
समासगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (५।२७।६)
सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—२, उपमा-भेद—२

(३३) द्युम्नो विश्व चर्षणिः आत्रेयः—

ऋ० ५।२३।४
सामाजिक उपमान— १ (रेवत्)
तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा—१ (५।२३।४)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

(३४) श्यावाश्व आत्रेय—

ऋ० ५।६०।१
प्राकृतिक उपमान—१ (रथैः)
उपमेय लुप्तोपमा—१ (५।६०।१)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

(३५) भौमो अत्रिः—

ऋ० ५।८६।१, ५।८६।५, ५।८६।६

दैविक उपमान— १ (अर्वते अंशा)
प्राकृति उपमान— १ (घृतं)
सामाजिक उपमान— १ (मर्तयि)
भावात्मक उपमान— १ (वाणीः)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (५।८६।६
समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (५।८६।१)
दो उपमानवाली मालोपमा—१ (५।८६।५)

सूक्त—१, ऋक्—३, उपमान—४, उपमा-भेद—३

चारों प्रकार के उपमानों का एक-एक उदाहरण दिया गया है।

## षष्ठ मण्डल

(३६) भरद्वाज बार्हस्पत्य—

ऋ० ६।१।३, ६।२।१, ६।२।४, ६।२।६, ६।२।७, ६।२।८, ६।२।९, ६।३।३, ६।३।४, ६।३।५, ६।३।६, ६।३।७, ६।३।८, ६।४।१, ६।४।२, ६।४।३, ६।४।४, ६।४।५, ६।४।६, ६।४।७, ६।५।२, ६।६।४, ६।६।५, ६।७।१, ६।७।२, ६।७।४; ६।७।६, ६।८।१, ६।८।३, ६।८।५, ६।९।१, ६।१०।२, ६।११।१, ६।११।३, ६।११।४, ६।११।५, ६।११।६, ६।१२।१, ६।१२।२, ६।१२।३, ६।१२।४, ६।१२।५, ६।१३।१, ६।१३।२, ६।१६।५, ६।१६।३८, ६।१६।३९, ६।१६।४०, ६।१६।४२ ६।५९।३)

दैनिक उपमान—२३ (मित्रः, सूरः, परिज्मन्, सूरो, दिवः, वृषा, मरुतां शर्धः, अभुः, चक्षणिः, सूर्यो, वायुः, सूर्यः, औशिजः, वायुं, इन्द्रं, मरुतां, सूर्ये-चक्षुः, सूर्यो, ततरुवः, तोदः, अद्रोधो, परिज्य, मित्रो)

प्राकृतिक उपमान—३२ (वृत्ता वाजी, अत्यः, पशुः, अश्वो, परशुः, द्रविः, अयसः—धारां, वेः, विदयुत्, अत्यः, क्षामा, अश्वाः, अशनिः, रथ्यं, वयाः, सोम, चर्मणि, पव्य, वनिनं, घृतं, मधुच्छन्दो, वृजनं, एतरी, उग्रः-पिता, वयाः, हिरण्य, छायाम्, उग्र, वंसगः, स्रादिनं, सप्तो)

सामाजिक उपमान— १७ (अतिथिः, पुरिजूर्यः, सूनुः, अस्ता रेभः, मनुषः, राजा शूरस्यप्रसितिः, अतिथिं, शिशुं, राजा, ममता, आयुं, दिवोदासाय, शिशुं, अतिथिं)

भावात्मक उपमान— १ (अंहः)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—२१ (६।२।१, ६।।२।४, ६।२।६, ६।२।९, ६।३।३, ६।३।६, ५।४।१, ६।४।२, ६।४।३; ६।७।४, ६।७।६, ६।८।१, ६।९।१, ६।११।४, ६।११।५, ६।११।६, ६।१२।१, ६।१२।२, ६।१२।५, ५।१३।१, ६।५९।३)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— ४ (६।१।३, ६।४।४, ६।५।२, ६।८।३)

वाक्यगा धर्मवाचक लुप्तोपमा— ४ (६।६।४, ६।७।१, ६।७।२, ६।१६।५)

समासगा धर्म-वाचक लुप्तोपमा— १ (६।११।३)

उपमेय लुप्तोपमा— १ (६।११।१)

त्रिलुप्ता उपमेय-धर्मवाचक लुप्तोपमा—१ (६।१६।४२)

तीन उपमानवाली मालोपमा—५ (६।२।७, ६।२।८, ६।३।४, ६।३।५, ६।३।८)

दो उपमानवाली मालोपमा—१३ (६।३।७, ६।४।५, ६।४।६, ६।४।७, ६।६।५, ६।८।५, ६।१०।२, ६।१२।३, ६।१२।४, ६।१३।२, ६।१६।३८, ६।१६।३९, ६।१६।४०)

सूक्त—१५, ऋक्—५०, उपमान—७३, उपमा-भेद—७

सूर्यवाचक उपमान १४ हैं।

(३७) अंगिरस शीतहव्य भरद्वाज बार्हस्पत्य वा—

ऋ० ६।१५।१, ६।१५।२, ६।१६।४, ६।१५।५, ६।१५।६, ६।१५।१७

दैविक उपमान—१ (ऊषसः)

सामाजिक उपमान—७ (अतिथि, मित्रं, अतिथि, विप्रं, तूर्वन् अतिथि, अथर्ववत्)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (६।१५।२)

तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा— १ (६।१५।१७)

वाक्यगा धर्म-वाचक लुप्तोपमा—२ (६।१५।१, ६।१५।६)

दो उपमानवाली मालोपमा— २(६।१५।४, ६।१५।५)

सूक्त—१, ऋक्—६, उपमान—८, उपमा-भेद—४

(३८) पंथु बार्हस्पत्य—

ऋ० ६।४८।१, ६।४८।७

सामाजिक उपमान— २ (मित्रं, रेवत्)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (६।४८।१)

तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा—१ (६।४८।७)
सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—२, उपमा-भेद—२

## सप्तम मण्डल

(३९) वसिष्ठ—

ऋ० ७।२।३, ७।२।५, ७।२।६, ७।३।२, ७।३।४, ७।३।५, ७।३।६, ७।३।७, ७।३।९, ७।५।७, ७।६।१, ७।७।१, ७।८।४, ७।९।३, ७।१०।१, ७।१०।२, ४।११।३, ७।१३।१, ७।१३।३, ७।१५।४, ७।१५।५, ७।१५।१४, ७।९३।३, ७।९४।१, ७।९४।१२

| | |
|---|---|
| दैविक उपमान— | ७ (सूरः, वायुः, इन्द्रस्य, सूर्यो, मित्रः, उषोजारः, स्वः) |
| प्राकृतिक उपमान— | २० (शिशुं, अभ्रवो, धेनुः, अश्वः सृष्टा-सेना, यवं, अत्यं, रुक्मः, तन्यतुः, आयसीभिः पूर्भिः, स्वधितिः, अश्वं, हविः, पशुन्गोपाः, श्येनाय, रयिः, आयसी शतभुजिषुः, अर्वन्तः, दृष्टिः, उदधिम्) |
| सामाजिक उपमान— | ६ (मनुः, अतिथिम्, अपत्याय, अतिथिः, अतिथिः, मनुष्यत्) |
| वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— | ७ (७।३।७, ७।७।१, ७।१०।२, ७।१५।५, ७।१३।१, ७।१३।३, ७।९३।३) |
| समासगा श्रौती पूर्णोपमा— | ३ (७।२।६, ७।३।९, ७।९४।१) |
| तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा— | २ (७।२।३, ७।११।३) |
| वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा— | २ (७।१५।४, ७।९४।१२) |
| वाक्यगा धर्मवाचक लुप्तोपमा— | १ (७।१५।१४) |
| उपमेय लुप्तोपमा— | ३ (७।३।२, ७।६।१, ७।१०।१) |
| तीन उपमानवाली मालोपमा— | १ (७।३।६) |
| दो उपमानवाली मालोपमा— | ६ (७।२।५, ७।३।४, ७।३।५, ७।५।७, ७।८।४, ७।९।३) |

सूक्त—१३, ऋक्—२५, उपमान—३३ उपमा-भेद—७

## अष्टम मण्डल

(४०) सौभरि काण्व—

ऋ० ८।१९।८, ८।१९।१४, ८।१९।२३, ८।१९।२७, ८।१९।३३, ८।१०३।३, ८।१०३।६, ८।१०३।७, ८।१०३।११, ८।१०३।१२

| | |
|---|---|
| दैविक उपमान— | १ (असुर) |
| प्राकृतिक उपमान— | ६ (रथः, उद्न, वया, मधोः, अश्वं, ऊर्मयः) |
| सामाजिक उपमान— | ३ (अतिथिः, पुत्रः, अतिथिः) |
| भावात्मक उपमान— | २ (विपो, मेधसातौ) |
| वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— | ५ (८।१९।१४, ८।१९।२३, ८।१९।२७, ८।१०३।६, ८।१०३।७) |
| समासगा श्रौती पूर्णोपमा— | १ (८।१०३।३) |
| वाक्यगा धर्मवाचक लुप्तोपमा— | १ (८।१०३।१२) |

उपमेय लुप्तोपमा—१ (८।१०६।११)
दो उपमानवाली मालोपमा—२ (८।१९।८, ८।१९।३३)
सूक्त—२, ऋक्—१०, उपमान—१२, उपमा-भेद—५

(४१) विश्वमना वैयश्व—

ऋ० ८।२३।६, ८।२३।८, ८।२३।११, ८।२३।२३, ८।२३।२४, ८।२३।२५
प्राकृतिक उपमान—१ (अश्वा)
सामाजिक उपमान—५ (दूतो, मित्र', व्यश्ववत्, स्यूरयूपवत्, अतिथिम्)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—३ (८।२३।६, ८।२३।८, ८।२३।११)
तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा—१ (८।२३।२४)
वाक्यगा धर्म-वाचकलुप्तोपमा—१ (८।२३।२५)
उपमेय लुप्तोपमा—१ (८।२३।२५)
सूक्त—१, ऋक्—६, उपमान—६, उपमा-भेद—४

(४२) श्यावाश्व—

ऋ० ८।३८।९
सामाजिक उपमान—१ (मेधिराः)
उपमेय लुप्तोपमा—१ (८।३८।९)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

(४३) नाभाक काण्व—

ऋ० ८।३९।३, ८।३९।७, ८।४०।१. ८।४०।४, ८।४०।५, ८।४०।६, ८।४०।१२

प्राकृतिक उपमान—४(घृतं, भूम, वनेव, व्रततेः,गुष्पितं)

सामाजिक उपमान—६ (नाभाकवत्, नाभाकवत्, पुराणवत्, पितृवत्, मन्धातृवत्, अंगिरस्वत्)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (८।३९।३)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा—२(८।३९।७, ८।४०।१)

उपमेय लुप्तोपमा—२(८।४०।४, ८।४०।५)

तीन उपमानवाली मालोपमा—१ (८।४०।१२)

दो उपमानवाली मालोपमा—१ (८।४०।६)

सूक्त—२, ऋक्—७, उपमान—१०, उपमा-भेद—४

(४४) विरूप अंगिरस—

ऋ० ८।४३।३, ८।४३।५, ८।४३।१३, ८।४३।१७, ८।४३।२५, ८।४३।२७, ८।४३।३२, ८।४४।१, ८।४४।२५, ८।४४।२६, ८।७५।१, ८।७५।५, ८।७५।८, ८।७५।६, ८।७५।१२)

दैविक उपमान—२ (उषसां केतवः, सूर्यो)

प्राकृतिक उपमान—८(आरोका, गावः, सर्प्तिं, सिन्धवः, नेमिं, प्रस्नातीः- उग्राः, अघ्न्याः, ऊर्मिः)

समाजिक उपमान—६ (भृगु, मनुः, अंगिरः, मर्य, मनुः, अतिथिम्, विप्रो, रथीः, भारभृत्)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—६ (८।४३।३, ८।४३।१७, ८।४३।३२, ८।४४।२६, ८।७५।५, ८।७५।६)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा—३ (८।४३।५, ८।४४।२५, ८।७५।१)

तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा—१ (८।४३।२७)

वाक्यगा धर्मवाचक लुप्तोपमा—१ (८।४४।१)

उपमेय लुप्तोपमा—१ (८।७५।१२)

तीन उपमानवाली मालोपमा—१ (८।४३।१३)

दो उपमानवाली मालोपमा—२ (८।४३।२५, ८।७५।८)

सूक्त—३, ऋक्—१५, उपमान—१६, उपमा-भेद—६

(४५) त्रिशोक काण्व—

ऋ० ८।४५।५

सामाजिक उपमान—१ (अप्सः)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (८।४५।५)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

(४६) भर्ग प्रागाथ—
ऋ० ८।६०।७, ८।६०।१३
प्राकृतिक उपमान—२ (अतामं, वृषभः)
सामाजिक उपमान—१ (हनवः)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (८।६०।७)
दो उपमानवाली मालोपमा—१ (८।६०।१३)
सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—३, उपमा-भेद—२

(४७) सुदीति पुरुमीलहौ आंगिरस—
ऋ० ८।७१।६, ८।७१।१५
सामाजिक उपमान—२ (सखा, अविता)
समासगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (८।७१।१५)
वाक्यगा धर्म-वाचक लुप्तोपमा—१ (८।७१।९)
सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—२, उपमा-भेद—२

(४८) हर्यत प्रागाथ—
ऋ० ८।७२।५, ८।७२।१४
प्राकृतिक उपमान—१ (वत्सः)
सामाजिक उपमान—१ (वत्सासः)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (८।७२।१४)
उपमेय-वाचक लुप्तोपमा—१ (८।७२।५)
सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—२, उपमा-भेद—२

(४९) गोपवन आत्रेय—
ऋ० ८।७४।२, ८।७४।७, ८।७४।१०; ८।७४।१३, ८।७४।१४
दैविक उपमान— २ (मित्रं, इन्द्रं)
प्राकृतिक उपमान— ३ (अश्वमित्, शर्धांसि, वयो)
सामाजिक उपमान— १ (अतिथे)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— २ (८।७४।१, ८।७४।१४)
धर्मलुप्ता समासगा श्रौती लुप्तोपमा—१ (८।७४।१३
वाक्यगा धर्म-वाचक लुप्तोपमा— १ (८।७४।७)

दो उपमानवाली मालोपमा— १ (८।७४।१०)

सूक्त—१, ऋक्—५, उपमान—६, उपमा-भेद—४

(५०) उशना काव्य—

ऋ० ८।८४।१, ८।८४।२

प्राकृतिक उपमान— १ (रथं)

सामाजिक उपमान— ३ (अतिथिं, मित्रं, कविम्)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (८।८४।२)

तीन उपमानवाली मालोपमा— १ (८।८४।१)

सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—४, उपमा-भेद—२

(५१) प्रयोगो भार्गव, पावको अग्निः, वार्हस्पत्यो वा, गृहपति यविष्ठो सहसः पुत्रो अन्यतरो वा—

ऋ० ८।१०२।४, ८।१०२।५, ८।१०२।६, ८।१०२।१२, ८।१०२।१५, ८।१०२।१७, ८।१०२।२१

दैविक उपमान— ३ (वात-स्वनं, मित्रं, सूर्यं)

प्राकृतिक उपमान— ४ (पर्जन्य-क्रन्द्यं, सवितुः, सवं, अर्वन्तं, घृतं)

सामाजिक उपमान— ३ (और्वं भृगु, अप्नवान, मातरः)

भावात्मक उपमान— १ (भुजि)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (८।१०२।१५)

वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा— १ (८।१०२।१७)

वाक्यगा धर्मवाचक लुप्तोपमा— १ (८।१०२।२१)

दो उपमानवाली मालोपमा— ४ (८।१०२।४, ८।१०२।५, ८।१०२।६; ८।१०२।१२)

सूक्त—१, ऋक्—७, उपमान—११; उपमा-भेद—४

## दशम मण्डल

(५२) त्रित आप्त्य—

ऋ० १०।११।२, १०।११।५, १०।११।६, १०।११।७, १०।३१।५, १०।४१।१; १०।४१।२, १०।४१।३, १०।४१।५, १०।४१।६, १०।५१।३, १०।६१।२, १०।६१।५; १०।६१।६, १०।७१।३; १०।७१।५, १०।७१।६

दैविक उपमान— ५ (स्वना, इन्द्रं, सूर्यस्य, मित्रम्, देवान्)

प्राकृतिक उपमान— ८ (पेशनानि, धन्वन्प्रपा, व्रजं, पशुः; वृषभो, रथं, अत्यो, अश्वाः)

सामाजिक उपमान — ६ (शिशुः, अतिथि, पुत्रः, शिशुं, तस्करा, शिशुं)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— ६ (१०।१।७, १०।३।५, १०।४।५; १०।६।५, १०।६।६, १०।७।६)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— २ (१०।४।२, १०।७।५)

धर्मलुप्ता वाक्यगा श्रौती लुप्तोपमा— १ (१०।६।२)

धर्मलुप्ता वाक्यगा श्रौती लुप्तोपमा— १ (१०।४।१)

वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा— २ (१०।१।२, २०।७।३)

वाक्यगा धर्मवाचक लुप्तोपमा— २ (१०।१।५, १०।१।६)

उपमेय-वाचक लुप्तोपमा— १ (१०।५।३)

दो उपमानवाली मालोपमा— २ (१०।४।३, १०।४।६)

सूक्त—६, ऋक्—१७, उपमान—१६, उपमा-भेद—८

(५३) त्रिशिरास्त्वाष्ट्र—

ऋ० १०।८।१

प्राकृतिक उपमान— १ (वृषभः)

वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा— १ (१०।८।१)

सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

(५४) हविर्धान आंगिः—

ऋ० १०।११।१, १०।११।५, १०।११।६, १०।१२।५

दैविक उपमान— ३ (वरुणः धर्गः, मित्रः)

प्राकृतिक उपमान— १ (यवसे)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— २ (१०।११।१, १०।१२।५)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१०।११।५)

उपमेय लुप्तोपमा— १ (१०।११।६)

सूक्त—२, ऋक्—४, उपमान—४, उपमा-भेद—३

(५५) विमद ऐन्द्रः प्राजापत्यो वा वसुकृद् वासुक्रः—

ऋ० १०।२०।२, १०।२०।६, १०।२१।८

प्राकृतिक उपमान— ३ (मातुः-ऊधः, हिरण्यरूपं, वृषायसे)

सामाजिक उपमान— १ (सिञ्चतीः)

सामासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१०।२१।३)

वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा— १ (१०।२०।२)

समासगा वाचक लुप्तोपमा— १ (२०।२०।९)

कर्तृकारक से विहित क्यङ् के प्रयोग में वाचकलुप्तोपमा—१ (१०।२१।८)
सूक्त—२, ऋक्—४, उपमान—४, उपमा-भेद—४

(५६) कवष ऐलूष—

ऋ० १०।३०।१, १०।३०।५

| | |
|---|---|
| सामाजिक उपमान— | १ (मर्यः) |
| भावात्मक उपमान— | १ (मनसः) |
| वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— | १ (१०।३०।५) |
| उपमेयलुप्तोपमा— | १ (१०।३०।१) |

सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—२, उपमा-भेद—२

(५७) वत्स प्रिभलिन्दनः—

ऋ० १०।४५।४, १०।४६।२, १०।४६।५, १०।४६।७

| | |
|---|---|
| प्राकृतिक उपमान— | ४ (स्तनयन्द्यौः, पदैः, हिरि श्मश्रु, सोमाः) |
| वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— | २ (१०।४६।२, १०।४६।७) |
| समासगा श्रौती पूर्णोपमा— | १ (१०।४५।४) |
| उपमेय लुप्तोपमा— | १ (१०।४६।५) |

सूक्त—२, ऋक्—४, उपमान—४, उपमा-भेद—३

(५८) देवाः अग्निः—

ऋ० १०।५१।६

| | |
|---|---|
| प्राकृतिक उपमान— | १ (गौरो) |
| सामाजिक उपमान— | १ (रथी) |
| दो उपमानवाली मालोपमा— | १ (१०।५१।६) |

सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—२, उपमा-भेद—१

(५९) सुमित्रो वाध्र्यश्वः—

ऋ० १०।६९।२, १०।६९।३, १०।६९।५, १०।६९।६, १०।६९।८, १०।६९।१०, १०।७०।८

| | |
|---|---|
| दैविक उपमान— | १ (सूर्य) |
| प्राकृतिक उपमान— | १ (धेनुः) |
| सामाजिक उपमान— | ५ (मनुः, शूर, शूर पुत्र, मनुः) |
| वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— | २ (१०।६९।२, १०।६९।६) |
| समासगा श्रौती पूर्णोपमा— | २ (१०।६९।८, १०।६९।१०) |
| तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा— | १ (१०।७०।८) |

वाक्यगा वाचकलुप्तोपमा— १ (१०।६६।३)

उपमेयलुप्तोपमा— १ (१०।६६।५)

सूक्त—२, ऋक्—७, उपमान—७, उपमाभेद—५

"शूर इव धृष्णुः" का [१०।६६।५ और १०।६६।६ में] दो बार प्रयोग किया गया है।

(६०) अग्निः सौचीको वैश्वानरो वासप्ति वाजंभरो वा—

ऋ० १०।७६।३, १०।७६।६

प्राकृतिक उपमान— २ (ससं, गाम्)

सामाजिक उपमान— १ (कुमारी)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१०।७६।६)

दो उपमानवाली मालोपमा— १ (१०।७९।३)

सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—३, उपमा-भेद—२

(६१) पायुः भारद्वाज—

ऋ० १०।८७।१२

प्राकृतिक उपमान— १ (शफारुजं)

सामाजिक उपमान— १ (अथर्ववत्)

दो उपमानवाली मालोपमा— १ (१०।८७।१२)

सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—२, उपमा-भेद—१

(६२) अरुणो वैतहव्य—

ऋ० १०।६१।२, १०।६१।४, १०।६१।५, १०।६१।७, १०।६१।१०; १०।६१।११, १०।६१।१३, १०।६१।१५

दैविक उपमान— ३ (उषसाम्, सूर्यस्य रश्मयः, उषसो)

प्राकृतिक उपमान— ३ (विद्युतः, रुचिः, चम्वी)

सामाजिक उपमान— ५ (रथ्यः, अध्वरीयसि, अध्वरीयसि, जायाः, तक्ववीः)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१०।९१।७)

समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१०।६१।२)

कर्तृकारक से विहित क्यङ् के प्रयोग में वाचक लुप्तोपमा—२ (१०।९१।१०, १०।९१।११)

उपमेय लुप्तोपमा— १ (१०।६१।१३)

दो उपमानवाली मालोपमा— ३ (१०।६१।४, १०।६१।५, १०।६१।१५)

सूक्त—१, ऋक्—८, उपमान—११, उपमा-भेद—५

(६३) जमदग्निर्भार्गवः, रामो वा जामदग्न्य—

ऋ० १०।११०।५, १०।११०।६, १०।११०।८

सामाजिक उपमान— ६ (जनयः, योषणे, मनुष्वत्)

वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१०।११०।५)

तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा— १ (१०।११०।८)

वाक्यगा वाचकलुप्तोपमा— १ (१०।११०।६)

सूक्त—१, ऋक्—३, उपमान—३, उपमा-भेद—३

(६४) उपस्तुतो वार्ष्टि हव्यः—

ऋ० १०।११५।२, १०।११५।३, १०।११५।४, १०।११५।७

दैविक उपमान— ३ (महिव्रतं, वाता, मित्रासः)

प्राकृतिक उपमान— ४ (वृषायवसे, वि, वह्नि, द्यावो)

सामाजिक उपमान— १ (युयुधयः)

धर्मलुप्ता वाक्यगा श्रौती लुप्तोपमा—१ (१०।११५।२)

तीन उपमानवाली मालोपमा— १ (१०।११५।३)

दो उपमानवाली मालोपमा— २ (१०।११५।४, १०।११५।७)

सूक्त—१, ऋक्—४, उपमान—८, उपमा-भेद—२

(६५) चित्रमहा वासिष्ठः—

ऋ० १०।१२२।१, १०।१२२।६

दैविक उपमान— १ (वसु)

सामाजिक उपमान— २ (अतिथिम्, सुकृत्यसे)

कर्तृकारक से विहित क्यङ् के प्रयोग में वाचकलुप्तोपमा— १ (१०।१२२।६)

दो उपमानवाली मालोपमा— १ (१०।१२२।१)

सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—३, उपमा-भेद—२

(६६) करिक्रतः—

ऋ० १०।१३६।५

दैविक उपमान— १ (वातस्य)

वाक्यगा वाचकलुप्तोपमा— १ (१०।१३६।५)

सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

(६७) जरिता—

ऋ० १०।१४२।२

प्राकृतिक उपमान— १ (सप्तयः)

सामाजिक उपमान— २ (साची, पशुपा)
तीन उपमानवाली मालोपमा— १ (१०।१४२।२)
सूक्त—१, ऋक् १, उपमान—३, उपमा-भेद—१

(६८) द्रोणः—

ऋ० १०।१४२।४
सामाजिक उपमान— २ (प्रगर्धिनी सेना, वप्ता)
दो उपमानवाली मालोपमा— १ (१०।१४२।४)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—२, उपमा-भेद—१

(६९) सारिसूक्त—

ऋ० १०।१४२।५
सामाजिक उपमान— १ (रथासः)
वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा— १ (१०।१४२।५)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

(७०) केतुआग्नेय—

ऋ० १०।१५६।१
प्राकृतिक उपमान— १ (सप्तिं)
समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (१०।१५६।१)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

(७१) सूनुआर्भव—

ऋ० १०।१७६।३, १०।१७६।४
दैविक उपमान— १ (घृणीवान्)
प्राकृतिक उपमान— १ (रथः)
भावात्मक उपमान— १ (अमृतात्)
समासगा आर्थी उपमानलुप्तोपमा—१ (१०।१७६।४)
दो उपमानवाली मालोपमा— १ (१०।१७६।३)
सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—३, उपमा-भेद—२

(७२) श्येन आग्नेय—

ऋ० १०।१८८।१
प्राकृतिक उपमान— १ (अश्वं)
वाक्यगा वाचक लुप्तोपमा— १ (१०।१८८।१)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

उपर्युक्त विवरण के अनुसार चाहे सूक्तों की अधिकता की दृष्टि से हो अथवा ऋचाओं और उपमानों की बहुलता की दृष्टि से, सभी दृष्टिकोणों से भरद्वाज बार्हस्पत्य सर्वश्रेष्ठ सिद्ध होते हैं। इनके पश्चात् वामदेव-गौतम और वसिष्ठ का नाम आता है। सूक्तों की संख्या की दृष्टि से यद्यपि दोनों ही ऋषि बराबर हैं, किन्तु ऋचाओं और उपमानों की अधिकता के कारण वामदेव गौतम वसिष्ठ से आगे बढ़ जाते हैं। इन दोनों के पश्चात् गाधिन विश्वामित्र, दीर्घतमा औचथ्य और पराशर शाक्त्य का नाम आता है जिन्होंने क्रमशः १२, १० और ६ सूक्तों की २५, २८ और ४४० ऋचाओं में २८, ३८ और ६९ उपमाओं का प्रयोग किया है। अवशिष्ट ऋषिगणों का स्थान इन सबकी तुलना में गौण कहा जा सकता है।

उपमा-भेद की दृष्टि से सर्वाधिक भेदों के प्रयोक्ता ऋषि वामदेव-गौतम और त्रित आप्त्य हैं। इन दोनों ने ८ उपमा-भेदों का प्रयोग किया है। इनके बाद गाधिन विश्वामित्र, भरद्वाज बार्हस्पत्य और वसिष्ठ का नाम उल्लेखनीय है जिन्होंने ७ उपमा-भेदों का प्रयोग किया है। पराशर शाक्त्य, गौतम रहूगण, दीर्घतमा औचथ्य, गृत्समद भार्गव शौनक तथा विरूप आंगिरस ने ६ उपमा-भेदों का और वसुश्रुत आत्रेय, सौभरि काण्व, सुमित्र वाध्र्यश्व तथा अरुण वैतहव्य ने ५ उपमा-भेदों प्रयोग किया है। अवशिष्ट ऋषिगणों ने ४ और ४ से कम ही उपमाभेदों का प्रयोग किया है।

उपमानों की विविधता, बहुलता तथा सौन्दर्य की दृष्टि से प्रायः सभी ऋषियों द्वारा प्रयुक्त उपमान उत्कृष्ट और परस्पर भिन्नता लिये हुए हैं। कुछ ही उपमान ऐसे हैं जो एक दूसरे से साम्य रखते हैं। ऋषिगणों ने साम्य-योजना के लिए अपनी दृष्टि दैविक, प्राकृतिक, सामाजिक और भावात्मक सभी क्षेत्रों में दौड़ायी है। कुछ अतिशय प्रचलित उपमानों का एक से अधिक ऋषियों ने भी प्रयोग किया है जैसे—

| | | | |
|---|---|---|---|
| (१) | उषो न जारः | (१।६९।१) | पराशर शाक्त्य |
| | उषो न जारः | (१।६६।६) | पराशर शाक्त्य। |
| | उषो न जारः | (७।१०।१) | वसिष्ठ। |
| (२) | सिन्धुर्न क्षोदः | (१।६५।६) | पराशर शाक्त्य। |
| | सिन्धुर्न क्षोदः | (१।६६।१०) | पराशर शाक्त्य। |
| (३) | वाजी न प्रीतो | (१।६६।४) | पराशर शाक्त्य। |
| | वाजी न प्रीतो | (१।६६।५) | पराशर शाक्त्य। |
| (४) | शूर इव धृष्णुः | (१०।६६।५) | सुमित्रोवाध्र्यश्व। |
| | शूर इव धृष्णु | (१०।६६।६) | सुमित्रोवाध्र्यश्व। |

| | | | |
|---|---|---|---|
| (५) | जायेव पत्य उशती सुवासाः | (४।३।२) | वामदेव गौतम । |
| | जायेव पत्य उशती सुवासाः | (१०।९१।१३) | अरुणो वैतहव्य । |
| (६) | ऋतुर्नभद्रो | (१।६७।२) | पराशर शाक्त्य। |
| | ऋतुं न भद्रं | (४।१०।१) | वामदेव गौतम । |
| (७) | द्यौर्न स्तृभिः | (२।२।५) | गृत्समद भार्गव शौनक । |
| | द्याम् इव स्तृभिः | (४।७।३) | वामदेव गौतम । |
| (८) | अत्यं न सप्तिं | (३।२२।१) | गाधी कौशिक । |
| | अत्यो न सप्तिः | (१०।६।२) | त्रित आप्त्य । |
| (९) | अर्वन्तं न सानसिम् | (४।१५।६) | वामदेव गौतम । |
| | अर्वन्तंन सानसिम् | (८।१०२।१२) | प्रयोगोभार्गव । |
| (१०) | पशुर्नयवसे | (५।९।४) | गय आत्रेय । |
| | पशुर्नयवसे | (६।२।९) | भरद्वाज बार्हस्पत्य । |
| (११) | पूर्भिरायसीभिः | (१।५८।८) | नौधा गौतम । |
| | पूर्भिरायसीभिः | (७।३।७) | वसिष्ठ । |
| (१२) | रथमिव वेद्यम् | (२।२।३) | गृत्समद भार्गव शौनक । |
| | रथो न वेद्यः | (८।१९।८) | सौभरि काण्व । |
| | रथं न वेद्यं | (८।८४।१) | उशना काव्य । |
| (१३) | सेनेव सृष्टा | (१।६६।७) | पराशर शाक्त्य । |
| | सेनेव सृष्टा | (१।१४३।५) | दीर्घतमा औचथ्य । |
| | सेनेव सृष्टा | (७।३।४) | वसिष्ठ । |
| (१४) | रुक्मो न रोचत | (४।१०।५) | वामदेव गौतम । |
| | रुक्मो न रोचत | (४।१०।६) | वामदेव गौतम । |
| | रुक्मो न रोचत | (७।३।६) | वसिष्ठ । |
| (१५) | घृतं न पूतं | (३।२।१) | गाथिन विश्वामित्र । |
| | घृतं न पूतं | (४।१०।६) | वामदेव गौतम । |
| | घृतं न पूतं | (५।८६।६) | भौमोऽत्रिः । |

दीर्घतमा औचथ्य ने वैदिक उपमानों में से सूर्यवाचक उपमानों का छः बार प्रयोग किया है, गृत्समद भार्गव शौनक ने चारों सूर्यवाचक उपमानों के लिये केवल "स्वः" पद का ही प्रयोग किया है तथा "स्वर्ण" वाचक उपमान के लिये "हिरण्य" शब्द की पाँच बार आवृत्ति की है ।

गाधिन विश्वामित्र ने प्राकृतिक उपमानों में अश्ववाचक उपमान का छः बार प्रयोग किया है और वामदेव गौतम ने ४ सूर्यवाचक तथा १० आश्ववाचक उपमानों का प्रयोग किया है एवं "रुक्मो न रोप्रत" इस पद की दो बार आवृत्ति की है। पूरु आत्रेय के चारों उपमान सूर्यवाचक हैं और चारों में वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा का प्रयोग हुआ है। सस आत्रेय ने केवल एक ऋचा में ३ उपमानों का प्रयोग किया है, तीनों उपमान मनुवाचक एक ही पद हैं।

सूर्यवाचक उपमानों का सर्वाधिक प्रयोग करनेवाले ऋषि भरद्वाज बार्हस्पत्य हैं। इन्होंने १४ बार सूर्यवाचक उपमानों का प्रयोग किया है।

उपमानों को उत्कृष्ट रूप प्रस्तुत करने में पराशर शाक्त्य, भरद्वाज बार्हस्पत्य, वामदेव गौतम, वसिष्ठ, दीर्घतमा औचथ्य आदि ऋषिगण सिद्धहस्त प्रतीत होते हैं; किन्तु इन सबों में सर्वाधिक कुशल पराशर शाक्त्य हैं। इनकी सहज स्वाभाविक शैली अत्यन्त हृदयावर्जक है। प्रभाव और सौन्दर्य दोनों ही दृष्टि से इनकी मालोपमायें सर्वोत्कृष्ट कही जा सकती हैं।

●

# सप्तम अध्याय

## अन्य देव-सूक्तों में प्रयुक्त उपमाओं के साथ अग्नि-सूक्तस्थ उपमाओं का तुलनात्मक अध्ययन

ऋग्वेद के देव मूलतः विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों का ही प्रतिनिधित्व करते प्रतीत होते हैं। अग्नि, सूर्य आदि ऐसे देव हैं जिनका भौतिक रूप प्रतिदिन दृश्यमान होने के कारण भुलाया नहीं जा सकता। अतएव वरुण और इन्द्र आदि की तरह इनका मानवीकरण पूरा नहीं हो सका है। मानवीकरण होने पर भी अग्नि, सूर्य आदि की भौतिक विशेषताएँ स्पष्ट रूप में उनके साथ लगी रही हैं। प्रकाश, ताप आदि अग्नि और सूर्य के अपने भौतिक गुण हैं किन्तु बल, बुद्धि, दानशीलता आदि सभी देवों में पाये जाते हैं। अतएव इन्हें सामान्य गुण कह सकते हैं।

शुक्रत्व अर्थात् चमकीलापन अग्नि का विशिष्ट गुण है किन्तु यही गुण सूर्य में भी पाया जाता है। परिणामस्वरूप किसी सूक्त में अग्नि सूर्य का उपमान बन कर आया है तो किसी में सूर्य अग्नि का उपमान बनकर आया है। सूर्य का उपमान के रूप में प्रयोग—'सूर्यो न शुक्रः'—सूर्य के समान चमकता हुआ (अग्नि) (ऋ० ६।४।३)

सूर्य के उपमान के रूप में अग्नि का प्रयोग—

अग्निर्न शुक्रः—अग्नि के समान चमकता हुआ (सूर्य) (ऋ० ८।२५।१९।

मरुतों की गरजती सेना और अग्नि की हू-हू करती ज्वाला ने एक दूसरे के लिये उपमान का कार्य किया है। मरुतों की सेना से अग्नि की ज्वाला की उपमा—

तुविष्वणसो मारुतं न शर्धः। (ऋ० ४।६।१०)

अर्थात् (अग्नि की ज्वालाएँ) मरुतों की सेना के सदृश गरजनेवाली हैं।

अग्नि की ज्वाला से मरुतों के गर्जन की उपमा—

प्रयद्दित्था परावतः शोचिर्नमानमस्यथ। (ऋ० १।३९।१)

अर्थात् (हे मरुतो) जब तुम दूर से इस प्रकार से ज्वाला की तरह गर्जन करते हो।

सविता की बाँह अर्थात् सूर्य की किरण और अग्नि की ज्वाला दोनों का

समान गुण है, ऊर्ध्वगमन। इसी सादृश्य के आधार पर सविता से अग्नि की उपमा दी गई है—

उद्यंयमीति सवितेव बाहू। (ऋ० १।९५।७)

जिस प्रकार सविता अपनी बाँहों को ऊपर उठाता है उसी प्रकार (अग्नि अपनी ज्वाला को ऊपर उठाता है)।

यही उपमान अन्यत्र कुछ भिन्न रूप में आया है—

ऊर्ध्वं भानुं सवितेवाश्रेत्। (ऋ० ४।६।२)

सविता के सदृश अग्नि ने ऊपर चढ़कर अपनी ज्योति का आश्रय प्राप्त किया है।

यह उपमान उषा के लिये भी प्रयुक्त हुआ है—

ज्योतिर्यच्छन्ति सवितेव बाहू। (ऋ० ७।७९।२)

जिस प्रकार सविता अपनी बाँहें (अपनी किरणों को) ऊपर उठाते हैं उसी प्रकार (उषाएँ भी) अपनी ज्योति को ऊपर उठाती हैं।

यहाँ उपमान-पक्ष में बाहु और उपमेय-पक्ष में ज्योति का उल्लेख हुआ है।

विभिन्न देवों में पाये जानेवाले सामान्य गुणों के आधार पर भी साम्य-योजना प्रस्तुत की गई है। ऋग्वेदीय देवों में इन्द्र बड़े बलवान् माने जाते हैं। अग्नि को बहुत सहसस्पुत्र कहा गया है। अतएव बल में अग्नि को इन्द्र के समान कहा गया है—

इन्द्रं न त्वा शवसा। (ऋ० ६।४।७)

अर्थात् बल में इन्द्र के समान तुमको।

यद्यपि इन्द्र में दाहकता नहीं है तथापि औपचारिक प्रयोग के द्वारा अग्नि से इन्द्र की तुलना की गई है—

अग्निर्नं शुष्कं वनमिन्द्रहेती रक्षो निधक्षि……। (ऋ० ६।१८।१०)

अर्थात् जैसे अग्नि शुष्क वन को (जलाता है) वैसे हे इन्द्र! तुम्हारा अस्त्र राक्षसों को जलाता है।

ऋग्वेद की अप्रस्तुतयोजना सरल होने पर भी अपनी विविधता और अभिनवता के कारण विशेष महत्त्व रखती है। उपमेयगत गुणसाम्य के कारण एक ही उपमान कई देवों के लिए प्रयुक्त हुआ है। तारों से भरा आकाश जैसे अग्नि का उपमान बना है वैसे ही मरुतों का भी—

द्यौर्न स्तृभिश्चितयत्। (ऋ० २।२।५)

तारों से भरे आकाश की तरह (अग्नि) चमकता है।

द्यावो न स्तृभिश्चितयन्त खादिनः। (ऋ० २।३४।२)

"अलंकृत (मरुत्) तारों से भरे आकाश की तरह चमकते हैं।"

दोनों साम्य-योजनाओं में इतना ही भेद है कि अग्नि स्वयं-प्रकाश होने के कारण निर्विशेष है किन्तु मरुत् के लिए खादी अर्थात् अलंकृत विशेषण आवश्यक समझा गया।

अपने विभिन्न गुणों के कारण पशु-पक्षी भी कई देवों के उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। शीघ्र उड़ान भरने में समर्थ पेड़ पर बैठे हुए पक्षी से अग्नि की उपमा दी गई है। उड़कर पेड़ पर आई और पुनः हवा के सहारे अन्यत्र उड़ जाने-वाली चिनगारी की ओर ही कवि का लक्ष्य है—

वेर्न द्रुषद्वा रघुपत्मजंहाः। (ऋ० ६।३।५)

शीघ्र उड़ान भरने में समर्थ पेड़ पर बैठे पक्षी की तरह अग्नि है। यही उपमान किंचित्परिवर्तित रूप में सोम के लिये भी आया है—

वे र्न द्रुषच्चम्वोरासदद्धरिः। (ऋ० ९।७२।५)

वृक्ष पर बैठनेवाले पक्षी के सदृश दोनों चमुओं में पीला (सोम) बैठा है।

पशुओं में से सिंह, अश्व और वृषभ ऋग्वेद के प्रसिद्ध देवोपमान रहे हैं। गरजते हुए अग्नि की उपमा गरजते हुए सिंह से दी गई है—

नानदन्न सिंहः (ऋ० ३।२।११)

गरजते हुए सिंह के सदृश अग्नि।

गरजते हुए मरुतों के लिये भी यह उपमान आया है—

सिंहा इव नानदति। (ऋ० १।६४।८)

सिंह के समान गर्जन करते हुए (मरुत्)।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि मरुतों के गर्जन से अग्नि के गर्जन की उपमा ऋग्वेद में बहुत प्रयुक्त हुई है। बृहस्पति की भी गरजते हुए सिंह से उपमा दी गई है—

सिंहमिव नानदतं सधस्थे। (ऋ० १०।६७।९)

उपवेशनस्थान में गरजते हुए सिंह के सदृश (बृहस्पति को हम प्रसन्न करते हैं)।

जिस प्रकार धो-पोंछकर घोड़े को साफ कर दिया जाता है उसी प्रकार फूँक-फाक कर अग्नि को प्रज्वलित किया जाता है। ऐसे घोड़े से अग्नि की उपमा दी गई है—

(१) अश्वो न निक्तो नदीषु। (ऋ० ८।२।२)

नदियों में साफ किये गये अश्व के सदृश (अग्नि)।

(२) तमिद्दोसा तमुषसि यविष्ठमग्नि-
मत्यं न मर्जयन्त नरः। (ऋ० ७।३।५)

उस युवतम अग्नि को ही रात में, उसे ही सुबह में लोग अश्व की तरह परिष्कृत करते हैं।

सोम को भी कूट-पीस कर और छानकर साफ किया जाता है। ऐसे सोम की उपमा भी साफ किये गये घोड़े से दी गई है—

(१) अत्यो न मृष्टो अभिवाजमर्षसि। (ऋ० ९।८२।२)

(हे सोम !) तुम साफ किये गये घोड़े के सदृश वाज की ओर जाते हो।

(२) यमत्यमिववाजिनं मृजन्ति योषणो दश (ऋ० ९।६।५)

जिसे (सोम को) वाजी अश्व की तरह दशो स्त्रियाँ (दश अंगुलियाँ) परिष्कृत करती हैं।

तीक्ष्ण सींगोंवाले वृषभ से अग्नि और इन्द्र दोनों की उपमा दी गई है।

अग्नि—शिशानो वृषभो यथाग्निः शृङ्गे दविध्वत्। (ऋ० ८।६०।१३)

अपनी सींगों को तेज करता हुआ वृषभ जिस प्रकार (अपना सिर) कँपाता है उसी प्रकार अग्नि (अपनी ज्वाला को कँपाता है)।

इन्द्र—आशुः शिशानो वृषभो न भीमः। (ऋ० १०।१०३।१)

वेगवान् (अस्त्रों) को तीक्ष्ण करते हुए (इन्द्र) भयानक वृषभ की तरह हैं।

मानवनिर्मित उपकरणों एवम् अन्य द्रव्यों से अग्नि तथा अन्य देवों की उपमा दी गई है। जिस प्रकार गृह में जाकर लोग बैठते हैं उसी प्रकार अग्नि के पास भी लोग बैठते हैं। इसलिए ओकस् अर्थात् गृह से अग्नि की उपमा दी गई है—

ओको न रण्वः। (ऋ० १।६६।३-४)

अर्थात् गृह के समान रमणीय (अग्नि)।

यही उपमान इन्द्र के लिये भी आया है—

ओको न रण्वा। (ऋ० ४,१६।१५)

अर्थात् गृह के समान रमणीय (इन्द्र)।

अन्नपूर्ण गृह भी अग्नि और मरुतों का उपमान बनकर आया है।

अग्नि—रण्वः संदृष्टौ पितुमाँ इव क्षयः। (ऋ० १।१४४।७)

(हे अग्नि !) तुम अन्नपूर्ण गृह की तरह देखने में रमणीय हो।

मरुत्—रण्वः संदृष्टो पितुर्मा इव क्षयः। (ऋ० १०।६४।११)

अन्नपूर्ण गृह की तरह (मरुत्) देखने में रमणीय हैं।

रुक्म अर्थात् स्वर्णभूषण से निकटस्थ अग्नि की उपमा सर्वथा उपयुक्त प्रतीत होती है—

श्रिये रुक्मो न रोचत उपाके। (ऋ० ४।१०।५)

निकट में (अग्नि) शोभा की दृष्टि से स्वर्णाभूषण की तरह चमकते हैं।

सूर्य के उपमान के रूप में भी इसकी उपयुक्तता स्पष्ट है—

रुक्मो न दिव उदिता व्यद्यौत्। (ऋ० ६।५१।१)

उगने पर (सूर्य) आकाश के स्वर्णाभूषण की तरह चमकते हैं।

कुठार धारण किये हुए मरुत् का भी यह उपमान है—

रुक्मो त चित्रः स्वधितीवान्। (ऋ० १।४४।२)

कुठार धारण किये हुए (मरुत्) स्वर्णाभूषण की तरह चमकीले हैं।

वाहनों में रथ अपनी चमक और वेग के कारण कई देवों का उपमान बनकर आया है। यह विविध रूपों में अग्नि का उपमान बना है—

(१) रथो न विक्ष्वृञ्जसान आयुषु। (ऋ० १।५८।३)

आयुजनों में (अग्नि) रथ की तरह अग्रगामी है।

(२) रथो न रुक्मी त्वेषः समत्सु। (ऋ० १।६६।५-६)

युद्ध में स्वर्णाभूषित रथ की तरह (अग्नि) प्रदीप्त है।

(३) रथो न यातः शिक्वभिः कृतो
द्यामङ्गेभिररुषेभिरीयते। (ऋ० १।१४१।८)

रज्जु से बँधे जाते हुए रथ की तरह (अग्नि) अपने लाल अंगों से आकाश की ओर जाते हैं।

प्रस्तुत साम्य-योजना बिम्ब-विधान में सफल हुई है। निम्नलिखित ऋक् में जहाँ रथ इन्द्र का उपमान बनकर आया है, ऐसा सुन्दर बिम्ब-विधान सम्भव नहीं हो सका है—

रथो न महे शवसे युजानोऽ
स्माभिरिन्द्रो अनुमाद्यो भूत्। (ऋ० ६।३४।२)

महान् बल के प्रदर्शन के लिये युक्त (तैयार) रथ की तरह इन्द्र हम सबों के द्वारा प्रशंसित हैं।

वेग के आधार पर रथ से सोम की भी उपमा दी गई है—

एते सोमास आशवो रथा इव प्रवाजिनः। (ऋ० ९।२२।१)

ये सोम द्रुतगामी वाज जीतनेवाले रथ की तरह हैं।

ऋग्वेदीय देवों की बहुत सारी विशेषताओं का साम्यमुखेन वर्णन करने के लिए मानव-समाज से भी अनेक उपमानों का संग्रह किया गया है। पुत्र के लिए कल्याणकारी पिता से जैसे अग्नि की उपमा दी गई है वैसे सोम की भी उपमा दी गई है—

अग्नि—स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव। (ऋ० १।१।९)

वह (तुम) हे अग्नि! हमारे लिये वैसे सुप्राप्य होओ जैसे पुत्र के लिये पिता होता है।

सोम—पितेव सोम सूनवे सुशेवः। (ऋ० ८।४८।४)

हे सोम! पुत्र के लिये पिता की तरह तुम कल्याणकारी होओ।

यह उपमान इन्द्र, बृहस्पति आदि देवों के लिये भी आया है।

सद्योजात शिशु से सद्यः प्रज्वलित अग्नि की उपमा सरल होने पर भी मोहक है—

शिशुं जातं न बिभ्रति। (ऋ० ६।१६।४०)

उत्पन्न शिशु के सदृश (अग्नि को अध्वर्यु) धारण करते हैं।

इसी तरह यह उपमान सोम के लिये भी आया है—

शिशुर्न क्रीलन्पवमानो अक्षाः। (ऋ० ९।११०।१०)

छना हुआ सोम शिशु की तरह खेलता हुआ बहता है।

मरुतों को भी शिशुओं की तरह सुन्दर कहा गया है—

ते हर्म्येष्ठाः शिशवो न शुभ्राः। (ऋ० ७।५६।१६)

वे (मरुत्) हर्म्य में स्थित शिशुओं की तरह सुन्दर हैं।

अग्नि के लिये राजा का उपमान के रूप में प्रयोग बहुत हुआ है। निम्नलिखित ऋचांश की साम्य-योजना अपनी काव्यात्मक उपयुक्तता के अतिरिक्त तात्कालिक सामाजिक व्यवस्था पर भी प्रकाश डालती है—

इध्मान्न राजा वनान्यत्ति। (ऋ० १।६५।७-६)

अग्नि काष्ठों को वैसे चट कर जाते हैं जैसे राजा धनियों को।

इसी प्रकार की दूसरी साम्य-योजना है—

वैश्वानरो जायमानो न राजा
वातिरज्ज्योतिषाग्निस्तमांसि। (ऋ० ६।९।१)

उत्पन्न होते ही वैश्वानर अग्नि ने राजा के सदृश अपनी ज्योति से अन्धकार को दूर कर दिया।

इससे मिलती-जुलती साम्य-योजना सोम के लिये भी पाई जाती है—

पवमानो अभिस्पृधो विशो राजेव सीदति
यदीमृण्वन्ति वेधसः। (ऋ० ९।७।५)

जब इसे ऋत्विक् प्रेरित करते हैं तब यह छना हुआ सोम उसी प्रकार अपने विरोधियों को नष्ट करता है जिस प्रकार राजा विरोधी प्रजा को नष्ट करता है।

अग्नि को ऋग्वेद में पुरोहित कहा गया है। अतएव पुरोहित से इसकी उपमा स्वाभाविक ही है—

विप्रं ज्योतींषि बिभ्रते न वेधसे। (ऋ० ३।१०।५)

पुरोहित के सदृश स्तुतियों के प्रकाश को धारण करनेवाले (अग्नि की स्तुति करो)।

वेधा अर्थात् पुरोहित से सोम की भी ऐसी ही उपमा दी गई है—

हरिः पवित्रे अव्यत वेधा न योनिमासदम्। (ऋ० ९।१०१। ५)

अपने स्थान पर बैठने के लिये (प्रस्तुत) पुरोहित के सदृश पीतवर्ण (सोम) छनकर पहुँच गया।

भाववाचक उपमानों में बिम्ब-विधान अत्यन्त है और वे सरल हैं। पुष्टि अर्थात् धनाभिवृद्धि अग्नि और इन्द्र दोनों के लिए उपमान के रूप में प्रयुक्त हुई है—

अग्नि—पुष्टिर्न रण्वा। (ऋ० १।६५।५-६)

धन की अभिवृद्धि की तरह (अग्नि) रमणीय है।

इन्द्र—सुदृशीव पुष्टिः। (ऋ० ४।१६।१५)

सुन्दर अभिवृद्धि की तरह इन्द्र हैं।

उपर्युक्त तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट है कि प्रकाश, गति आदि भौतिक विशेषताओं को अभिव्यक्त करनेवाले अनेक उपमान जैसे अग्नि के लिये प्रयुक्त हुए हैं वैसे ही सूर्य मरुत, इन्द्र और सोम के लिये भी प्रयुक्त हुए हैं। केवल देवत्व के आधार पर आरोपित शक्ति, दया आदि सामान्य गुणों के चलते प्रयुक्त उपमानों में एकरसता पाई जाती है। यह एकरसता वहीं कम हो सकी है, जहाँ बिम्ब-विधान हो सका है।

# उपसंहार

अग्नि सूक्तस्थ ४८९ ऋचाओं में उपमा अलंकार के सुन्दर उदाहरण मिलते हैं। उपमान दैविक, प्राकृतिक, सामाजिक और भावात्मक विषयों से सम्बद्ध हैं।

सूर्य, वायु, इन्द्र, देव, उषा, वरुण और ऋभु से सम्बद्ध उपमानों की गणना दैविक उपमानों के अन्तर्गत की गई है।

प्राकृतिक उपमानों का तीन भागों में विभाजन किया गया है—(१) जड़ जगत् (२) जीव जगत् (३) सामाजिक उपकरणवाचक उपमान। जड़ जगत् के अन्तर्गत आकाश, बादल, वृष्टि, विद्युत् आदि द्यु-स्थानीय उपमान हैं। पृथ्वी, पर्वत, गुहा, समुद्र, तरंग, जल, नदी, निर्झर, वृक्ष, शाखा, घास और लता पृथ्वी-स्थानीय उपमान हैं। स्वर्ण खनिज पदार्थवाची उपमान है। पशु, पक्षी, जन्तु एवं पशु के अंगवाची उपमान जीव जगत् से सम्बद्ध उपमान हैं। नगर, वाहन, शस्त्र, पात्र, अलंकार और भोज्य पदार्थ से सम्बद्ध उपमान सामाजिक उपकरणवाचक उपमान हैं।

सामाजिक उपमानों के अन्तर्गत—मनु, अंगिरा, अत्रि आदि व्यक्तिवाचक उपमान हैं। अध्वर्यु, होता आदि ऋषिवर्ग से और राजा, रक्षक, वीर आदि राजवर्ग से सम्बद्ध उपमान हैं। माता-पिता, भाई आदि पारिवारिक उपमान हैं और शिकारी, अश्व-पालक, नापित आदि सामाजिक स्तर के द्योतक उपमान हैं।

आत्मा, मन, बुद्धि, आयु, वाणी, उपदेश, स्तुति, पाप, भय, भोग, धनाभिवृद्धि, पुष्टि, विस्तार और यज्ञवाचक उपमानों की गणना भावात्मक उपमानों के अन्तर्गत की गई है।

काव्यशास्त्र में उपमा के कम से कम पाँच और अधिक से अधिक १६० भेद किये गये हैं किन्तु इन अग्नि-सूक्तस्थ ऋचाओं में केवल १८ उपमा-भेदों के उदाहरण मिलते हैं जिनके नाम निम्नलिखित हैं :—

(१) वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा (२) समासगा श्रौती पूर्णोपमा (३) तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा (४) धर्मलुप्ता वाक्यगा श्रौती लुप्तोपमा (५) धर्मलुप्ता समासगा श्रौती लुप्तोपमा (६) वाक्यगा श्रौती उपमानलुप्तोपमा (७) समासगा आर्थी उपमान-लुप्तोपमा (८) वाक्यगा वाचकलुप्तोपमा (९) समासगा वाचकलुप्तोपमा (१०) कर्तृकारक से विहित क्यङ् के प्रयोग में वाचकलुप्तोपमा (११) क्वनिप् प्रत्यय के प्रयोग में वाचकलुप्तोपमा (१२) क्विपगा धर्मवाचक लुप्तोपमा (१३) वाक्यगा धर्मवाचक-

लुप्तोपमा (१४) समासगा धर्मवाचक लुप्तोपमा (१५) उपमेयलुप्तोपमा (१६) उपमेयधर्म-लुप्तोपमा (१७) उपमेय वाचकलुप्तोपमा (१८) त्रिलुप्ता उपमेयधर्म-वाचकलुप्तोपमा। इनके अतिरिक्त मालोपमा नामक उपमा के अन्य भेद के भी पर्याप्त उदाहरण उपलब्ध होते हैं।

उपमान सभी सुन्दर और उत्कृष्ट हैं। अग्नि का सूर्य के साथ तेजस्साम्य स्थापित किया गया है। वायु, बादल एवं वृषभ आदि के साथ ध्वनि-साम्य स्थापित किया गया है। वृक्ष-शाखा के साथ अग्नि का वृद्धि-साम्य दिखाया गया है। स्वर्ण के साथ अग्नि की पीताभ ज्वालाओं का रूप-साम्य स्थापित किया गया है। अश्व की पूँछ एवं नौका के साथ क्रिया-साम्य दिखाया गया है तथा बाण के अग्र भाग एवं नापित की दाढ़ी-मूँछ मूड़ने की क्रिया के साथ अग्नि की भस्मसात् करनेवाली क्रिया का प्रभाव-साम्य दिखाया गया है। चोर आदि से सम्बद्ध दो-चार उपमानों को छोड़कर शेष सभी उपमान आकर्षक और उपयुक्त हैं।

कुल ७२ ऋषियों ने उपमाओं का प्रयोग किया है जिनमें से मधुच्छन्दा वैश्वा-मित्र, विश्वसामा आत्रेय, द्युम्नविश्व चर्षणि आत्रेय, श्यावाश्व आत्रेय, श्यावाश्व, त्रिशोक काण्व, त्रिशिरा त्वाष्ट्र, करिक्रत, सारि सृञ्ज, केतु आग्नेय और श्येन आग्नेय—इन ११ ऋषियों ने केवल १ उपमान और १ उपमाभेद का प्रयोग किया है। सर्वा-धिक उपमाओं का प्रयोग करनेवाले ऋषि भरद्वाज बार्हस्पत्य हैं। इन्होंने १५ अग्निसूक्तों में स्थित ५० ऋचाओं में उपमा का प्रयोग किया है। इनके द्वारा प्रयुक्त उपमान ७३ और उपमाभेद ७ हैं। इनके बाद सर्वाधिक उपमाओं का प्रयोग करनेवाले ऋषि पराशर शाक्त्य, वामदेव गौतम, दीर्घतमा औचथ्य, वसिष्ठ और गाथिन विश्वामित्र हैं। त्रित आप्त्य और वामदेव गौतम ने सबसे अधिक उपमा-भेदों का प्रयोग किया है। सौन्दर्य की दृष्टि से पराशर शाक्त्य ने सर्वाधिक आकर्षक उपमाओं का प्रयोग किया है। कुछ प्रचलित उपमानों का एक से अधिक ऋषियों ने प्रयोग भी किया है।

विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों का प्रतीक होने के कारण अग्नि, वायु, सूर्य, इन्द्र वरुण आदि देवों की भौतिक विशेषताओं में पर्याप्त समानता है अतः कुछ प्रचलित उपमान जो अग्नि-सूक्तों में अग्नि देव का अन्य देवों से साम्य स्थापित करते हैं वही उपमान अन्य सूक्तों में सवितृ, मरुत्, इन्द्र, सोम आदि देवों की विशेषताओं के प्रतिपादन के लिये भी प्रयुक्त हुए हैं। उपलब्ध सभी उपमान सुन्दर और आकर्षक हैं।

# सहायक ग्रन्थों की सूची


अप्पय दीक्षित—कुवलयानन्द (बम्बई, निर्णय सागर प्रेस, १९३७)

उद्भट—काव्यालंकार सार संग्रह (पूना, भण्डारकर ओरियण्ट रिसर्च इन्स्टीच्यूट, १९२५)

कुन्तक—वक्रोक्ति जीवितम् (वाराणसी, चौखम्बा संस्कृत सीरिज आफिस, १९६७)

केशव मिश्र—अलंकार शेखर (वाराणसी, संस्कृत सीरीज आफिस, वि० १९८४)

क्षेमेन्द्र—औचित्य विचारचर्चा (वाराणसी, चौखम्बा विद्या भवन, १९६४)

जयदेव—चन्द्रालोक (वाराणसी, चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, १९७०)

दण्डी—काव्यादर्श (काशी, श्री कमलमणि ग्रन्थमाला कार्यालय, वि० १९८८)

पण्डितराज जगन्नाथ—रसगंगाधर (वाराणसी, चौखम्बा विद्याभवन, १९६९)

पतंजलि—पातञ्जल भाष्य (बनारस, चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, १९५४)

पाणिनि—अष्टाध्यायी (मद्रास, श्री बाल मनोरमा प्रेस, १९३७)

पी० वी० कर्ण—हिस्ट्री ऑफ संस्कृत पोइटिक्स (देहली, मोतीलाल बनारसी दास १९६१)

प्रश्नोपनिषद् एवं (ईशादि दशोपनिषद् शंकर भाष्य समेत)
मुण्डकोपनिषद्—(वाराणसी, मोतीलाल बनारसीदास, १९६४)

भरतमुनि—नाट्यशास्त्रम् (वाराणसी, चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस १९७०)

भामह—काव्यालंकार (पटना, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् १९६२)

भोज—सरस्वती कण्ठाभरण

म० म० प० श्रीपाद

दामोदर सातवलेकर—(१) ऋग्वेद का सुबोध भाष्य (पारडी, स्वाध्याय मण्डल, १९६७)
(२) दैवत संहिता (पारडी, स्वाध्याय मण्डल, १९५८)

मम्मट—काव्य प्रकाश (वाराणसी, चौखम्बा विद्या भवन, १९६०)

यास्क—निरुक्त (वाराणसी, ज्ञान मण्डल लिमिटेड, १९६६)
रुद्रट—काव्यालंकार (वाराणसी, चौखम्बा विद्या भवन, १९६६)
रुय्यक—अलंकार सर्वस्व (वाराणसी, चौखम्बा संस्कृतसीरीज ऑफिस, १९७१)
वामन—काव्यालंकार सूत्राणि (बम्बई, निर्णय सागर प्रेस, १९५३)
वाग्भट—वाग्भटालंकार (वाराणसी, चौखम्बा विद्या भवन, १९५७)
वाग्भट—काव्यानुशासन
विद्याधर—एकावली
विद्यानाथ—प्रताप रुद्र यशो भूषण
विश्वनाथ—साहित्य दर्पण (वाराणसी, चौखम्बा विद्या भवन, १९७०)
वेद व्यास—अग्निपुराणम् (वाराणसी, चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, १९६६)
शंकराचार्य—ब्रह्मसूत्र भाष्य (बम्बई, पाण्डुरंगजावजी, निर्णय सागर प्रेस, १९३८)
सायणाचार्य—शतपथ-ब्राह्मण (बम्बई, मालिक "लम्बी-वेङ्कटेश्वर", स्टीम प्रेस, १९४०)
सायणाचार्य—ऋग्वेद संहिता (पूना, वैदिक संशोधन मण्डल, तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ शक, १८६३)
डॉ० हरिमोहन मिश्र—ऋग्वेद में लोक साहित्य : अभिचार (पटना, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पत्रिका, अप्रैल १९६६)
हेमचन्द्र—काव्यानुशासन।

(३०) विश्वसामा आत्रेय—

ऋ० ५।२२।१
सामाजिक उपमान—१ (अत्रि)
उपमेय लुप्तोपमा— १ (५।२२।१)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमाभेद—१

(३१) वसूयव आत्रेय—

ऋ० ५।२५।७, ५।२५।८, ५।२५।९
प्राकृतिक उपमान— ३ (ग्रावा, सत्यतुः, नावा)
सामाजिक उपमान— १ (महिषी)
समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (५।२५।९)
समासगा आर्थी उपमान लुप्तोपमा—१ (५।२५।७)
दो उपमानवाली मालोपमा— १ (५।२५।८)
सूक्त—१, ऋक्—३, उपमान—४, उपमा-भेद—३

(३२) तैवृष्णः त्रयरुणः पौष्कुत्स्य त्रसदस्यु भारतो अश्वमेध्र राजा—

ऋ० ५।२७।५, ५।२७।६
दैविक उपमान— १ (सूर्य)
प्राकृतिक उपमान— १ (सोमा)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (५।२७।५)
समासगा श्रौती पूर्णोपमा—१ (५।२७।६)
सूक्त—१, ऋक्—२, उपमान—२, उपमा-भेद—२

(३३) द्युम्नो विश्व चर्षणिः आत्रेयः—

ऋ० ५।२३।४
सामाजिक उपमान— १ (रेवत्)
तद्धितगा आर्थी पूर्णोपमा—१ (५।२३।४)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

(३४) श्यावाश्व आत्रेय—

ऋ० ५।६०।१
प्राकृतिक उपमान—१ (रथैः)
उपमेय लुप्तोपमा—१ (५।६०।१)
सूक्त—१, ऋक्—१, उपमान—१, उपमा-भेद—१

(३५) भौमो अत्रिः—

ऋ० ५।८६।१, ५।८६।५, ५।८६।६

दैविक उपमान— १ (अर्वते अंशा)
प्राकृति उपमान— १ (घृतं)
सामाजिक उपमान— १ (मर्तायि)
भावात्मक उपमान— १ (वाणीः)
वाक्यगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (५।८६।६
समासगा श्रौती पूर्णोपमा— १ (५।८६।१)
दो उपमानवाली मालोपमा—१ (५।८६।५)

सूक्त—१, ऋक्—३, उपमान—४, उपमा-भेद—३

चारों प्रकार के उपमानों का एक-एक उदाहरण दिया गया है।

षष्ठ मण्डल

(३६) भरद्वाज बार्हस्पत्य—

ऋ० ६।१।३, ६।२।१, ६।२।४, ६।२।६, ६।२।७, ६।२।८, ६।२।९, ६।३।३, ६।३।४, ६।३।५, ६।३।६, ६।३।७, ६।३।८, ६।४।१, ६।४।२, ६।४।३, ६।४।४, ६।४।५, ६।४।६, ६।४।७, ६।५।२, ६।६।४, ६।६।५, ६।७।१, ६।७।२, ६।७।४; ६।७।६, ६।८।१, ६।८।३, ६।८।५, ६।९।१, ६।१०।२, ६।११।१, ६।११।३, ६।११।४, ६।११।५, ६।११।६, ६।१२।१, ६।१२।२, ६।१२।३, ६।१२।४, ६।१२।५, ६।१३।१, ६।१३।२, ६।१६।५, ६।१६।३८, ६।१६।३९, ६।१६।४०, ६।१६।४२ ६।५९।३)

दैनिक उपमान—२३ (मित्रः, सूरः, परिज्मन्, सूरो, दिवः, घृणा, मरुतां शर्धः, अमुः, चक्षणिः, सूर्यो, वायुः, सूर्यः, औशिजः, वायुं, इन्द्रं, मरुतां, सूर्ये-चक्षुः, सूर्यो, ततरुवः, तोदः, अद्रोघो, परिज्य, मित्रो)

प्राकृतिक उपमान—३२ (वृत्ता वाजी, अत्यः, पशुः, अश्वो, परशुः, द्रविः, अयसः—धाराम्, वेः, विद्युत्, अत्यः, क्षामा, अश्वाः, अशनिः, रथ्यं, वयाः, सोम, चर्मणि, पव्य, वनिनं, घृतं, मधुच्छन्दो, वृजनं, एतरी, उग्रः-पिता, वयाः, हिरण्य, छायाम्, उग्र, वँसगः, खादिनं, सप्तो)